हमारा हक

हमारा सम्मान

बढ़ते कदम मंज़िल की ओर

(नीति व योजनाओं से जुड़ा संकलन)

हमारा हक् हमारा सम्मानः बढ़ते कदम मंज़िल की ओर (नीति व योजनाओं से जुड़ा संकलन)

प्रकाशनः नवम्बर 2013

जागोरी बी–114, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली 110017
फोनः 011 26691219, 26691220
हेल्पलाइनः 011 26692700 / 8800996640(सोम से शुक्र प्रातः 9.30 से सांयः 5.30)
jagori@jagori.org
www.jagori.org

आभारः अनुप्रिया, गीता, प्रभलीन, सरिता, सीमा श्रीवास्तव, सुनीता धर, महावीर, नीतू रौतेला, एस. एन. एस. तथा उन सभी व्यक्तियों और संस्थाओं का आभार व्यक्त करते हैं जिनके लेख इस संकलन में लिये गये है। यदि इस संकलन का पूरा/भाग में पुनः निर्माण करना हो तो जागोरी एवं सम्बन्धित लेखक की सहमति/सूचित अवश्य करे।

संकलित लेखों में व्यस्त विचार लेखकों के निजी विचार है, ज़रुरी नही यह हमारी संस्थागत सोच व क्रियांवयन को दर्शाते हो।

सहयोगः ब्रेड फ़ॉर द वर्ल्ड–प्रोटेस्टंट डेवेलपमेंट सर्विस और मिज़ोरियोर

विषय सूचि

भाग 1: विषयात्मक जानकारियां	
1	जेंडर के मायने
2	पितृसत्ता की अवधारणा
3	औरत और हिंसा की परिभाषा
4	हमारी बातः क्या शहर सुरक्षित है?
5	लिंग संवेदी शौचालय व महिला सुरक्षा
6	एक अदृश्य अर्थव्यवस्था–घरेलू कामगार
7	भ्रांतियो के घेरे में मुसलमान महिलाओं के हक़
8	जाति, वर्ग और पितृसत्ता के त्रिकोण में दलित महिला दमन
9	घरेलू हिंसाः महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन
10	आपराधिक क़ानून संशोधन अधिनियम 2013
भाग 2: नीतियों व योजनाओं संबंधी जानकारी	
11	बच्चों के निजी स्कूल में पढ़ने के अधिकार को जानें
12	निजी अस्पतालों में निशुल्क इलाज कराने का अधिकार
13	स्वच्छ रहन सहन सुरक्षाः हमारी महिलाओं की सुरक्षा में सबकी साझेदारी
14	सार्वजनिक वितरण प्रणाली
15	दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड
16	जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन और राजीव आवास योजना
17	दिल्ली सरकार की आर्थिक सहायता योजनाएं
18	सरकार से समय सीमा कानून के तहत अपना काम समय से करवाने के अपने अधिकार को जानें
19	सूचना का अधिकार
भाग 3: हितधारकों संबंधी जानकारी	
20	निगम पार्षद की ज़िम्मेदारी
21	दिल्ली में एम.एल.ए. (विधायक) की ज़िम्मेदारियाँ
22	सांसद की ज़िम्मेदारियाँ
भाग 4: मीडिया उल्लेख	
23	मुख्य हिंदी समाचार पत्रों से जेंडर व महिला हिंसा से सम्बंधित विचार विमर्श

भुमिका

जागोरी, औरतों का प्रशिक्षण, संप्रेषण, शोध और संदर्भ केंद्र है जिसकी स्थापना 1984 में हुई। हम लगभग 30 सालों से औरतों के अधिकारों पर समुदाय के साथ काम कर रहे हैं। दिल्ली में प्रधानतः बवाना, मदनपुर जे. जे. कालोनी, बदरपुर, मोलाड़बंद और मालवीय नगर के समुदाय के यूवा एवं महिलाओं के साथ विस्थापन और उसके बाद औरतों व बालिकाओं की ज़िन्दगी पर होने वाले प्रभावों, बुनियादी अधिकारों तथा महिला हिंसा व सुरक्षा के विभिन्न रूपों पर समझ और अधिकारों तक पहुंच के लिए जागरूकता के विषय में कार्य कर रहे हैं।

हमारे शोध, सक्रिय कार्यक्रमों व अभियानों के दौरान महिलाओं ने बैठकों में अपनी जुबानी हमें अपनी समस्याओं से अवगत् कराना आरम्भ किया। इन बैठकों के जरिये जो मुदद् सामने आए उनमें जेंडर आधारित हिंसा के भिन्न प्रकारों जैसे महिला और काम, रोजगार व काम का दाम, लड़कियों की शिक्षा, बुनियादी सुविधाएं(शौचालय, पानी, बिजली), राशन, शारिरीक, मानसिक और मौखिक उत्पीड़न, घरेलू व सार्वजनिक स्थल पर हिंसा, महिला स्वास्थ्य, महिला सुरक्षा और स्थानीय हितधारकों की जिम्मेदारी शामिल थे। शोध कार्य और इनसे निकले मुददों पर कार्य करने का निर्णय हमने महिलाओं के यकीन और उनके खटटे मीठे अनुभवों के साथ लिया क्योंकि जिस रूप में समुदाय के लोग इन मुदद्ों को उठा रहे थे उनमें उनकी मंशा व आगे बड़ने की ललक व झलक दिखला दी थी। वे इन मुदद्ों को समनझने के साथ हमें भी समझा रहे थे कि महिलाओं के साथ जेंडर आधारित असुरक्षा और हिंसात्मक रवैया चाहे घरवालों द्वारा हो या फिर सार्वजनिक स्थल में अंजान लोगों द्वारा हो का विरोध करेंगे और अपना हक खोने नहीं देंगे। लोग मानते और चाहते हैं कि बुनियादी नागरिक अधिकार तक पहुंच उनका हक है। इन हकों तक उनकी पहुंच बने और उन्हें ये हक, सम्मान और सुरक्षा किसी भी तरह के पक्षपात के बिना व गुणत्ता के साथ मिले।

इस पठ्न सामग्री द्वारा हम सम्बन्धित मुददों की सीख और जानकारी को सरल भाषा में सहेज कर बांटना चाहते हैं। अपने अनुभवो से हमने जाना कि जानकारी के अभाव या कमी के कारण समुदाय के लोगो को नागरिक अधिकार बेहतर तरीके से पाने के लिए काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए हमारा एक उददेश्य ये भी है कि इन सारी जानकारियों और तर्जुबों, सीख और रणनीतियों को संग्रहित करें ताकि लोगों की इन जानकारियों तक आसानी से पहुच बना पाएं।

प्रयोगकर्ता के इस्तेमाल को ध्यान में रखते हुए, यह पठ्न सामग्री चार हिस्सों मे विभाजित हैं

भाग 1: विषयात्मक जानकारियां– जेंडर व महिला हिंसा से सम्बंधित चर्चा के लिए सामग्री।
भाग 2: नीतियों व योजनाओं संबंधी जानकारी– समुदाय से जुड़ी चुनिंदा सरकारी नितियों व योजनाओं का विवरण व विशलेषण।
भाग 3: हितधारकों संबंधी जानकारी– हितधारकों की जवाबदेही और ज़िम्मेदारियां संबधी सूचनाए।
भाग 4: मीडिया उल्लेख – मुख्य हिंदी समाचार पत्रों से जेंडर व महिला हिंसा से सम्बंधित विचार विमर्श।

हम आशा करते हैं कि अन्य समूह और संस्थाएं जो इन बुनियादी सुविधाओं, जेंडर आधारित महिला हिंसा के विरोध में एवं महिला सुरक्षा पर कार्य के लिए प्रयासरत् हैं उनके लिए यह लाभदायक/अर्थपूर्ण रहेगा।

भाग 1:

विषयात्मक जानकारियां–

जेंडर व महिला हिंसा से सम्बंधित चर्चा के लिए सामग्री

जेंडर के मायने

प्रकृति और समाज

पृथ्वी पर हर जीव अपना रंग रूप, आकार अंग लेकर पैदा होता है। हर जीव का जन्म एक नर या मादा के रूप में होता है। लड़का, लड़की या किन्नर के हाथ-पाँव, नाक-कान, जीभ आँख, दिल दिमाग़, गुर्दा फेफड़ा इत्यादि समान रूप से होते हैं। फ़र्क होता है तो उनके जननांगों में यानि बच्चा पैदा करने वाले अंगों में। ये अंग बताते हैं कि हम स्त्री हैं या पुरुष या दोनों की अस्पष्टता लिए किन्नर यानि हिजड़ा। ये अंग तय करते हैं हमारे सेक्स या लिंग की शारीरिक व प्राकृतिक पहचान।

इस प्राकृतिक पहचान से आगे हमारी एक सामाजिक पहचान बना दी जाती है। कौन तै करता है कि लड़की और लड़के को कैसा होना चाहिए, कैसा नहीं, क्या करना चाहिए क्या नहीं, क्या खाना-पहनना चाहिए क्या नहीं, कैसा व्यवहार करना चाहिए, कैसा नहीं, क्या मिलना चाहिए, क्या नहीं? इसके पीछे क्या कोई ईश्वरी शक्ति है? जब हम दुनिया में आते हैं तब तो हमारे माथे पर नहीं लिखा होता कि हमें कैसा होना चाहिए। हमें बनाने में उस समाज की भूमिका क्या होती है जिसमें हमने जन्म लिया है? घर-परिवार, आस-पड़ोस से हम सीखते चलते हैं कि औरत क्या है और मर्द क्या है। हर देश, समाज अपने गढ़े विचारों, धर्म-शास्त्रों, रीति-रिवाज़ों, संस्कृति-संस्कारों के अनुसार स्त्री और पुरुष के लिए अलग-अलग क़ायदे-कानून बनाता है। दोनों को अपने-अपने खाकों में फ़िट किया जाता है: 'मर्द को ऐसा होना चाहिए, औरत को ऐसा।' जिस मर्द को औरत जैसा कुछ महसूस होता है और जिस औरत को कुछ मर्द जैसा वो इन तस्वीरों में फिट नहीं हो पाते। ये फ़र्क समाज बनाता है ईश्वर या प्रकृति नहीं। प्रकृति सेक्स का अन्तर देती है, जेंडर का नहीं। शारीरिक भेद हो न हो पर प्रकृति के बहाने सामाजिक भेद-भाव का भूत खड़ा कर दिया जाता है और सुनने को मिलता है कि औरत प्राकृतिक रूप से मर्द से कमतर है।

सेक्स और जेंडर के फ़र्क को थोड़ा और समझ लें।

सेक्स	जेंडर
• पैदाइशी और शारीरिक है • सेक्स हर समाज में एक ही रहता है • सामान्यत: बदला नहीं जा सकता (कभी-कभार, बदला जाता है, जिनका लिंग स्पष्ट नहीं, उनका ऑपरेशन द्वारा) • स्त्री-पुरुष, हिजड़े/किन्नर के प्राकृतिक फ़र्क को बताता है।	• सामाजिक और सांस्कृतिक है तथा मनुष्य द्वारा बनाया गया है • एक सोच है, जो स्त्री-पुरुष के गुण, व्यवहार, भूमिका, अधिकार इत्यादि को गढ़ती है • देश, समाज, वक़्त, परिवार, धर्म और संस्कृति के आधार पर बदलता रहता है • प्राकृतिक फ़र्क को ऊँच-नीच का दर्जा दे देता है।

दोनों से अलग-अलग तरह के काम करवाना - जैसे लड़कों से बाहर के काम करवाना, लड़कियों से घर के। लड़के पढ़ाई करें, लड़कियाँ झाड़ू लगावें।

पाबन्दियाँ व हिदायतें - जैसे लड़कियों को बिना दुपट्टे या आँचल के घूमने की, ज़ोर से हँसने की मनाही और लड़कों को माँ-बहन की हिफ़ाज़त करने की हिदायत।

अदाएगी - ये सारी चीज़ें, सारी बातें और काम बार-बार दुहराए या दुहरवाए जाते हैं। जैसे अभिनय करने वालों को अपनी भूमिका रटनी पड़ती है वैसे ही औरत और मर्द को अपनी भूमिका रटते रहना पड़ता है। इससे औरत या मर्द होने की भावना खुद के अन्दर तथा दूसरों के लिए भी पोख़्ता होती जाती है।

इस प्रकार, पैदा होने के साथ-साथ (बल्कि पैदा होने से पहले भी, जब गर्भ में ही कन्या भ्रूण हत्या कर दी जाती है), हम जैसे-जैसे बड़े होते हैं वैसे-वैसे सीखते जाते हैं कि हम लड़की/औरत हैं या लड़का/मर्द हैं। बातों से, काम से, व्यवहार से, पाबन्दियों से, निर्देश से, सज़ा या इनाम से - हर पग पर हम सीखते रहते हैं कि एक लड़का होने के नाते हमें क्या होना है या एक लड़की होने के नाते हमें क्या होना है। समाज द्वारा बनाए गए औरत व मर्द के ख़ाको और उसे बनाने वाले तरीकों को समझकर ही हम ग़ैरबराबरी और अत्याचार को समझ सकते हैं। आगे कुछ गतिविधियाँ दी गई हैं जिनके सहारे इन बातों को थोड़ी आसानी से समझा-समझाया जा सकता है।

पितृसत्ता की अवधारणा

पितृसत्तात्मक व्यवस्था तथा रचना की यह मान्यता (तथा प्रथा) है कि, प्रकृति के नियमानुसार पुरूष उच्च है और स्त्री निम्न तथा स्त्रीयों पर शासन करना पुरूषों का जन्म–सिद्ध अधिकार है। यह व्यवस्था स्त्रीयों को नियन्त्रित व अधीनस्थ रखती है जिससे उनकी लैगिंक, मातृत्व और कार्य संबन्धी विकल्पों की संभावनाएँ सीमित हो जाएँ। पितृसत्ता के मूल्यों में यह नीहित है कि, पुरूषों व महिलाओं के बीच गृहसीमा के अन्दर व बाहर साधनों का असमान वितरण होगा। एक नवजात शिशु भी, यदि व पुत्र है, परिवार में आर्थिक अधिकारों का भागी होगा।

पितृसत्ता सामाजिक संस्थाएँ ऐसी मूल्य – व्यवस्थाओं तथा साँस्कृतिक नियमों द्वारा अपने को सशक्त बनाती है जिनमें महिलाओं की हीनता के विचार का प्रचार किया गया हो। हर संस्कृति में ऐसी प्रथाओं के उदाहरण हैं जो स्त्रीयों की हीन स्थिति को प्रतिबिम्बित करते हैं। पारम्परिक कथाएँ, लोक गीत, मुहावरे, चुटकुले – सभी ऐसी धारण पैदा करते हैं कि स्त्रीयाँ पुरूषों की अपेक्षा कम कहत्वपूर्ण, कम बुद्धिमान व कम उपयोगी हैं और यह भी इंगित करती हैं कि पुरूषों का महिलाओं के पर अधिपत्य सही व उचित है।

पितृसत्ता वर्गीकरण भिन्न मात्राओं में हमारी सारे सामाजिक संस्थाओं तथा व्यवस्थाओं में देखे जा सकते हैं – चाहे वह औपचारिक हो, जैसे राज्य या बाज़ार या अनौपचारिक, जैसे, परिवार, कुल व समुदाय सम्बन्धी संस्थाएँ।

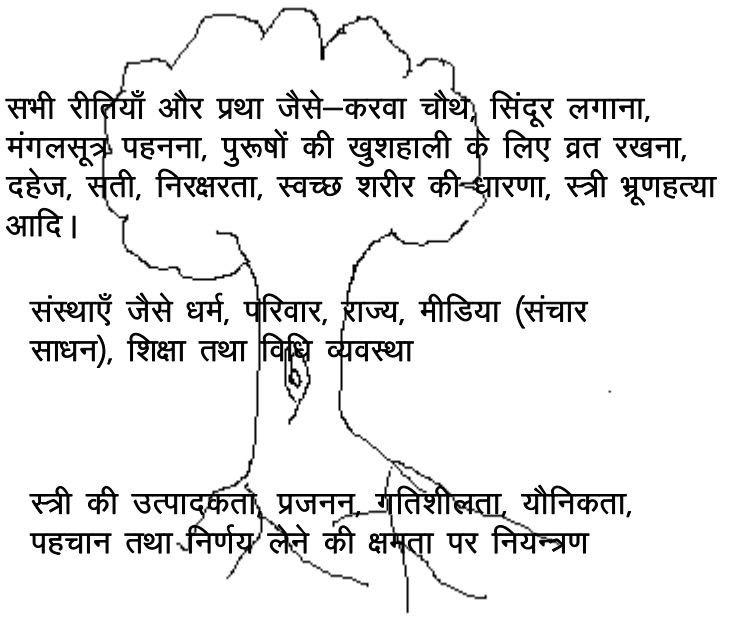

जागोरी द्वारा प्रकाशित

पितृसत्ता इतनी सशक्त क्यों है?

यदि हम पितृसत्ता को एक वृक्ष की तरह मानें, उसमें तीन प्रमुख घटक हैं – पत्तियाँ, तना और जड़। पत्तियाँ हमारे समाज में प्रचलित प्रथाओं तथा क्रियाओं को दर्शाती हैं। इसे हम पितृसत्ता की वह अभिव्यिक्ति मान सकते हैं जो हमारे समाज में स्त्रीयों के निम्न व दबी हुई स्थिति को प्रतिबिम्बित करती हैं व निरन्तरता प्रदान करती हैं। यह दर्शाता है कि कैसे सांस्कृतिक प्रथाएँ पुरूष व स्त्री के मध्य भेद और स्त्रीयों के दमन को बढ़ाती हैं। वृक्ष का तना उन विभिन्न संस्थाओं को दर्शाता है जो पितृसत्तात्मक मूल्यों को सुद्धृढ़ करने का केवल एक माध्यम है। ये सभी संस्थाएँ सहयोगी के रूप में कार्य करती हैं, जिससे पितृसत्तात्मक ढाँचा अति शक्तिशाली होता है। जड़, सतह के नीचे व अदृश्य है। यह पितृसत्ता के उस आदर्श को दर्शाता है जो स्त्री की गतिशीलता, उत्पादकता, प्रजनन शक्ति तथा यौनिकता को नियन्त्रित करता है।

पितृसत्ता की अभिव्यक्ति

- शादी सर्वोत्तम तथा पवित्र सामाजिक इकाई है – केवल विपरीत लिंग वाले ही परिवार बनाने में सहयोगी हो सकते हैं। केवल विवाह ही स्त्री को सुरक्षा प्रदान करता है। विवाह से बाहर स्त्री की ना कोई पहचान है ना ही हमारी संस्कृति में उसका कोई सम्मान है। स्त्रीयों के जीवन में यदि पुरूष नहीं है तो उनको वेश्या के रूप में देखा जाता है। ऐसा माना जाता है कि पुरूष और स्त्री का सृजन प्रजनन हेतु हुआ है।
- विषम लिंगी समाज में आदर्श व मानक हैं – विषमलैगिंक यौनिकता पर जोर देने से समलैगिंक यौन संबन्ध रखने वालों के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता है, या बहुत सीमित स्थान रह जाता है। उन्हें समाज एक श्राप की तरह मानता है। समलैंगिक यौन सम्बन्ध रखने वालों को सामान्य बनाने के लिए एक सम्पूर्ण प्रक्रिया उपलब्ध है (जैसे बिजली के झटके इत्यादि)
- बलात्कार के भय को स्त्री की गतिशीलता तथा यौनिकता को नियन्त्रित करने के लिए एक हथियार के रूप में प्रयोग किया जाता है। अधिकतर, स्त्री का शरीर पुरूषों के लिए रण भूमि बना दिया जाता है।
- घरेलू हिंसा तथा जेंडर असमानता को असाधारण घटनाओं के समान माना जाता है। इनके विरूद्ध आवाज़ उठाना, संस्कृति को नुकसान पँहुचाने वाला व अनादर सूचक माना जाता है।
- अच्छी औरत तथा बुरी औरत – अच्छे तथा बुरे की छवियों का प्रयोग स्त्री के चरित्र या शारीरिक रूप को आधार मानकर, नैतिक निर्णयों के तौर पर किया जाता है।
- औरत ही औरत की दुश्मन है – स्त्रीयाँ भी पितृसत्ता के परिभाषा स्वरूप ऐसी मनोदशा बना लेती हैं जिसके अन्तर्गत वे भी पितृसत्तात्मक ढ़ाचों, मूल्यों व विचार धाराओं को स्वीकार कर उन्हें सशक्त करती हैं। अच्छी व बुरी स्त्रीयों की छवियों के मध्य लगातार युद्ध होता रहता है और हार–जीत की इस प्रक्रिया में कई बार स्त्रीयाँ ही एक दूसरे को दबाती रहती हैं।

जागोरी द्वारा प्रकाशित 2011

औरत और हिंसा की परिभाषा

- औरत को दमित, शोषित व भयभीत रखने का पितृसत्तात्मक हथियार।
- बच्चियों व औरतों के गौरव, सम्मान, समानता, स्वायत्ता का व्यवस्थित हनन व सिलसिलेवार आक्रमण।
- इस हिंसा की व्यवस्था को बनाये रखने में अनेक रीति–रिवाज़, मान्यताएं, नियम व परम्परायें शामिल हैं जो औरत के दमन की विचारधारा पर आधारित हैं।
- इसे निरंतर, मज़बूत व संचालित करने में धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक संस्थाओं का हाथ है।
- यह औरतों के मानवीय अधिकारों पर सीधा वार है।
- इसे बनाये रखने में राज्य सत्ता की सक्रीय भूमिका है।
- यह हिंसा पूरे समाज में फैली हुई है। परिवार के अंदर व बाहर हर जगह घटती है।

औरत और हिंसा का मतलब है वे सभी बोले–अनबोले शब्द, हावभाव, एक्शन जो प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से औरत पर शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आर्थिक व राजनैतिक रूप से आक्रमण करते हैं।

हमारी बात

क्या शहर सुरक्षित है?

पिछले कई महीनों से सुर्खियों में कुछ ऐसे मामले रहे हैं जो शहरों में औरतों की सुरक्षा को लेकर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। इनमें मुंबई के होटल के बाहर पुरुषों के एक गुट द्वारा दो महिलाओं के साथ यौन हिंसा की वारदात शामिल है। एक दूसरा किस्सा दिल्ली विश्वविद्यालय के साइबर कैफे में दो छात्राओं के उत्पीड़न का है। एक महीने की अवधि के अन्दर हमने गुड़गांव मॉल के बेसमेंट में एक महिला के साथ यौन हिंसा, उदयपुर के होटल मालिक द्वारा अंग्रेज़ महिला पत्रकार के साथ बदसलूकी और कोची में सैलानियों पर भीड़ द्वारा हमले के किस्से भी सुने हैं। ये सभी मामले सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं पर हिंसा की सच्चाई से हमें रूबरू कराते हैं।

हालांकि अखबारों में हिंसा के दिल दहला देने वाले किस्से रोज़ाना पढ़ने को मिलते हैं पर महिला हिंसा को परिभाषित करने वाला मुख्य तथ्य है- हिंसा का सतत व आम-साधारण स्वरूप। हिंसा के इस 'आम-रोज़मर्रा' के 'नॉर्मल' चरित्र पर ही हमें अपना ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। रोज़मर्रा के जीवन में होने वाली हिंसा की धारणा औरतों के दैनिक जीवन व अनुभव को नियंत्रित करने के तरीकों पर केंद्रित होती है। समाज में औरतें एक कमज़ोर समूह के रूप में देखी जाती हैं जहां पितृसत्तात्मक हिंसा का इस्तेमाल उन्हें नियंत्रित, दरकिनार व हक़ों से महरूम रखने के लिए किया जाता है। औरतों के लिए केवल शारीरिक हिंसा ही नहीं, बल्कि खासतौर पर यौन हिंसा का डर भी सर्वोपरि होता है। यह डर औरतों के मन में अपने शरीर को लेकर पितृसत्तात्मक सोच से जुड़ा है जहां परिवारों के लिए औरतों की इज़्ज़त और शर्म खो जाने का डर भी शारीरिक हिंसा का शिकार होने के बराबर ही माना जाता है।

हालांकि इस सच को स्वीकार कर लिया गया है कि सार्वजनिक स्थलों में महिलाओं पर हिंसा विश्वव्यापी है पर इसे कैसे सम्बोधित करना है इस पर विचार अभी हाल ही में शुरू हुआ है। इसके लिए आवश्यक है कि हिंसा को सतत बनाने वाले कारणों को पहचाना जाये। इस लेख में प्रस्तुत हमारे विचार जागोरी की शोध पर आधारित हैं जिसमें सार्वजनिक स्थानों को असुरक्षित बनाने तथा हिंसा व हिंसा के डर से शहरी सार्वजनिक जीवन में पूर्ण भागीदारी के हक़ से महिलाओं को वंचित करने वाले कारणों की समीक्षा की गई थी। इस शोध अध्ययन के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया में 'सेफ़्टी ऑडिट' या सुरक्षा जांच शामिल है जिसमें किसी जगह को सुरक्षित व असुरक्षित बनाने वाले कारणों को आंका जाता है। इस जांच में जगह के माहौल, भौतिक ढांचे (रोशनी, पेड़, पारपथ, पार्क आदि), पुलिस व टेलिफोन बूथ, दुकानदारों की मौजूदगी आदि बातें परखी जाती हैं जिससे पुरुष केंद्रित व औरतों के लिए उपयुक्त जगहों को पहचाना जा सके। जागोरी ने तकरीबन छः सौ महिलाओं का साक्षात्कार भी किया जिसमें अलग-अलग वर्ग, उम्र व जगहों से आने वाली औरतें शामिल की गईं, जिससे औरतों के नज़रिये से उनके हक़ व इन जगहों तक उनकी पहुंच की समझ बनाई जा सके। शोध में शहर के अलग-अलग स्थान जैसे मध्यमवर्गीय रिहाइशी कॉलोनी, पुनर्वास बस्ती, बाज़ार, मेट्रो स्टेशन, व्यवसायिक क्षेत्र, शैक्षिक कैम्पस, रेलवे स्टेशन व औद्योगिक क्षेत्र शामिल किए गये थे।

शोध से यह पता चला कि शहर की अधिकांश महिलाओं को हिंसा की संभावना का डर सताता है। पर इस डर का अनुभव उनके रहने व काम की जगह व यातायात पर निर्भर होता है। हम इस बात को भी स्वीकारते हैं कि शहरी स्थलों में सिर्फ़ लैंगिक भेदभाव ही नहीं होता। इसके साथ-साथ उम्र, सामाजिक वर्ग, रोज़गार, वैवाहिक दर्जा, विकलांगता आदि अन्य पहचानें भी भेदभाव का कारण बनती हैं।

बसों में सफर करने वाली औरतों के अनुभव कार में चलने वालों से अलग होते हैं। इसी तरह बस्ती या पुनर्वास क्षेत्र में रहने वाली व मध्यमवर्गीय रिहायशी इलाकों की औरतों के सामने अलग-अलग चुनौतियां होती हैं। मध्यमवर्गीय इलाके में रहने वाली औरतों तथा सेवाएं प्रदान करने वाली कामकाजी महिलाओं के भी सुरक्षा से जुड़े सरोकार भिन्न होते हैं।

शोध ने इस बात को उजागर किया है कि औरतें अक्सर खुद को तथा समाज उन्हें सार्वजनिक स्थलों के अवैध उपयोगकर्त्ता के रूप में देखता है। यहां तक कि जब औरतें सड़क पर किसी 'वैध' कारण से दिखाई देती हैं जैसे काम पर जाने के समय तब भी वे अपनी नज़रें नीची रखती हैं या फिर पुरुषों को निकलने-चलने के लिए जगह देती रहती हैं। यह व्यवहार इस सोच का प्रतीक है कि सार्वजनिक क्षेत्र पर तुलनात्मक रूप से पुरुषों का औरतों से ज़्यादा हक़ होता है। लंदन व जेरूसलेम में सार्वजनिक जगहों के उपयोग पर की गई एक तुलनात्मक शोध में यह पाया गया कि दोनों शहरों की औरतों के मन में हिंसा का खौफ़ उनके वैवाहिक दर्जे, राष्ट्रीयता और यौन झुकाव के दायरों के बाहर एक समान था।

सार्वजनिक जगहों पर औरतों की मौजूदगी व पहुंच समय, जगह व वजह जैसे कारणों पर निर्भर करती है। बिना बंदिश व रोक-टोक के सार्वजनिक स्थलों के उपयोग के लिए औरतों के पास 'जायज़' कारण होने चाहिए। यानी बच्चों को छोड़ना-लाना, पढ़ने या नौकरी पर जाना, पार्क में चलना (उचित समय पर) या खरीददारी करना (कुछ विशेष समय पर) आदि वैध कारण माने जाते हैं। इस वैधता का अर्थ यह नहीं कि इस समय हिंसा नहीं की जा सकती पर ये वजहें उन्हें 'शरीफ़' और 'इज़्ज़तदार' औरतों की श्रेणी में स्थान ज़रूर दिला देती हैं। यानी काफी ऐसी जगहें हो सकती हैं जिन्हें महिलाएं दिन में तो उपयोग कर पाती हैं, परन्तु रात को वे उनकी पहुंच और मौजूदगी के लिए उपयुक्त नहीं समझी जातीं। औरतों से अपनी आवाजाही के लिए समय और जगह की उपयुक्तता पर ध्यान देने की अपेक्षा की जाती है।

औरतें हिंसा से किस प्रकार निपटती हैं या उसे कैसे लेती हैं यह "सम्मान" की विचारधारा के दायरे पर निर्भर करता है। अधिकतर समय महिलाएं हिंसा की रपट पुलिस में दर्ज नहीं करातीं क्योंकि उन्हें सार्वजनिक स्थल पर मौजूद होने के 'जायज़' कारण पेश करने पड़ते हैं। युवा लड़कियां अक्सर अपने माता-पिता से उत्पीड़न का ज़िक्र नहीं करतीं क्योंकि ऐसा करने से उनकी आवाजाही पर रोक लगाई जा सकती है। औरतें ज़्यादातर ऐसे फ़ैसले करती हैं जिनमें यह समझ निहित होती है कि उनके पास सार्वजनिक स्थल पर होने की कोई जायज़ वजह है।

कॉलेज में पढ़ने वाली एक युवा लड़की बताती है, "मैं बस या ऑटो का इंतज़ार करते समय हमेशा बस स्टॉप पर ही खड़ी होती हूं। कहीं और खड़े होने पर आती-जाती कारें सामने आकर धीमी रफ़्तार में रुकने का उपक्रम करती हैं। बस स्टॉप पर कम से कम मैं आराम से रुककर इंतज़ार तो कर सकती हूं।"

गाड़ियों का सामने आकर धीमी गति से चलना इस बात का संकेत होता है कि महिला को यौन प्रस्ताव या घूमने-फिरने के लिए आमंत्रित किया जा रहा है। इसलिए बस स्टॉप पर खड़ी होकर औरत इस बात का प्रमाण देती हैं कि वह एक 'अच्छी औरत' है जिसके सार्वजनिक स्थल पर मौजूद होने के पीछे एक जायज़ मकसद है। हमारे सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि बस स्टॉप पर भी औरतें छेड़खानी और बदसुलूकी का शिकार होती हैं, हालांकि यह अन्य जगहों से अधिक सुरक्षित माने जाते हैं।

हमारे सामने ऐसे कई मामले हैं जो दर्शाते हैं कि किसी "गलत समय" या "स्थल" पर औरत की मौजूदगी किस प्रकार हिंसा का कारण बन जाती है- तड़के सुबह खेत में जा रही एक युवा लड़की के साथ बलात्कार इसलिए किया गया क्योंकि अभी अंधेरा था और दिन पूरी तरह चढ़ा नहीं था। एक दूसरी महिला का बलात्कार रात के समय गाड़ी निकालते समय पार्किंग में किया गया था।

इन घटनाओं पर सार्वजनिक प्रतिक्रिया बौखलाहट के साथ-साथ सुरक्षा का ज़िम्मा वापस महिला पर डाल देने की होती है। उदाहरण के लिए सन् 2004 में दिल्ली पुलिस ने पाबंदियों और मनाहियों की फेहरिस्त जारी की थी जिसमें अंधेरा होने पर अकेले बाहर निकलने, अजनबियों से बातचीत करने, सुनसान इलाकों में न घूमने इत्यादि जैसी हिदायतें शामिल थीं। हाल ही में दिल्ली पुलिस ने पूर्वोत्तर क्षेत्र की महिलाओं को सुझाव दिये कि वे किस प्रकार यौन हिंसा से बच सकती हैं। इन सुझावों में कपड़े व व्यवहार संबंधी हिदायतें भी शामिल हैं।

शहरों को महिलाओं के लिये सुरक्षित बनाओ

औरतों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी सुरक्षा की ज़िम्मेवारी स्वयं उठाएं। चूंकि हिंसा का स्वभाव यौनिक होता है लिहाज़ा इज़्ज़त और पवित्रता का मुद्दा सर्वोपरि बन जाता है। जायज़ कारण पैदा करने का दायित्व औरतों को अपनी आवाजाही नियंत्रित करने तथा सार्वजनिक जगहों पर किसी विशेष प्रयोजन से मौजूद होने या कम से कम किसी खास वजह का उपक्रम करने को बाध्य कर देता है। यानी औरतों के पास, बिना किसी उद्देश्य से, किसी सार्वजनिक जगह पर मौजूद होने या "ऐसे ही" घूमने-फिरने की आज़ादी नहीं होती। इसलिए हम अक्सर पुरुषों को पार्क में टहलते-बतियाते पाते हैं जबकि औरतें पार्क का उपयोग किसी खास मकसद के साथ ही करती हैं जैसे बच्चों को खिलाने, व्यायाम करने, बैठकर बातें करने के लिए। यह उपयोग प्रायः घर के नज़दीक स्थित पार्क या रिहाइशी कॉलोनी के पार्कों तक ही सीमित होता है। इंडिया गेट जैसी खास जगहों पर औरतें परिवार के साथ या समूहों में ही आती हैं। रात के समय अक्सर औरतें पार्कों में सुरक्षित महसूस नहीं करती हैं।

इन धारणाओं में यह पूर्वाग्रह भी निहित हैं कि औरतों की सही जगह घर के अंदर होती है और वे बाहर तभी जाती हैं जब वे ऐसा करना चाहती हैं। यह सोच उन सभी कामकाजी व मध्यमवर्गीय महिलाओं की सच्चाई को नज़रअंदाज़ करती है जिन्हें दिन भर सड़कों, बसों, पार्कों, स्कूलों, अस्पतालों और काम के स्थानों जैसी सार्वजनिक जगहों पर आना-जाना पड़ता है।

सुरक्षा का अभाव गरीब और कामकाजी महिलाओं पर अधिक प्रभाव डालता है क्योंकि इनको अक्सर स्कूल व काम पर जाने के लिए सुरक्षित यातायात के साधनों के अभाव में अपनी उत्तरजीविका व शैक्षिक अधिकार त्यागने पड़ते हैं। नई पुनर्वास बस्तियों में युवा लड़कियों के माता-पिता उन्हें स्कूल से निकाल लेते हैं क्योंकि बस से आते-जाते समय उन्हें यौन हिंसा का डर रहता है। डर के साथ-साथ इसका इन लड़कियों के जीवन पर भौतिक प्रभाव भी पड़ता है। दिल्ली विश्वविद्यालय की छात्राओं ने बताया कि वे अंधेरा होने के बाद सड़क पर निकलने से कतराती हैं क्योंकि सड़क पर

रोशनी काफी कम होती है और स्कूटर-कारों में सवार पुरुष उन्हें परेशान करते हैं। अगर पुस्तकालय शाम को देर तक खुले भी हों तो भी छात्राएं वहां कम ही दिखाई देती हैं। इन सभी का परोक्ष प्रभाव औरतों की शिक्षा, रोज़गार और शहरी जीवन में सम्पूर्ण भागीदारी पर पड़ता है।

इस विश्लेषण से यह साबित होता है कि यद्यपि आज के दौर में मीडिया और प्रचलित संस्कृति के प्रयासों के चलते यौनिकता को इच्छा के पैमाने पर पुनः आंका जा रहा है परन्तु "सम्मानीय यौनिकता के मापदण्ड" आज भी सतत् रूप से दोहराये जाते हैं। लिहाज़ा रात की पार्टी में शामिल औरतों को लेकर आम धारणा यह है कि वे आसानी से यौन संबंध बनाने के लिए तैयार हो जाती हैं और इसलिए ये औरतें हिंसा व बलात्कार के खतरे का अधिक सामना करती हैं।

यद्यपि शहर तक औरतों की पहुंच में पितृसत्ता की भूमिका महत्वपूर्ण है पर हमारे शोध से यह भी पता चला है कि शहर की योजनाएं व डिज़ाइन औरतों के सुरक्षा अनुभवों पर अपना प्रभाव छोड़ते हैं। उदाहरण के लिए, किसी जगह का विविध कामों के लिए उपयोग उसे सुरक्षित बनाने में मददगार साबित होता है। योजनाशास्त्री व समाजशास्त्री इस बात का दावा करते हैं कि ऐसी जगहों का इस्तेमाल दिन भर होता है व यहां अलग-अलग तरह के लोगों की मौजूदगी होती है।

अपनी जांच के दौरान हमने यह भी पाया कि उन जगहों पर जहां लोग घूमते-फिरते नज़र आते हैं, सुरक्षा का आभास किसी सुनसान जगह से अधिक होता है। मध्यमवर्गीय रिहाइशी कालोनियों में औरतें उन पार्कों व कालोनी के अंदर की सड़कों का अधिकतर इस्तेमाल करती हैं जहां पर रोशनी ज़्यादा होती है। इसके अतिरिक्त दिन ढलने के बाद औरतों को सब्ज़ी व रोज़ाना की ज़रूरत का समान बेचने वाले खोखे, प्रेस की दुकानों आदि की मौजूदगी सुरक्षा का एहसास कराती हैं। उन्हें आसपास की दुकानों, बाज़ार, हाटों में भी रात के समय जाना सुरक्षित लगता है क्योंकि वहां बड़ी संख्या में लोग मौजूद होते हैं। पैदल पारपथों का उपयोग औरतें तभी करती हैं जब वहां सामान बेचने वाली दुकानें, खोखे और अच्छी रोशनी होती है।

किसी भी जगह को सुरक्षित बनाने में उपयुक्त रोशनी एक महत्वपूर्ण कारण होता है इसलिए अच्छी रोशनी वाले बाग-बगीचों में औरतें अधिक जाती हैं। ठीक इसी तरह रिहाइशी इलाकों में स्ट्रीट लाईट व तेज़ रोशनी औरतों की सुरक्षा का अहम कारण है। शहर की जगहों में दिन और रात में समय बड़ा फ़र्क़ होता है। अपनी शोध के दौरान हमने जांच दिन ढलने से पहले शुरू की और रात होने तक जारी रखी जिससे जगहों के बीच फ़र्क़ को समझा जा सके। हमने पाया कि शहर की अलग-अलग जगहों पर रोशनी की व्यवस्था के बीच अंतर है। लिहाज़ा बस स्टॉप से घर वापस आना रात के समय असुरक्षित हो जाता है। मध्यमवर्गीय व उच्चवर्गीय इलाकों में रोशनी की व्यवस्था बेहतर पाई गई। उदाहरण के लिए मायापुरी औद्योगिक क्षेत्र की फैक्ट्रियों के बाहर बिल्कुल अंधेरा था और वहां काम करने वाली औरतें घर जाने के लिए निकलते समय एक दूसरे का इंतज़ार करती थीं। वहां बस स्टॉप पर कोई रोशनी नहीं थी। काम चलाने के लिए सड़क की लाईट या ठेलों की गैस बत्ती मौजूद थी।

दिल्ली के शहरीकरण के लिए गरीब-कामकाजी वर्ग को शहर से योजनाबद्ध तरीकों से हटाया जा रहा है जैसे फैक्ट्रियों को बंद करके, बस्तियां तोड़कर, शहर के बाहरी क्षेत्रों में पुनर्वास करके। दिल्ली शहर के गरीब झुग्गी-झोपड़ी, बस्तियों, अवैध इलाकों में रहते हैं जहां ढांचागत भौतिक सुविधाएं नगण्य होती हैं। यहां पर असुरक्षा के कारणों में खराब रोशनी व्यवस्था, सार्वजनिक शौचालय के बदतर हालात, यातायात के खराब साधन आदि भी शामिल हैं।

बाज़ार, सिनेमाघरों, पार्क व व्यवसायिक केंद्रों में महिलाओं के लिए सार्वजनिक शौचालयों का अभाव इन इलाकों तक औरतों की पहुंच को सीमित कर देता है। दिल्ली में महिलाओं के सार्वजनिक शौचालयों की संख्या बहुत कम है। पुनर्वास क्षेत्रों में रहने वाली औरतों के पास अपने निजी शौचालय नहीं हैं और उन्हें पैसे देकर सार्वजनिक शौचालय या खुले मैदानों का उपयोग करना पड़ता है। औरतें आर्थिक व देखभाल संबंधी कारणों से खुले खेतों में जाना पसंद करती हैं। इन इलाकों में रहने वाली औरतों ने खेतों में पुरुषों द्वारा छेड़खानी, उत्पीड़न, घूरने, यौन अंगों के प्रदर्शन के अनेक किस्से हमें सुनाए हैं।

चुभता है

यह स्पष्ट है कि रोशनी, पारपथ, सड़कों की हालत, पार्क, पेड़ों आदि की औरतों के लिए किसी जगह को सुरक्षित या असुरक्षित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इसी तरह किसी भी जगह के उपयोग का तरीका उसकी सुरक्षा में अहमियत रखता है जैसे शराब की दुकानें जहां बड़ी संख्या में पुरुष जमा रहते हैं औरतों के लिए असुरक्षित और गैर आरामदायक होती हैं। दूसरी ओर जानी पहचानी दुकानें और दुकानदार उस जगह के प्रति औरतों के मन में सुरक्षा की भावना पैदा कर देते हैं। हमारा कहने का यह मतलब नहीं है कि सिर्फ़ यही कारण सुरक्षा की गारंटी हैं बल्कि यह कि ये सुरक्षा के महत्वपूर्ण कारक हैं जिन पर गौर किया जाना चाहिए।

कौन से कारण किसी जगह को सुरक्षित या असुरक्षित बनाते हैं जैसे सवालों पर चर्चाएं अक्सर मध्यम व उच्चवर्गीय महिलाओं के इर्द-गिर्द केंद्रित हो जाती हैं क्योंकि ये वर्ग भौगोलिक शहरों और अर्थव्यवस्था में भागीदार हैं। इसलिए बी.पी.ओ. में कार्यरत महिला के ऊपर हिंसा होने पर जनता में तीव्र प्रतिक्रियाएं होती हैं पर उन औरतों के प्रति लोगों की कोई दिलचस्पी नहीं होती जो देर रात काम से लौटती हैं और जिनके मालिक उन्हें कोई सुरक्षा सुविधा मुहैय्या नहीं कराते। इनमें नर्स, घरेलू कामगार तथा अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत कामकाजी महिलाएं शामिल हैं। ठीक इसी तरह मध्यमवर्गीय रिहाइशी इलाकों की सुरक्षा भी पूर्णतः वर्ग आधारित है। इसलिए काफी मध्यमवर्गीय क्षेत्रों के सुरक्षा नियमों के तहत 'निम्न वर्ग पुरुष' समान बेचने वालों को भीतर आने की मनाही है, पर यही लोग इन इलाकों में काम करने वाली घरेलू कामगार महिलाओं की सुरक्षा के प्रति बिल्कुल बेज़ार होते हैं।

अंत में हम यह कहना चाहेंगे कि सुरक्षा का विमर्श अधिकारों के व्यापक ढांचे के बीच स्थापित किया जाना चाहिए। सुरक्षा का अभाव औरतों को शहरी जीवन में खुलकर भाग लेने से वंचित करता है इसलिए सुरक्षा मुहय्या कराना व इस समस्या का समाधान भी अधिकारों के दायरे के भीतर किया जाना चाहिए। औरतों को अपनी असुरक्षा का निदान तलाशने के लिए नहीं कहा जा सकता। पैपर-स्प्रे या आत्म सुरक्षा कोर्स जैसे समाधान सुरक्षा को अधिकार के रूप में नहीं देखते। इस समस्या का समाधान राज्य व समुदाय से ही निकलना चाहिए। इसके लिए एक विचार-विमर्श प्रक्रिया जिसमें जनसंख्या के सभी गरीब, कमज़ोर तबके शामिल हों, के विचारों की सुनवाई तथा उनके पक्षों को मान्यता प्रदान की जानी चाहिए। तभी औरतों का शहरी नागरिक होने का सम्पूर्ण अधिकार मिल सकता है।

कल्पना विश्वनाथ व सुरभि टंडन मेहरोत्रा

यह लेख सेमिनार अंक 583 मार्च 2008 में पूर्व प्रकाशित किया जा चुका है।
मूल लेख अंग्रेज़ी में 'सेफ़ इन द सिटी' शीर्षक से है।

लेख

लिंग संवेदी शौचालय व महिला सुरक्षा

प्रभा खोसला

शहर अधिक सुरक्षित व रहने योग्य बनेंगे अगर उनका नियोजन व प्रारूप महिलाओं व लड़कियों को ध्यान में रखकर बनाया जाए। यह हम सभी जानते हैं कि स्वच्छ शौचालयों और बेहतर स्वास्थ्य आधारभूत सुविधाएं हर नागरिक का बुनियादी अधिकार हैं। यह भी सच है कि पानी व स्वास्थ्य सुविधाओं पर निवेश, गंदगी, खराब सुविधाओं व संक्रमित पीने के पानी के कारण होने वाले दीर्घकालीन स्वास्थ्य के नुकसान की लागत से कम ही है।

शौचालयों व स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी महिलाओं व लड़कियों के लिए खतरे पैदा करती है। कम रोशनी तथा अनुपयुक्त जगहों पर स्थित सार्वजनिक शौचालयों व खुले मैदानों का इस्तेमाल करते समय महिलाओं को हिंसा का सामना करना पड़ता है। अनेकों महिलाओं के साथ नहाने या शौचालय जाते समय छेड़छाड़ या बलात्कार जैसी घटनाएं घटी हैं। सुरक्षित और आरामदायक माहौल में अपने दैनिक कार्यो जैसे शौच, नहाना, कपड़े धोना न कर पाना लड़कियों को शर्मिंदा व अपने बुनियादी अधिकारों से वंचित करता है।

महिलाओं व लड़कियों को ध्यान में रखकर निर्मित शहरों में सुरक्षा व सम्मान सतत शहरी नियोजन व प्रारूपण का अभिन्न नियम होता है। यह महिलाओं की सुरक्षित, साफ़ व सामर्थ्य योग्य शौच सुविधाएं मुहैया कराता है। महिलाओं व लड़कियों के लिए इन सेवाओं की उपलब्धता युवा लड़कों, पुरुषों, विकलांगों के लिए भी उपयोगी रहेंगी। हम भलीभांति परिचित हैं कि बगीचों, सड़कों, गलियों व मैदानों में पुरुष, खुलेआम पेशाब करते पाए जाते हैं। सार्वजनिक जगहों को शौचालय की तरह उपयोग करने की पुरुषों की यह आदत महिलाओं की आवाजाही और आज़ादी से घूमने-फिरने के हक़ पर अंकुश लगाती है। यह पर्यावरण को अस्वस्थ व गंदा करती है तथा अन्य नागरिकों के साथ-साथ पुरुषों के लिए भी तकलीफ़ें पैदा करती है।

हालांकि यह सच है कि काफी शहरों व कस्बों में सार्वजनिक शौचालय मौजूद हैं पर यह भी सच है कि अधिकांश महिलाएं व लड़कियां गंदगी, अनुपयुक्त जगह पर स्थित होने अथवा खराब प्रशासन और असुरक्षित माहौल के कारण इनका इस्तेमाल नहीं करतीं। अक्सर शौचालय महिलाओं, बुजुर्गों, विकलांग व्यक्तियों व बच्चों के आसान व सुविधाजनक उपयोग को ध्यान में रखकर नहीं बनाए जाते। कुछ शौचालय इतने छोटे होते हैं कि उसमें घूमकर बैठना ही मुश्किल होता है, फिर बच्चों के साथ इस्तेमाल तो दूर की बात है। पर्स, दुपट्टा, शाल टांगने के लिए खूंटी या सहारा लेकर उठने-बैठने के लिए रेलिंग का भी अभाव होता है। सामुदायिक शौचालयों में पानी बाहर से भरकर लाना पड़ता है और अक्सर वहां पर माहवारी के समय कपड़े धोने की सुविधा नहीं होती। निम्न आय इलाकों के सामुदायिक शौचालयों में नहाने व कपड़े धोने की व्यवस्था भी नहीं होती।

उचित शौचालय सुविधाओं का अभाव महिलाओं व लड़कियों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। हम अक्सर महिलाओं व लड़कियों पर लगाए जाने वाले सामाजिक नियंत्रणों और मनाहियों को इससे जोड़कर नहीं देखते। उदाहरण के लिए दिल्ली में बवाना व भल्स्वा पुनर्वास बस्तियों में *जागोरी* व *एक्शन इंडिया* ने पिछले दो वर्षों में नगरपालिका द्वारा मुहैया सेवाओं, आधारभूत सुविधाओं, व महिलाओं की सुरक्षा की समीक्षा करने पर

ढाका में महिला शौचालय का निर्माण

पाया कि पानी भरने व शौचालय इस्तेमाल करने की कतार में लड़कियों को सुबह इतना अधिक समय लग जाता है कि उन्हें स्कूल भूखा ही जाना पड़ता है।

भल्स्वा की लड़कियों की शिकायत है कि स्कूल में शौचालय सुविधा नहीं है। उन्हें शौच के लिए वापस घर आना पड़ता है जिससे पढ़ाई का नुकसान होता है। बवाना के स्कूल में शिक्षकों के लिए शौचालय है परन्तु छात्राएं उनका उपयोग नहीं कर सकतीं। आठ सौ से भी अधिक लड़कियों के लिए केवल दो शौचालय हैं। लड़के व लड़कियां इनका उपयोग अलग-अलग शिफ्ट में करते है। गंदे, बदबूदार इन शौचालयों में माहवारी का कपड़ा धोने या पैड फेंकने का कोई इंतज़ाम नहीं है जिसके कारण लड़कियां माहवारी होने पर स्कूल से छुट्टी लेती हैं।

इसके साथ ही बवाना में कई माता-पिता ने बताया कि वे अपनी बेटियों की जल्दी शादी करना चाहते हैं क्योंकि उपयुक्त मूल सुविधाओं के अभाव में सुरक्षा एक चिंताजनक मुद्दा है। उन्हें लड़कियों का रात को खुले मैदान में जाना उचित नहीं लगता और बलात्कार का डर हमेशा बना रहता है। सुरक्षित और उपयुक्त शौचालय सुविधाओं का अभाव लड़कियों के अधिकारों का हनन करता है और जीवन में चयन के मौकों को भी सीमित करता है। दोनों इलाकों में महिलाएं व लड़कियां शाम के समय कम खाती हैं जिससे दैनिक क्रियाओं को नियंत्रण में रखा जा सके।

उपर्युक्त सभी तर्को से यह स्पष्ट उभर कर आता है कि लिंग संवेदी शौचालय व सार्वजनिक सामुदायिक शौचालय ब्लॉक शहरी जीवन को अधिक आरामदायक बनाकर सभी नागरिकों को काम व आराम के समान मौकों का लाभ उठाने में सहायक होंगे।

महिलाओं व लड़कियों के लिए लिंग संवेदी शौचालयों का निर्माण करते समय निम्न दो मुख्य बिन्दुओं का ध्यान रखा जाना चाहिए। पहला—उपयोग करने वाली महिलाओं, लड़कियों, युवा लड़कों, बुजुर्गों, विकलांगों के साथ निर्माण में लगने वाले समान, बैठने की सुविधा व अन्य व्यवस्थाओं, माहवारी, स्वच्छता सुविधाओं, शौचालयों के प्रारूप (पेशाब/मल का निकास, साफ़-सफ़ाई, प्रबंधन, कपड़े टांगने की सुविधा आदि) पर सुझाव आमंत्रित किए जाने चाहिए। जहां संभव हो सके स्नानघर और कपड़े धोने-सुखाने की सुविधा भी मुहैया कराई जानी चाहिए। दूसरा—शौचालय निर्माण में सततता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। जहां तक हो सके पारम्परिक ज्ञान, जल-सफ़ाई सेवा में पर्यावरण और पारिस्थितिक तंत्र व उपयुक्त तकनीकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। एक और तरीका है जगह के भौगोलिक व सांस्कृतिक संदर्भ को मद्देनज़र रखते हुए शुष्क शौचालयों का निर्माण।

लिंग संवेदी शौचालय के प्रारूपण में निम्न प्रमुख बातों को शामिल किया जाना चाहिए:

- ऐसी जगह का चुनाव जिसमें सुरक्षा व एकान्त दोनों हो।
- शौचालय में अंदर व बाहर उचित जगह का प्रावधान तथा रोशनी व हवा के आवागमन के लिए रोशनदान, झिर्री, झरोखे आदि।
- खुले दरवाज़े व उपयुक्त लम्बाई-चौड़ाई जिसमें मोटे स्त्री-पुरुष व गर्भवती महिलाएं व छोटे बच्चे आसानी से प्रवेश कर सकें। ऊंची दीवारें व ज़मीन तक पहुंचने वाले दरवाज़े जिससे गोपनीयता रखी जा सके। दरवाज़ों को अंदर से बंद करने के लिए कुंडी व ताला।
- शौचालय के भीतर नल व बेसिन।
- विकलांगों, बुजुर्ग/बीमार महिलाओं व बच्चों को चढ़ने के लिए सुविधाजनक चबूतरे।
- चबूतरे व फर्श पर आसानी से साफ़ होने वाली निर्माण सामग्री का उपयोग। चबूतरे का सही ढलान जिससे सफ़ाई के बाद पानी पूरी तरह निकाला जा सके।
- बैठने वाले शौचालय में हाथ से पकड़ने वाली रेलिंग बुजुर्गों व गर्भवती महिलाओं के लिए खास उपयोगी रहेगी।
- बच्चों के लिए विशेष तौर पर बैठने वाले शौचालयों का निर्माण।

एक अन्य बात जिस पर ध्यान देना ज़रूरी है वह है—शौचालय ब्लॉक। ब्लॉक का दरवाज़ा तथा ब्लॉक दोनों

को आराम, उपयोगिता व सुरक्षा के अनुसार बनाया जाना चाहिए जहां महिलाएं व लड़कियां शारीरिक व यौन उत्पीड़न से सुरक्षित रहें। स्कूल व रिहाइशी दोनों इलाकों पर स्थित शौचालय ब्लॉकों के निर्माण के समय लड़कों व लड़कियों दोनों से बात की जानी चाहिए कि उनके लिए क्या अधिक सुविधाजनक रहेगा। खासकर स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय ब्लॉक के निर्माण से उन्हें ज़्यादा सुरक्षा का एहसास होता है। शौचालय ब्लॉक के निर्माण में निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना उचित रहेगाः

- चारों ओर से बंद शौचालय व ऊंची दीवारें ब्लॉक जिससे गोपनीयता बनी रहे।
- ब्लॉक के भीतर उपयुक्त जगह जिससे महिलाएं/लड़कियां खड़ी रह सकें।
- अलग-अलग ऊंचाई/लम्बाई वाले नल/बेसिन ।
- कूड़ेदान व महावारी के गंदे कपड़े/पैड फेंकने की उचित व्यवस्था।
- स्नानघर सुविधाएं (सुरक्षा, निकास, हवा, लम्बाई चौड़ाई, ऊंचाई का विशेष ध्यान)।
- कपड़े धोने के लिए सिमेंट के टब। पुरुष शौचालयों में भी कपड़े धोने की व्यवस्था।
- पानी के निकास के लिए उचित ढलान/नाली।

इन सभी बातों को ध्यान में रखकर हम महिलाओं व लड़कियों के लिए सुरक्षित आरामदायक मूलभूत सुविधाओं की व्यवस्था कर सकते हैं जिससे वे बतौर नागरिक अपने अधिकारों का पूर्ण व सम्मानजनक उपयोग कर सकें।

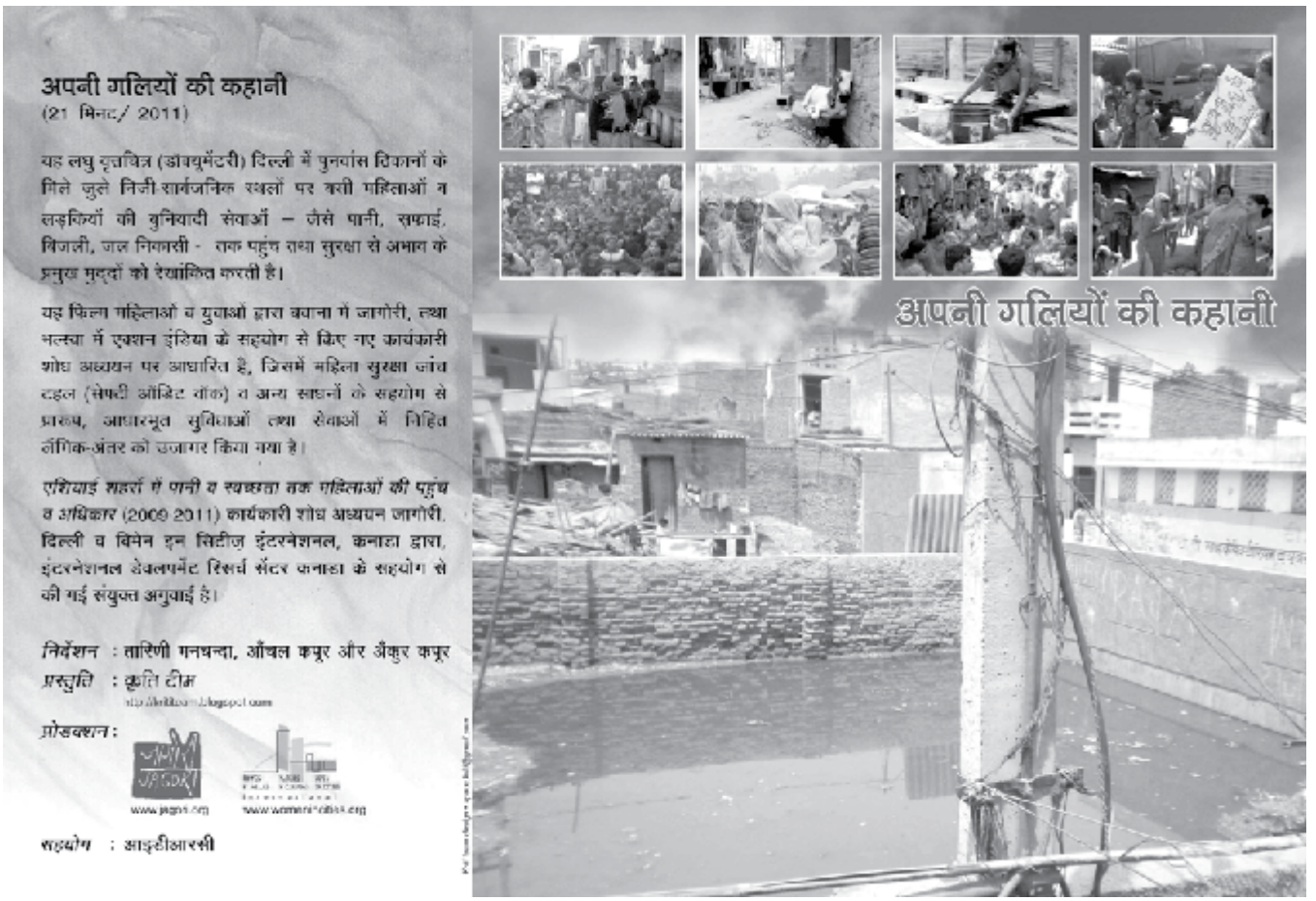

प्रतियां मंगवाने के लिए संपर्क करें:
महाबीर सिंह, जागोरी
दूरभाषः 011-26691219/20 • distribution@jagori.org

एक अदृश्य अर्थव्यवस्था-घरेलू कामगार

गीता मेनन

घरेलू कामगार हमारी अर्थव्यवस्था का एक मूक व अदृश्य आधार है। पिछले कुछ दशकों में श्रमिक वर्ग में औरतों की भागीदारी बढ़ी है। भारत में कामगार औरतों की यह वृद्धि जाति व पेशागत जाति के पदानुक्रम के साथ काफी नज़दीकी से जुड़ी है। कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में औरतें जमींदार के खेतों व घर, दोनों जगह काम करती थीं। इसके एवज़ में उन्हें सर छुपाने की जगह व खाना-पानी मिल जाता था। नकद वेतन का कोई ज़िक्र इस लेन-देन में मौजूद नहीं था। शहरी विकास के साथ-साथ इस तरह की सामंतवादी बंधुआ दासता में खास परिवर्तन नहीं आया है। फ़र्क़ बस इतना ही है कि घर के काम के बदले कामगार को वेतन दिया जाता है और वह अपने घर वापस लौट जाती है। हालांकि सांमतवादी व घरेलू कामगार को बंधुआ समझने की मानसिकता 'नौकर' शब्द में व समाज द्वारा किए जाने वाले व्यवहार में विद्यमान है। इस अपमान के अतिरिक्त उसके श्रम का अवमूल्यन उसे न सिर्फ़ सामाजिक पदानुक्रम बल्कि श्रम पदानुक्रम में भी सबसे निचले स्तर पर रखता है।

घरेलू काम को काम का दर्जा न मिलना पितृसत्तात्मक समाज की वास्तविकता है जहां औरतों द्वारा किए जाने वाले सभी घरेलू कामों को कमतर समझा जाता है। घरेलू काम के प्रति यह लैंगिक नज़रिया केवल मालिक के मन में ही नहीं बल्कि कामगारों के दिलों में भी होता है।

घर के काम को औरतों के हिस्से का काम समझने के कारण ही लड़कियों को छोटी उम्र से ही इसमें शामिल कर लिया जाता है। आर्थिक व स्वास्थ्य से जुड़े कारणों

के चलते घरेलू कामगार अपनी छोटी बच्चियों को अपने साथ काम पर ले जाती हैं। आमतौर पर यह माना जाता है कि लड़कियों को छुटपन से ही घर का काम सीख लेना चाहिए। फिर चाहे पढ़ाई भी छोड़नी पड़े क्योंकि 'ये पति के घर जाने की तैयारी होती है।'

घरेलू कामगारों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति

यद्यपि बंगलुरू शहर में घरेलू कामगारों का कोई विस्तृत सर्वेक्षण नहीं हुआ है पर अनुमानित है कि शहर में आठ लाख से भी ज़्यादा महिला घरेलू कामगार हैं जो यहां की आबादी का दस प्रतिशत है। शहरी भारत में घरेलू कामगारों की संख्या में यह वृद्धि गांव से शहरों में पलायन के साथ जुड़ी हुई है। उत्तरजीविका की निरन्तर तलाश, आर्थिक मजबूरियां व औरतों में शिक्षा व कौशल की कमी उन्हें घरेलू कामगार बनने को बाध्य कर देती हैं। साथ ही शहरी मध्यम वर्ग का विकास से भी इस वृद्धि को बढ़ावा मिला है जहां औरतें अपने व्यवसाय के प्रति अधिक सचेत हैं। एकल परिवार के मानक, पुरुषों के असहयोग व कामकाजी औरतों के लिए राज्य की विशेष सुविधाओं के अभाव के कारण मध्यमवर्ग घरेलू कामकाज व बच्चों की देखभाल के लिए घरेलू कामगारों पर निर्भर है। इसलिए सेवा अर्थव्यवस्था में घरेलू कामगारों की बढ़ती मांग व आपूर्ति के कारण उनकी भूमिका अधिक महत्वपूर्ण बनकर उभर रही है। फिर भी आपूर्ति अधिक होने के कारण कामगारों में आपसी प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा मिलता है।

घरेलू कामगारों की काम की परिस्थितियां व्यक्तिगत और मनमाने संबंधों पर आधारित होती हैं। इन संबंधों में व्यक्तिगत जीवनियां, औरत-औरत के बीच रिश्ते, मजबूरी, एहसास और वफादारी के अनेक ताने-बाने गुंथे रहते हैं।

घरेलू कामगारों को अंशकालिक, पूर्णकालिक, रिहाइशी व लिव-इन चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है। इनमें सेना व सरकारी आवासों में काम करने वाली कामगार भी शामिल हैं। घरेलू कामगारों का विभाजन उनके काम के आधार पर भी किया जाता है- जैसे सफाई, खाना पकाना, बच्चों की देखभाल या बुजुर्गों की देखरेख करना। यह श्रम का विभाजन अक्सर जाति के आधार पर किया जाता है।

सामाजिक स्तर पर भी घरेलू कामगार भेदभाव का सामना करती हैं। मालिकों के घर में जातीय भेदभाव किया जाता है। उनके लिए अलग गिलास-प्लेट रखी जाती है; पूजाघर में उन्हें जाने की मनाही होती है। कई घरों में वे शौचालय भी इस्तेमाल नहीं कर सकतीं। विडम्बना यह है कि इन शौचालयों की सफाई यही कामगार रोज़ाना करती हैं। भेदभाव का यह रवैया इसलिए अपनाया जाता है क्योंकि प्रायः घरेलू कामगार दलित समुदाय से आती हैं। शुद्धि का ध्यान रखते हुए अनेकों बार मालिक कपड़ों व बर्तनों पर पानी के छींटे मारकर इस्तेमाल करते हैं। घरेलू कामगार चाहे घर में कितने ही घंटे काम करें उन्हें खाना या चाय नहीं दी जाती। अक्सर मालिक भूल जाते हैं कि घरेलू कामगार भी इंसान है जिन्हें अपने परिवारों का ध्यान रखना पड़ता है और जो बदतर हालातों में जीवन बसर करती हैं। इस वर्ग समूह की भी स्वास्थ्य संबंधी व अन्य समस्याएं होती हैं तथा उनके जीवन के तनाव व तकलीफें मालिकों की ही तरह आते-जाते हैं।

कई बार घरेलू कामगारों के साथ यौन हिंसा होती है जिसे वह खामोशी से सह जाती हैं। मालिक इन घटनाओं को या तो नज़रअंदाज़ कर देते हैं या फिर उल्टा आरोप इन औरतों पर ही लगा दिया जाता है। इनके साथ अक्सर अपराधियों जैसा व्यवहार किया जाता है, घर में किसी भी चोरी का आरोप सीधा घरेलू कामगारों पर लगा दिया जाता है।

घरेलू कामगारों की ये परिस्थितियां लगभग पूरे भारत में एक समान ही हैं, सिवाय क्षेत्र, इलाके, वर्ग व जाति के कुछ फेरबदल के। जाति की इस पेचीदगी

में मालिक भी फंसे हुए हैं क्योंकि घरेलू कामगार भी जाति आधारित काम के विभाजन का सख्ती से पालन करती हैं। जाति पदानुक्रम में अपने दर्जे के अनुसार वे सिर्फ़ खाना पकाने का काम करती हैं या फिर साफ़-सफ़ाई करती हैं परन्तु शौचालय की धुलाई करने से कतराती हैं।

इस प्रकार घरेलू कामगारों का पूरा वर्ग समूह अनेकों विभिन्नताओं, विभाजन और अपनी बढ़ती हुई संख्या के साथ एक बड़ी चुनौती बनकर उभर रहा है।

हमारी समझ व रणनीतियां

एक संगठन के रूप में हमारे पास अलग से बनाई कोई स्पष्ट योजना या रणनीति मौजूद नहीं है। हमें जो समझ में आता है वह एक प्रक्रिया है जिस पर अमल करते हुए गलती व सुधार पद्धति से आगे बढ़ना है व बाज़ार की मांग व आपूर्ति के अनुसार खुद को लचीला बनाना है। हमारे मानस में साफ़ तौर पर दर्ज़ है कि *"घरेलू कामगार न तो गुलाम हैं, न मशीन। वे कामगार हैं और बतौर श्रमिक उनकी पहचान को मान्यता व सम्मान मिलना ही चाहिए।"* इस सच्चाई को स्वीकारते हुए पहली रणनीति है- जागरूकता फैलाना व कामगारों को एक व्यापार संघ में संगठित करना जिससे उचित काम व वेतन के संघर्ष व मोलतोल करने की ताकत को सशक्त बनाया जा सके। संघ का यह भी प्रयास है कि श्रमिकों को मिलने वाले तमाम मूल अधिकार जैसे वेतन, साप्ताहिक अवकाश, वेतनयुक्त सालाना अवकाश, चिकित्सीय सुविधाएं, बोनस, पेंशन आदि घरेलू कामगारों को भी मुहैय्या हों। इस संदर्भ में घरेलू कामगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा मुहैय्या कराने का भी संघर्ष जारी है।

पर बुनियादी ज़रूरत घरेलू कामगारों की पहचान व नियमितता के लिए कानूनी प्रावधान की है जिससे कामगारों की कानूनी पहचान की जा सके। यानी घरेलू कामगारों के रोज़गार व नियंत्रण के कानून की आवश्यकता है जिससे आगे चलकर घरेलू कामगार कल्याण बोर्ड की स्थापना की जा सके। ये त्रिपक्षी बोर्ड घरेलू कामगारों के पंजीकरण की ज़िम्मेदारी लेगा जिससे उनके रोज़गार का सबूत दिया जा सके।

घरेलू कामगारों को संगठित करने के पीछे उद्देश्य है इस बात को पुरज़ोर तरीके से रखना कि घरेलू कामगार सेवा अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। हमारा संघर्ष पुनः दोहराता है कि घरेलू कामगारों को उचित वेतन दिया जाना चाहिए जो घंटों के हिसाब से तय किया जाए तथा जिसका ढांचा माहवार खर्च और ज़रूरत का हिसाब रखते हुए निर्धारित किया जाए।

संगठन के लक्ष्य को पूरा करने के लिए अलग-अलग रणनीतियां तय की गईं। बाल कामगारों के मामलों में ज़मीनी स्तर पर जानकारी एकत्रण, पार्क, डेरी के पास इंतज़ार करना, स्कूली बच्चों में संवेदनशीलता, सर्वेक्षण आदि की मदद से पता लगाने के प्रयास किए गए कि किन परिवारों में बाल कामगार हैं। व्यस्क घरेलू कामगारों के साथ सम्पर्क, बस्तियों, स्थानीय समूह नुक्कड़, सार्वजनिक मीटिंगों व जानकारी इकट्ठी करके किया गया। कुछ स्वयंसेवक कॉलेजों में विद्यार्थियों को अपने घरेलू कामगारों के प्रति संवेदनशील व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं।

एक अन्य रणनीति जो अपार्टमेंट ब्लॉक में अपनाई गई वह है, वहां मौजूद नागरिक कल्याण समितियों से बातचीत। इन समितियों से बाल घरेलू कामगारों के मामले में काफी अच्छा समर्थन मिला है। पर व्यस्क घरेलू कामगारों को लेकर इनमें उत्साह का अभाव है। एक अन्य विचार के अंतर्गत मालिकों व घरेलू कामगारों के संयुक्त मंच की स्थापना की बात की गई, जिससे आपसी बातचीत हो सके और फिर घरेलू कामगारों के नियंत्रण व पहचान के प्रयास किए जा सकें। इससे कम से कम अपार्टमेंट स्तर पर कामगारों की बतौर श्रमिक पहचान दर्ज हो सकेगी।

- रानी के पिता जेल में थे। इस सदमे से उसकी मां मानसिक बीमारी से ग्रस्त हो गई थी। रानी के चाचा ने उसे काम पर लगा दिया पर वह खुश नहीं थी। वह स्कूल जाना चाहती थी व दूसरे बच्चों के साथ खेलना चाहती थी। रानी की मालकिन उसे स्कूल नहीं भेजती थी। एक हमदर्द पड़ोसी ने उसकी तकलीफ़ों को देखते हुए उसे दूसरी जगह काम पर लगा दिया। पर वहां भी उसके साथ बुरा व्यवहार किया जाता था। इस तरह अनेक घरों में काम करते-छोड़ते रानी अंत में एक आवास गृह नवजीवन में पहुंच गई। रानी की इच्छा अच्छी शिक्षा पाने व अपना घर बनाने की है।
- 70 साल की रूक्मिणी अम्मा ने एक ही घर में 45 सालों तक काम किया। वेतन बढ़ाने की बात करने पर मालिक ने उसे काम छोड़ देने के लिए कहा। बूढ़ी हो जाने के कारण रुक्मिणी ज़्यादा मेहनत वाला काम नहीं सकती थी इसलिए अपने भविष्य की चिन्ता करते हुए वह उसी घर में कम वेतन पर काम करती रही।
- 42 साल लिज्जी एक आदर्श मालकिन के बारे में बात करती है जिसने उसके साथ अच्छा बर्ताव किया व उसके बच्चों की शिक्षा में मदद की। मालकिन का बूढ़ा बाप उसके साथ छेड़छाड़ करता था। किसी न किसी बहाने से उसे छूता व चूमने के लिए कहता। वह दृढ़ता के साथ इनका सामना करती थी। शिकायत करने पर मालकिन ने उस पर बाप के साथ बुरा बर्ताव करने तथा चोरी करने का आरोप लगाया। उसे तुरंत निकल जाने के लिए कहा गया। इस घटना ने उसके परिवार को आर्थिक संकट में डाल दिया जिस कारण से वह लम्बे समय तक अपमान सहते हुए संघर्ष करती रही।
- सेना क्वार्टरों में पद्मा ने मुफ्त ठिकाने के लिए काम लिया था। यहां उसे केवल 200 रुपया वेतन दिया जाता था और दिन-भर हाज़िर होने की अपेक्षा की जाती थी। उसे मुफ्त राशन भी नहीं मिलता था जो सेना का आम नियम था। उस पर काम का भारी बोझ था। वह अगर मालिकों को अपने काम से संतुष्ट नहीं कर पाती थी तो उसे गालियां व मारपीट सहनी पड़ती थी।

केस स्टडी स्रोतः स्त्री जागृति समिति, बंगलुरू

अन्य रणनीतियां

संघ बनाने व सदस्यों को समूह में एकत्रित करते हुए जयनगर ईकाई ने महसूस किया कि संघ के सदस्यों को अधिक विश्वसनीयता प्रदान करने की आवश्यकता है। इसलिए संघ बनाने के साथ-साथ हमने तय किया कि घरेलू कामगारों का एक समूह गठित किया जाए जो महिलाओं को काम दिलाने के लिए नियोजन एजेंसी की भूमिका निभाए। इस समूह/नियोजन एजेंसी की मदद से काम के लिए बेहतर हालात सुनिश्चित किए जा सकेंगे। इस एजेंसी की मदद से कामगारों व मालिकों के बीच एक अनुबंध बनाने की प्रक्रिया भी शुरू की जाएगी जिससे दोनों ओर ज़िम्मेदारी व जवाबदेही सुनिश्चित हो सकें। हमारा प्रयास यह भी है कि ऐसी रणनीति ईजाद की जा सके जो मालिकों को भी संबोधित करे क्योंकि मालिक व कामगार के संबंध अन्य रिश्तों से अधिक जटिल होते हैं।

रणनीति के तौर पर कौशल विकास

घरेलू कामगारों के लिए वाजिब वेतन और बेहतर काम के हालात मुहैय्या कराने के साथ ही कामगारों के कौशल विकास व व्यवसायिकता पर भी ध्यान देना होगा। इससे घरेलू कामगारों का आत्मविश्वास व हौसला बढ़ेगा। हालांकि हमने खाना पकाने व घर का रख-रखाव सिखाने के लिए प्रशिक्षण कार्यशालाएं चलाई हैं परन्तु इसका परिणाम कुछ खास नहीं दिखाई पड़ा है। वेतन व कौशल के बीच भी सीधा संबंध भी कम दिखाई पड़ता है। हम यह समझ चुके हैं कि हमारे ढांचागत संसाधन इस समस्या को सीधे तौर पर हल करने में असमर्थ हैं। लिहाज़ा हमें छोटे पैमाने पर परीक्षण छोड़कर व्यापक स्तर पर कार्यवाही करनी होगी। रणनीतियों की बात करते समय हमें यह याद रखना होगा कि हमें कोई कामयाबी तब तक हासिल नहीं होगी जब तक घरेलू कामगार खुद इन रणनीतियों को सफल बनाने की शक्ति का एहसास नहीं करेंगी।

सारांश में यह कहा जा सकता है कि घरेलू कामगारों को मान व अधिकार दिलाने के लिए एकजुट होकर संयुक्त प्रयास करने होंगे। तभी इस अहम कामगार वर्ग समूह को उनका जायज़ दर्जा व न्याय मिलेगा।

मूल अंग्रेज़ी लेख का संपादित अंश

लेख

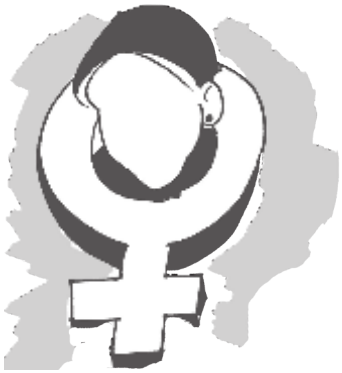

भ्रांतियो के घेरे में
मुसलमान महिलाओं के हक़

फ्लेविया एग्निस

न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर, जो *भारतीय मुस्लिम कानून* के विशेषज्ञ माने जाते हैं ने अपने एक फ़ैसले के दौरान कहा था— “इस्लामी कानून की गुनाह से भी ज़्यादा मुखालफ़त होती है।” और जैसे-जैसे हम मुसलमान महिलाओं के अधिकारों का गहन अध्ययन करते हैं वैसे-वैसे इस कथन की सच्चाई हमारे समाने आती जाती है।

सत्रहवीं सदी में पैगम्बर साहब ने निकाह को एक अनुबंध का दर्जा देते हुए इसमें औरत की रज़ामंदी की बात की थी। इसके विपरीत हिंदू विवाह कानून के तहत स्त्री को एक सम्पत्ति का दर्जा दिया गया है जिसको दान स्वरूप (कन्यादान) दूल्हे को सौंप दिया जाता है। निकाह में औरत की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए मेहर की रकम को विवाह के समय औरत के नाम करने की भी बात की गई है। जबकि हिंदू विवाह में दहेज प्रथा का चलन है जो औरत के दोयम दर्जे का पुर्नस्थापित कर देती है। निकाह चूंकि एक अनुबंध है उसे तोड़ा जा सकता है और इसलिए एक मुसलमान लड़की के नैहर में अधिकार महफूज़ रहते हैं। एक हिन्दू लड़की विवाह के बाद अपने पति के परिवार का नाम अपनाती है और शादी होते ही मायके में उसके हक़ खत्म हो जाते हैं। मुसलमान महिलाएं अपने निकाहनामे में अपनी शर्तें दर्ज कराने का हक़ रखती हैं जिन्हें अदालत में वैधता प्रदान की जाती है। पैगम्बर साहब ने मुसलमान महिलाओं की सम्पत्ति में भी एक नियत हिस्सा पाने का अधिकार दिया था और यह हिदायत भी की थी कि वह अपना पूरा अधिकार किसी और के लिए या किसी के कहने पर नहीं छोड़ेगी क्योंकि यह कुरान द्वारा मिले विरासत के अधिकार का उल्लंघन होगा।

इनमें से अधिकतर हक़ एक ख्वाब की तरह ही लगते हैं क्योंकि कुरान में दर्ज व्यवस्था को उपनिवेशी और समकालीन दौर में अनेकों बार उलट-फेर किया गया है।

पर 1875 के *पूनो बीबी बनाम पुक्स पख्श* मामले का हवाला देते हुए मैं यह उजागर करना चाहूंगी कि किस तरह औरतें निकाहनामे में अपनी शर्तों को दर्ज करा सकती थीं और साथ ही उनको अदालत में किस प्रकार कानूनी मान्यता दी जाती थी।

“पति (पुक्स पख्श) ने अपनी पत्नी (पूनो बीबी) को दस रुपये माहवार गुज़ारा भत्ता देने के साथ निम्न शर्तों को पूरा करने की भी हामी भरीः

- *मैं तुम्हें खाने-पीने व कपड़ों के लिए कभी परेशान नहीं करूंगा।*
- *मैं अपनी पूरी कमाई तुम्हारे हवाले करूंगा।*
- *मैं तुम्हारे साथ किसी भी प्रकार हिंसा नहीं करूंगा।*
- *मैं तुम्हारे घर से तुम्हें कभी बेघर नहीं करूंगा।*
- *मैं तुम्हारी इजाज़त के बगैर कभी निकाह नहीं करूंगा।*
- *मैं तुम्हारी मर्ज़ी के बगैर कोई काम नहीं करूंगा।*

अगर मैं तुम्हारी रज़ामंदी के बगैर कुछ करूं तो तुम मुझे तलाक़ देने के लिए आज़ाद होगी। ऐसी स्थिति में मैं तुम्हें मेहर की रकम अदा करूंगा और इस निकाह को खारिज़ समझूंगा।”

उपरोक्त निकाहनामा ठीक वैसा ही है जैसा कोई भी लड़की शादी से पहले अपने नाम लिखवाना चाहेगी। कुछ दिनों के बाद पूनो बीबी का पति उसे छोड़कर चला गया। अदालत में पूनो बीबी ने अपने निकाहनामे को आधार बनाकर अपने पति की चालीस रुपये माहवार की तनख्वाह और 568 रुपये की बचत पर अपना दावा पेश किया। पति के वकील ने सुनवाई में कहा कि पूनो बीबी का दावा सार्वजनिक नीति के विरूद्ध था और इसे अदा करने पर पुक्स पख्श की हालत एक दास की तरह हो जायेगी। अदालत ने इस दलील को न मानते हुए पति को दस रुपये

माहवार गुज़ारा भत्ता अदा करने का फ़ैसला सुनाया।

इस केस के ज़रिये मैं यह समझाने की कोशिश कर रही हूं कि इस्लामी कानून किस प्रकार महिलाओं की सुरक्षा करता है जबकि हिंदू अथवा अंग्रेज़ी कानूनी व्यवस्था मे यह सुरक्षा निहित नहीं है। पर अफ़सोस यह है कि 1985 के शाहबानो केस व और *मुसलमान महिलाओं की सुरक्षा कानून 1986* के बनने के बाद मीडिया ने हमेशा यह दर्शाया है कि शरियत कानून में औरतों का कोई हक़ नहीं होते। इसके अलावा यह भी कहा जाता रहा है कि तलाक़ के तीन महीने के बाद मुसलमान महिला कोई भी गुज़ारा खर्च पाने का हक़ नहीं रखती और इस लिहाज़ से उसकी सुरक्षा हिन्दू महिला की तुलना में नगण्य है।

इसके साथ-साथ हम सामुदायिक नेताओं द्वारा मुसलमान महिलाओं के अधिकारों के हनन के किस्से रोज़ाना सुनते रहते हैं। उदाहरण के लिए इमराना के मामले को सनसनीखेज़ बनाते हुए मीडिया में यह दिखाया गया कि शरियत के अनुसार ससुर द्वारा बलात्कार किए जाने के बाद इमराना का अपने पति के साथ कोई भी संबंध नहीं हो सकता।

इस प्रकार की नकारात्मक घटनाओं को सुनकर हम इस बात को बिल्कुल भुला देते हैं कि कई मुसलमान महिलाओं ने अदालत में अपने हक़ के लिए संघर्ष किया है और महत्वपूर्ण अधिकार पाए हैं। ऐसा लगता है कि *शाहबानो केस* के बाद मुसलमान महिलाओं ने अदालत का दरवाज़ा छोड़कर काज़ी के पास जाकर 'खुला' की रज़ामंदी हासिल करनी शुरू की है जिसके लिए उन्हें अपनी मेहर की रकम और बच्चों की हिरासत का अधिकार गंवाना पड़ता है।

इस प्रकार की चयनात्मक रिर्पोटिंग जिसमें साम्प्रदायिकता का पुट हो मुसलमान महिलाओं के अधिकारों की तोड़ी-मरोड़ी तस्वीर प्रस्तुत करती है। उदाहरण के लिए अधिकांश लोग इस बात से अनजान हैं कि *2001 दानियल लतीफी बनाम भारत सरकार* मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इद्दत की अवधि के दौरान गुज़ारा खर्चा व जीवन भर के लिए एक अच्छी-खासी रकम पाने के अधिकार को जायज़ मानते हुए महिला के पक्ष में फ़ैसला सुनाया। इस निर्णय के कारण उस महिला को अपने गुज़ारे के लिए एक बड़ी रकम मिली। हिन्दू महिलाओं के पास इस तरह का खर्चा पाने का कोई अधिकार नहीं होता। 1986 के फ़ैसले के बाद हर वर्ष बड़ी संख्या में मुसलमान औरतें इस अधिकार को पाने के लिए अदालत तक जाती हैं। अदालत ने इस फ़ैसले की संवैधानिक वैधता को कायम रखते हुए तलाक़शुदा मुसलमान महिला के आर्थिक अधिकारों के इर्द-गिर्द फैली अस्पष्टता को मिटाकर उन्हें एक ठोस आधार प्रदान कर दिया। परन्तु विडम्बना यह है कि मीडिया व धर्म-निरपेक्ष मानवाधिकारियों, महिला अधिकार कार्यकर्ताओं व वकीलों ने इस अहम फ़ैसले को नज़रअंदाज़ करते हुए तलाक़शुदा मुसलमान महिलाओं के पास अधिकार न होने की बहस जारी रखी।

2002 के एक अन्य मामले, *शमीम आरा केस* में सर्वोच्च न्यायालय ने तेहरा तलाक़ को अवैध करार देते हुए फ़ैसला सुनाया कि कुरान के अनुसार तलाक़ सार्वजनिक तौर पर दिया जाना चाहिए और ऐसा करने से पहले मध्यस्थता ज़रूरी है। इस नियम के पहले अक्सर ऐसा होता था कि गुज़ारा खर्च के लिए अर्ज़ी डालने पर पुरुष कोर्ट में तलाक़ के दस्तावेज़ दाखिल कर देते थे जिससे उनको खर्चा न देना पड़े। अब ऐसा करना संभव नहीं था क्योंकि उच्च व सर्वोच्च न्यायालयों ने इस प्रकार के दस्तावेज़ों को मान्यता देने से इंकार कर दिया और पतियों को गुज़ारा भत्ता देने के आदेश जारी कर दिए हैं। इस मुद्दे पर हमारे सामने अदालत द्वारा पारित किए गए कई फ़ैसले मौजूद हैं।

इन सब बातों के बावजूद आम धारणा यही है कि मुसलमान महिलाओं के पास अधिकारों का बहुत अभाव है। अफ़सोस तो इस बात का भी है कि न सिर्फ़ पति बल्कि सामाजिक कार्यकर्ता, महिला अधिकार वकील, सत्र अदालत के न्यायाधीश आदि भी इसी पूर्वग्रह से ग्रस्त हैं। इसी सबको ध्यान में रखते हुए मैं यह दोहराना चाहती हूं कि अनभिज्ञता के कारण काफी औरतें अपने ज़ायज़ अधिकारों को पाने से वंचित रह जाती हैं। इसलिए ज़रूरी है कि हम मुसलमान महिलाओं के अधिकारों को लेकर अपनी समझ को पुख्ता करें और पूर्वग्रहों को पीछे छोड़कर आगे बढ़ें। जब तक हम ऐसा नहीं करते मुसलमान महिलाएं अपने हक़ों को खोकर मुफ़्लिसी और असमानता से जूझती रहेंगी।

फ्लेविया एग्निस *वकील व मजलिस संस्था की निदेशक हैं।*

लेख

जाति, वर्ग और पितृसत्ता के त्रिकोण में दलित महिला दमन

पद्मा वेलासकर

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि लिंग आधारित सत्ता संबंधों और महिला दमन को समझने के लिए समाज के सत्ता संदर्भों की समझ ज़रूरी है। भारतीय परिवेश में इसका अर्थ होगा, औरतों को अपने जन्म और सामाजीकरण से मिली जाति की समीक्षा के साथ-साथ उनकी पहचान और दर्जे को सांस्कृतिक और ढांचागत सच्चाइयों के माध्यम से समझना। महिलाओं के दमन की बात करते हुए पितृसत्तात्मक पुरुष प्रधान तंत्रों, मूल असमानताओं और सीढ़ीबद्धता को स्वीकारना। साथ ही दलित महिलाओं के दमन का विश्लेषण करते हुए जाति, वर्ग और पितृसत्ता के त्रिकोण, उससे उपजे आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक सत्ता संबंधों पर भी गौर करना।

इस लेख में सबसे पहले कुछ सैद्धांतिक मुद्दों को उठाया गया है जिससे दलित महिलाओं के सवालों की समझ साफ़ हो सके। इसके बाद दलित महिलाओं के दमन की विशेषता समझने के लिए जाति और पितृसत्ता के कुछ पहलुओं को जानने की कोशिश की गई है। और अंत में दलित नारीवादी आलोचनात्मक अध्ययन के महत्व पर ध्यान दिया गया है। यहां पर दलित शब्द का प्रयोग 'पूर्व अछूत जाति समुदायों' के लिए किया गया है।

दलित महिलाओं के दमन का सैद्धांतिक स्वरूप

शुरूआत में यह कहना ज़रूरी है कि हम ऐतिहासिक भौतिकवाद के पक्षधर हैं जो दमन से शुरू होता है और जिसमें इतिहास को विभिन्न समूहों के बीच बदलते सत्ता संबंधों से आंका जाता है। औरतों के संबंध में इसके मायने हैं - कि यौनिक दमन, आर्थिक शोषण व सामाजिक-सांस्कृतिक अधीनता असमान जेंडर संबंधों का स्रोत है। पर साथ ही यह भी सच है कि पुरुष प्रधान समाज में औरतों पर दबाव होता तो अवश्य है पर यह दबाव सब औरतों पर बराबर या एक तरह से काम नहीं करता। और इस ढांचे में भी औरतें पूरी तरह सत्ताहीन या पीड़ित नहीं होती। सभी औरतों को एक सामाजिक श्रेणी में डालना गलत होगा क्योंकि अलग-अलग सांस्कृतिक-सामाजिक परिस्थितियों से आई औरतों में फ़र्क़ होते हैं। भारतीय संदर्भ में सामाजिक ढांचे की तीन धुरियां वर्ग, जाति व पितृसत्ता जेंडर संबंधों व जातिय हिन्दू, शूद्र व दलित महिलाओं के दमन को समझने के लिए महत्वपूर्ण है।

इस लेख में दलित महिलाओं की ढांचागत और सांस्कृतिक स्थिति को समझने के लिए पारम्परिक सामाजिक ढांचे जिनमें जाति, अस्पर्शयता-पितृसत्ता निहित है को भी ध्यान में रखा गया है। साथ ही दलित अकादमिकों, के सीधे अनुभव तथा महाराष्ट्र की बौद्ध व मांग महिलाओं के अनुभव भी इसमें जोड़े गये हैं।

पारम्परिक समाज में जातिय पितृसत्ता के दलित महिलाओं पर प्रभाव और जाति, छूआछूत और

पितृसत्ता के ढांचे के परस्पर संबंध से हमें दलित महिलाओं की सामाजिकी व वैचारिक खासियत की समझ बनती है। जाति सीढ़ीबद्धता में दलित महिलाओं व पुरुषों की स्थिति में एक समानता होती है। इसके विपरीत ऊंची जाति की महिलाओं को अपनी जाति के कारण एक ऊंचा सामाजिक सांस्कृतिक दर्जा दिया जाता है। दलित स्त्री और पुरुष दोनों अपवित्र और दूषित करने वाले समझे जाते हैं। इस लिहाज़ से 'अछूत' स्त्री और पुरुषों में मानव प्रतिष्ठा और सामाजिक दर्जे में समानता होती है।

इसी तरह 'अछूत' पुरुष व स्त्री दोनों निम्न सेवा, अनादर और सांस्कृतिक रूप से नीच समझे जाने वाले काम करते हैं। यह काम समाज के लिए ज़रूरी तो होते हैं पर इन्हें कमतर और दूषित करने वाला माना जाता है। इन कामों से दलित महिलाओं की जाति भी आंकी जाती है। दलित महिलाएं सार्वजनिक उत्पादन ढांचे का एक अहम हिस्सा तो होती हैं पर सबसे निचले स्तर पर। ऊंची जाति की महिलाएं सार्वजनिक क्षेत्र से दूर, घर की चारदीवारी में सीमित रखी जाती हैं जहां वे घरेलू काम करती हैं। ये काम हालांकि सामाजिक तौर पर बंधे और उन्हें अलग रखने वाले होते हैं पर फिर भी ये महिमामंडित होते हैं। इसके अलावा ये महिलाएं उन घरों से ताल्लुक रखती हैं जिनका बोझ वाला प्रजनन का काम निम्न जाति के स्त्री-पुरुष के ज़िम्मे आता है।

यौनिकता का सांस्कृतिक मापदण्ड भी दलित जाति की महिलाओं के दमन का विशेष आयाम है। पितृसत्तात्मक ढांचे में औरतों की यौनिकता पर नियंत्रण और अधीनता को वैध करार दिया जाता है। निम्न जाति की महिलाओं के लिए पवित्रता और दूषित होने के मानदण्ड यौनिकता और विवाह के क्षेत्र तक जाते हैं। दलित महिला की यौनिकता स्वछंद और आसानी से उल्लंघन योग्य मानी जाती है। एक सार्वजनिक मज़दूर की भूमिका में उसे पुरुष नियंत्रण से आज़ाद समझा जाता है। ऊंची जाति और वर्ग की महिला की 'नियंत्रित' यौनिकता और ऊंची जाति के पुरुष की 'अनियंत्रित' यौनिकता को पितृसत्ता द्वारा जायज़ करार दिया जाता है। ऊंची जाति की 'देवी' के विपरीत 'अछूत' निम्न वर्ग की महिला की 'ढुलमुल' यौनिकता के शोषण को समाज में वैधता मिलती है। ऊंची जाति के पुरुष की इस सामाजिक ज़रूरत को निम्न जाति की स्त्री पूरा करती है।

'अछूत' वर्ग की महिलाओं के लिये उनके श्रम और काम की कीमत उत्पादन के ढांचे में उनके निचले दर्जे का महत्वपूर्ण सांस्कृतिक मानक है।

निम्न जाति के पुरुष और समुदाय की मर्दानगी को कुचलने के लिए इस वर्ग/जाति की औरत की यौनिकता का शोषण किया जाता है।

कुछ इसी तरह दलित महिला की यौनिकता, उर्वरता और श्रम पर घर की चौखट के भीतर भी अंकुश लगाया जाता है। उसके प्रजनन और घरेलू श्रम पर परिवार के साथ-साथ जाति का दबाव भी होता है। सार्वजनिक तौर पर मज़दूरी करने के बावजूद उन्हें परिवार के काम से राहत नहीं मिलती। हां, बाहर मज़दूरी करने से कुछ हद तक पारिवारिक पितृसत्ता से आज़ादी ज़रूर मिल जाती है। पारिवारिक संबंध खासतौर पर मातृत्व और भाईचारा, जाति की सार्वजनिक पितृसत्ता के ख़िलाफ़ दीवार का भी काम करते हैं। पर इसके साथ-साथ तलाक, पुनर्विवाह की आज़ादी के बावजूद शादी के संबंध में बंधी दलित स्त्री भी यौनिक चौकसी, हिंसा और यौनिक दमन को झेलती है।

इन सभी विश्लेषणों से दलित महिलाओं के दमन के विविध पहलू हमारे सामने आते हैं। सबसे पहला, जाति, वर्ग व लिंग आधारित दमन दलित महिलाओं के जीवन में अपना प्रभाव अलग-अलग और एक साथ मिलकर भी

पर दलित महिलाओं के लिए जाति-पितृसत्तात्मक दमन का स्वरूप ऊंची जाति की महिलाओं के शोषण से बिल्कुल अलग है। जाति, वर्ग और पितृसत्ता का त्रिकोण दलित महिलाओं के लिए दमन का एक बहुआयामी, तीव्र और सतत ढांचा तैयार करता है।

डालता है। उनके सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संबंधों का निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में अटूट रिश्ता है। जाति द्वारा जेंडर का इस्तेमाल दर्जा, सत्ता संबंध, सांस्कृतिक फ़र्क़ और निम्न जाति की महिलाओं का दमन स्थापित करने के लिए किया जाता है। जाति-छूआछूत का आर्थिक ढांचा मर्दों और औरतों का समान रूप से दमन करता है। अंततः इस लेख के माध्यम से मैं यह स्पष्ट करना चाहती हूं कि वर्ग और जाति के साथ मिलकर पितसृत्ता दलित महिलाओं के 'कम' या 'ज़्यादा' दमन के रास्ते ही नहीं खोलती बल्कि विशेषनात्मक रूप से एक अलग तरह के दमन को जन्म देती है, जिसमें ये तीनों समाहित होते हैं। इस फ़र्क़ की गहराई को समझना ही दलित नारीवादी अध्ययन की

ज़रूरत है। दलित जाति में जन्म लेने के कारण दलित महिला और पुरुष में एक स्तर पर समानताएं होती है, पर दूसरी ओर दलित महिला अनेकों स्तर पर दमन का शिकार होती है। इन सभी दमनकारी ढांचों के ख़िलाफ़ दलित महिला का संघर्ष एक व्यापक समझ गढ़ने की मांग करता है।

सारांशः जुही जैन

यह लेख पद्मा वेलासकर के अंग्रेज़ी लेख 'ऐट द इंटरसेक्शन ऑफ़ कास्ट, क्लास एंड पेटरिआरकीः ऐक्सप्लोरिंग दलित विमेंस ऑप्रैशन' का सारांश है। अंग्रेज़ी लेखः साभारः देशकाल प्रकाशन

हैरान हूं

रजनी तिलक

कौन है वो?

कॉफी होम में बैठ, खूब बतियाते हैं,
खेत-खलिहान, पर्यावरण पर
खूब लिखते हैं,

खेत में पैदा नहीं हुए
परन्तु उनकी गंध सूंघते हैं,
नारी की ज़िल्लत झेली नहीं
दलित उत्पीड़न सहा नहीं

पर
महसूस करते हैं जो भाव विभोर
मार्मिक कविताएं लिखते हैं

मैं हैरान हूँ-
उन्होंने हमारे दर्द
गीतों में पिरोए कैसे?

घरेलू हिंसा: महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन

विभूति पटेल

सन् 2009 के एक सर्वेक्षण से पता चला कि 42% महिलाएं अपने जीवनकाल में कम से कम एक बार शारीरिक या मनोवैज्ञानिक हिंसा झेलती हैं।

आई सी आर डब्ल्यू 2004

वयैक्तिक जीवन में होने वाली हिंसा में गर्भ-पूर्व लिंग जांच, बालिका शिशु हत्या, दहेज हत्या, जबरन बहुविवाह, पारिवारिक व्यभिचार, लड़कियों की खरीद-फरोख्त, गंभीर सामाजिक समस्याओं की श्रेणी में आती हैं।

माथुर 2004

भारतीय नारीवादियों के अनुसार पितृसत्ता के स्तंभ-परिवार, बंधुत्व व सामुदायिक संगठन, धार्मिक व सांस्कृतिक संस्थाएं व राज्य, जान-बूझकर, विधवा, तलाकशुदा व परित्यागता महिलाओं के दहन व उत्पीड़न को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से महिमा मंडित करते हैं। यह सभी हिंसाएं महिला की यौनिकता, उर्वरता, श्रम, सम्पत्ति व भूमि अधिकार पर नियंत्रण करने के साधन हैं। (लोहिया 1998)

परिचय

सीडब्ल्यूडीएस संस्थान द्वारा किए गए शोध के अनुसार हर घंटे, पांच महिलाएं घरेलू हिंसा का सामना करती हैं। अन्य अध्ययनों के अनुसार हर छः घंटे पर भारत में एक विवाहित महिला ज़िंदा जला दी जाती है या मारपीट के कारण मृत्यु या आत्महत्या का शिकार होती है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-2, के अनुसार भारत की हर पांचवी, विवाहित महिला पंद्रह वर्ष की उम्र से घरेलू हिंसा का शिकार होती है। 56% महिलाएं पति द्वारा मारपीट को वैध ठहराती हैं। 75% महिलाएं परिवार की इज़्ज़त की खातिर घरेलू हिंसा चुपचाप झेलती हैं।

घरेलू हिंसा में इन व्यवहारों को शामिल किया जा सकता है:

- नकारात्मक आलोचना व मौखिक हिंसा-चीखना, मज़ाक उड़ाना, इल्ज़ाम, गाली-गलौज व मौखिक धमकी।
- दबाव के तरीके- आर्थिक नियंत्रण, बात न करना, कार, फोन, बच्चे छीन लेना, दोस्तों, रिश्तेदारों से आपके बारे में झूठ बोलना, निर्णय न लेने देना, बात मानने को मजबूर करना।
- बेइज़्ज़ती-दूसरों के सामने नीचा दिखाना, बात पर ध्यान न देना, फोन काट देना, पैसा छीन लेना, घर के काम व बच्चों की देखभाल में मदद न करना।
- विश्वास तोड़ना-झूठ बोलना, जानकारी छिपाना, आवाजाही नियंत्रण, साझे वादे न निभाना।
- अकेला कर देना-फोन-दोस्त से मिलने, बाहर आने-जाने की मनाही।
- उत्पीड़न-पीछा करना, चिट्ठी पढ़ना, फोन सुनना, सार्वजनिक रूप से बेइज़्ज़त करना।

- धमकी-गुस्से, शारीरिक बल, चीखने, द्वारा डराना, चीज़ों को तोड़ना, बंदूक, चाकू दिखाकर आपको/बच्चों को मारने की धमकी।
- यौन हिंसा-जबरन समागम, यौन हिंसक व्यवहार।
- शारीरिक हिंसा-मारपीट, काटना, लातें-घूसें मारना, बाल खींचना, धक्का-मुक्की, गला घोंटना, जलाना।
- मनाही-रोना-धोना और माफी मांगना, हिंसा दोबारा न करने या हिंसा उकसाने का आरोप, दूसरों के सामने नर्मी से पेश आना।

घरेलू हिंसा कानून 2005 के अनुसार घरेलू हिंसा की परिभाषा में निम्न व्यवहार शामिल हैं

- स्वास्थ्य, सुरक्षा, जीवन, शरीर व कुशलता को नुक्सान या चोट पहुंचाना, शारीरिक, मानसिक शोषण, यौन मौखिक, भावनात्मक, आर्थिक हिंसा।
- आपको या आपके जानकारों को कोई भी गैर कानूनी मांग दहेज, सम्पत्ति या कीमती वस्तु देने के लिए उत्पीड़न, चोट, नुक्सान, धमकी वाला व्यवहार।
- आपको व आपके रिश्तेदारों को तकलीफ पहुंचाने वाले उपर्युक्त व्यवहार या शारीरिक-मानसिक हिंसा व चोट पहुंचाने वाले व्यवहार।

घरेलू हिंसा मामलों में राज्यों के आंकड़े निम्न हैं-

बिहार	59% ग्रामीण / 63% शहरी
राजस्थान	46.3%
मध्यप्रदेश	45.8%
मणिपुर	43.9%
उत्तरप्रदेश	42.4%
तमिलनाडु	41.9%
पश्चिमी बंगाल	40.3%
हिमाचल प्रदेश	6%

धर्म के अनुपात में निम्न महिलाएं घरेलू हिंसा सहती हैं

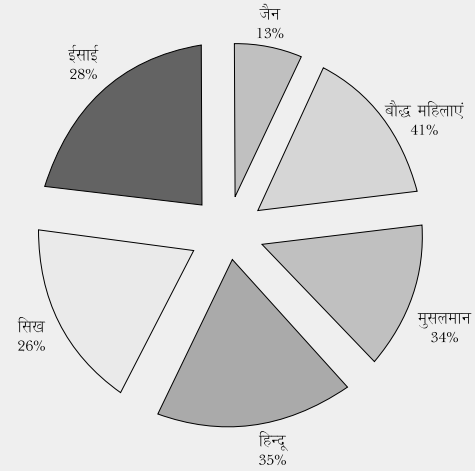

भारत में घरेलू हिंसा

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-III के आंकड़ों के अनुसार:

- 55% भारतीय महिलाएं व लगभग 50% पुरुष पत्नियों के साथ मारपीट को सही मानते हैं।
- 40% महिलाओं ने अपने विवाहित जीवनकाल में घरेलू हिंसा का सहा है।
- अट्ठाइस राज्यों की सवा लाख महिलाओं में से एक तिहाई ने स्वीकारा कि कम से कम एक बार उन्होंने पति के धक्का, झिझोड़ना, शारीरिक हिंसा व थप्पड़ मारे जाने वाले व्यवहार सहे हैं।
- 34% महिलाओं को थप्पड़ मारा गया है, 15% के बाल खींचे या बांह मरोड़ी गई, 14% के ऊपर चीज़ें फेंकी गई हैं।
- 62% ने शादी के दो वर्षों के भीतर शारीरिक-यौनिक हिंसा झेली है।

- 10% महिलाओं ने वैवाहिक बलात्कार की बात की।
- केवल 20% महिलाओं ने घरेलू हिंसा में पुलिस की मदद ली।
- 75000 पुरुषों में से 51% ने पत्नियों के साथ मारपीट को सही ठहराया।

विडम्बना यह है कि अधिकांश महिलाएं घरेलू हिंसा को सही ठहराती हैं तथा पुरुषों को यह सीख दी जाती है कि हुकुम-अदूली करने पर हिंसा की जा सकती है। इस सामाजिक सोच के कारण घरेलू हिंसा को अपराध की तरह नहीं देखा जाता।

भारतीय संविधान ने महिलाओं को घरेलू हिंसा को चुनौती देने के लिए निम्न मूलभूत अधिकार प्रदान किए हैं:

अनुच्छेद 14 - राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक स्तर पर पुरुषों व महिलाओं को समान अधिकार व अवसर

अनुच्छेद 15 - लैंगिक, धार्मिक, जाति आधारित भेदभाव पर प्रतिबंध

अनुच्छेद 15 (ई) महिलाओं के लिए सकारात्मक कदम उठाने का राज्य दायित्व

अनुच्छेद 15 - सार्वजनिक नियुक्तियों में समान अवसर

महिलाओं की सुरक्षा व घरेलू हिंसा कानून की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1983 में घरेलू हिंसा का अपराध माना गया और भारतीय दंड संहिता के अनुच्छेद 498ए में इसका उल्लेख किया गया। इस कानून के तहत पति व परिवार की ओर से विवाहित महिला के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार घरेलू हिंसा के दायरे में माना गया। इनमें महिला को आत्महत्या के लिए मजबूर करना, जीवन, शरीर, स्वास्थ्य को चोट पहुंचाने वाले व्यवहार, सम्पत्ति, धन के लालच में उत्पीड़न तथा धन या जायदाद न देने की सूरत में की गई हिंसा को 'क्रूरता', मानते हुए घरेलू हिंसा को अपराध स्वीकारा गया।

'क्रूरता' की परिभाषा में खाना न देना, यौन हिंसा, घर से बाहर निकालना, मानसिक प्रताड़ना, शारीरिक, मौखिक उत्पीड़न, तलाक की धमकी, बच्चों से न मिलने देना, सामाजिक आवाजाही पर रोक व गाली गलौज शामिल किए गए। इस कानून में महिला को **'विवाहित घर'** में अपने पति व बच्चों के साथ रहने का हक़ दिया गया। अगर महिला को घर से बाहर निकलने पर मजबूर किया जा रहा हो तो वह अदालत से सुरक्षा आदेश हासिल कर सकती थी।

अनुच्छेद 498ए-दहेज के लिए उत्पीड़न को भी घरेलू हिंसा के रूप में अपराध मानता है। अगर विवाह के सात वर्षों के अन्दर महिला की 'अप्राकृतिक मृत्यु' हो जाती है तो उसे दहेज-हत्या माना जाएगा और उसके लिए सात वर्ष कैद की सज़ा दी जा सकती है। दहेज उत्पीड़न के कारण आत्महत्या के लिए धारा 306 व दहेज हिंसा से मृत्यु के लिए धारा 304ब के तहत कार्यवाई की जा सकती है। इन हालातों में पति व ससुराल वालों को अपनी बेगुनाही साबित करनी होगी।

घरेलू हिंसा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा **वैवाहिक बलात्कार** भी है। परन्तु भारत में वैवाहिक बलात्कार अपराध नहीं माना जाता। पर अप्राकृतिक यौन संबंधों या नाजायज़ यौन मांगों को 'क्रूरता' मानते हुए तलाक का आधार माना जा सकता है। यद्यपि कानूनी रूप से अलग रह रही महिला के साथ उसका पति जबरन समागम नहीं कर सकता और इसके विरुद्ध धारा 376ए के तहत कार्यवाई की जा सकती है।

घरेलू हिंसा रोकने के लिए महिला क्या कर सकती है?

एक तरीका तो यह है कि मजिस्ट्रेट से महिला 'अच्छे व्यवहार का अनुबंध' जारी करवाने का प्रयास करे जिससे पति को हिंसा बंद करने का आदेश दिया जाएगा। पति को रुपए या जायदाद के रूप में एक-मुश्त गारंटी भी जमा करनी होगी जो आदेश का उल्लंघन करने पर जब्त की

जा सकती है। *घरेलू हिंसा कानून 2005* के तहत महिला के पास रिहाइशी अधिकार सुरक्षित हैं जिनके आदेशार्थ मजिस्ट्रेट या सुरक्षा अधिकारी मदद करेंगे।

घरेलू हिंसा के मामले में महिलाएं नागरिक व फौजदारी, दोनों कानूनों की मदद ले सकती हैं।

घरेलू हिंसा कानूनों का क्रियान्वयन

महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए राज्यों को कानूनों के क्रियान्वयन पर विशेष ध्यान देना होगा। इस दिशा में निम्न महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने चाहिए:

- राज्य व केन्द्र स्तर पर वैधानिक अधिकारियों की नियुक्ति
- कानूनों के क्रियान्वयन के लिए नीतियां व दिशानिर्देश
- महिला संबंधी आंकड़ों का एकत्रण व नवीनीकरण
- समय-समय पर कानूनों की उपयोगिता की समीक्षा
- वैधानिक अधिकारियों जैसे प्रशासक, पुलिस, स्वास्थ्यकर्मी परामर्शदाताओं का प्रशिक्षण व कौशल विकास
- कम खर्चीली, सीधी-साधी व अल्पकालीन कानूनी प्रक्रियाओं का परिचय

दिलासा क्राईसिस सेंटर

स्वास्थ्य प्रणाली को घरेलू हिंसा व महिलाओं के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए मुंबई की एक स्वयंसेवी संस्था, *सेहत व बृहन् मुंबई नगरपालिका* के सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग ने *के.बी. भामा अस्पताल* में 'दिलासा' की शुरूआत की है। 'दिलासा' का मानना है कि एक सुरक्षित घर व जीवन हर महिला का मूल अधिकार है तथा घरेलू हिंसा के लिए कोई भी कारण उचित नहीं हो सकता। इस कार्यक्रम का लक्ष्य है घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं को सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सहयोग, परामर्श, अस्थाई आश्रय व कानूनी मदद प्रदान करना। साथ ही स्वास्थ्यकर्मियों को संवेदनशील व स्नेहपूर्ण व्यवहार व सलाह का प्रशिक्षण देना। 'दिलासा' कार्यक्रम से जुड़ने वाली महिलाओं की मदद के लिए अन्य संगठनों, कानूनी संस्थाओं, पुलिस व सहयोगियों के साथ भी सम्पर्क रखा जाता है।

- सरकारी व गैर-सरकारी स्रोतों द्वारा महिलाओं के लिए उपलब्ध सहयोग सेवाओं की जानकारी बढ़ाना
- सभी वैधानिक, कानूनी, नीति निर्धारण, नियुक्तियों में महिलाओं की भागीदारी
- बहु-संस्था व अंतर-संगठन कार्यप्रणालियों को प्रोत्साहन
- वैधानिक-कानून संगठनों के सुचारु कार्य के लिए उपयुक्त बजट का आबंटन
- केंद्रीय अधिकारी द्वारा आय-खर्चों की नियमित निगरानी व संसद में प्रस्तुति

सारांश

बच्चों, महिलाओं व बुजुर्ग स्त्रियों को घरेलू हिंसा से सुरक्षित रखने व उनके मानव अधिकारों को स्थापित करने के लिए सकारात्मक प्रयासों की आवश्यकता है। इन प्रयासों द्वारा निम्न ज़रूरतों को संबोधित किया जाना दीर्घकालीन सुरक्षा के लिए ज़रूरी है।

- महिलाओं की आर्थिक सुरक्षा, जायदाद, रुपए-पैसे संबंधी साधनों तक पहुंच व नियंत्रण को बढ़ाना।
- प्रशिक्षण व संवेदनशीलता कार्यक्रमों का विकास जिससे स्वास्थ्यकर्मी, न्यायपालिका, परामर्शदाता, पुलिस व अन्य सहयोगी सेवा प्रदान करने वाले अपना दायित्व समझें।
- सरकारी अस्पतालों में घरेलू हिंसा से निपटने के लिए विशेष प्रबन्ध।
- घरेलू हिंसा के प्रति सार्वजनिक चेतना व दायित्व बढ़ाने के लिए रेडियो, अखबार, पत्रिका, टेलिविज़न व अन्य मीडिया साधनों का उपयोग।
- हिंसा करने वाले पुरुषों के लिए विशेष सुधार व सहयोगी कार्यक्रमों का विकास।
- शिक्षा के माध्यम से घरेलू हिंसा रोकने पर ज़ोर।

घरेलू हिंसा की रोकथाम के लिए समाज के मानकों व मूल्यों में परिवर्तन होना ज़रूरी है। जब तक संघर्ष के निपटारे के लिए हिंसा का रास्ता अपनाया जाता रहेगा समाज में बदलाव नहीं आ सकता। महिलाओं के प्रति भेदभाव व पारम्परिक नज़रियों में परिवर्तन आने पर ही घरेलू हिंसा को जड़ से मिटाया जा सकता है।

औरतों का है यह अधिकार हिंसा–मुक्त हो घर–परिवार

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण कानून, 2005

महिला आन्दोलन ने पिछले 35 सालों में घरेलू हिंसा पर चुप्पी और उसकी सामाजिक मान्यता को चुनौती दी है। आज परिवार में हिंसा–मुक्त जीवन जीने का कानूनी अधिकार हम महिलाएं इस दीवानी (सिविल) कानून के रूप में हासिल कर पाई हैं।

घरेलू हिंसा क्या है?

इस कानून के अंतर्गत घरेलू हिंसा की परिभाषा के तहत वो हिंसा शामिल है जो घरेलू रिश्तों में किसी भी महिला के स्वास्थ्य, सुरक्षा, हित, जीवन, शारीरिक अंग को चोट या मानसिक रूप से हानि पहुंचाती हो। दहेज या अन्य सम्पत्ति की मांग भी इस कानून के तहत दण्डनीय है।

घरेलू रिश्ता क्या है?

ऐसे दो व्यक्ति जो साझे घर में रहते हों या किसी भी समय रहे हों। इनके बीच चाहे खून का रिश्ता हो (मां, बहने, बेटी, एकल महिला, पत्नी), विवाह या विवाह जैसे सम्बन्ध हो, दत्तक बच्चा (गोद लिया हुआ) या संयुक्त परिवार के सदस्य के रूप में रहते आये हों या रहे हों।

हिंसा के प्रकार

1. शारीरिक हिंसा
   - बल का प्रयोग करना (मारपीट करना, ढकेलना इत्यादि)
   - शारीरिक अंग या स्वास्थ्य को हानि पहुंचाना
2. यौनिक हिंसा
   - जबरदस्ती शारीरिक संबंध बनाना, चाहे विवाहित हो या अविवाहित
   - जबरदस्ती अश्लील फिल्में या तस्वीरें दिखाना
   - ऐसा कोई भी यौनिक व्यवहार जो महिला के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाता हो या बेइज्जत करता हो
3. भावनात्मक, मानसिक हिंसा या मौखिक हिंसा
   - ताने देना, फब्ती कसना या तिरस्कार करना मुख्य रूप से संतान या खासकर पुत्र न होने के संबंध में उसका अपमान करना व मज़ाक उड़ाना
   - महिला के परिचित दोस्त और रिश्तेदारों को हानि पहुंचाने की धमकी देना
4. आर्थिक हिंसा
   - महिला और बच्चों के पालन पोषण के लिए खर्चा न देना
   - अगर किराये के घर पर रह रहे हैं तो घर का किराया न देना
   - महिला के रोजगार पर रोक लगाना या उसमें रुकावट डालना

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण कानून, 2005 के तहत महिला इन मुख्य आदेश व राहत प्राप्त कर सकती है

- हिंसा पीड़ित महिला की मजिस्ट्रेट के सामने सुनवाई के बाद मजिस्ट्रेट की ओर से सुरक्षा आदेश जारी होंगे। हिंसाकर्ता पर रोक लगाई जाएगी कि वह कोई हिंसात्मक व्यवहार महिला के साथ न करे, चाहे घर में हो या कार्यस्थल पर हो व किसी भी माध्यम से महिला को सम्पर्क करने की कोशिश न करें।
- शिकायतकर्ता को महिला के संयुक्त परिवार में रहने का अधिकार के आदेश पर हिंसाकर्ता को महिला से मिलने या संपर्क के प्रयास पर रोक लगाई जा सकती है। गम्भीर स्थिति में हिंसाकर्ता को सांझे घर से हटने का आदेश भी दे सकते हैं।
- आर्थिक राहत के तहत आजीविका, शारीरिक व मानसिक और सम्पत्ति में हुई हानियों की भरपाई, दवा का खर्च, व प्रतिमाह के खर्चों के आदेश हो सकते हैं।
- 18 साल से कम उम्र के बच्चों को मां के साथ सुरक्षित रहने का आदेश मिल सकता है (अगर मां चाहे)। स्थिति के अनुसार मजिस्ट्रेट यह तय करेंगे कि हिंसाकर्ता समय–समय पर बच्चों से मिल सकते हैं या नहीं।

औरतों ने अब यह ठाना है
हिंसा–मुक्त जीवन पाना है।

जागोरी JAGORI

सम्पर्क करें: जागोरी, बी–114 शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली–110017
फोन नं: 26691219, 26691220, फैक्स: 26691221
E-mail: helpline@jagori.org, Website: www.jagori.org

आपराधिक क़ानून संशोधन अधिनियम 2013

कुछ प्रमुख अंश

परिचय: पिछले कई वर्षों से आपराधिक कानून में सुधार लाने की बात की जा रही है। 16 दिसम्बर 2012 के हादसे ने इस मांग को और अधिक मुखर कर दिया जिसके फलस्वरूप वर्मा आयोग के सुझावों को मद्देनजर रखते हुए संसद ने 4 अप्रैल 2013 में इस कानून में संशोधन को मंजूरी देते हुए इसे लागू करने का आदेश जारी किया। इस सुधार अधिनियम ने आपराधिक कानून की प्रमुख धाराओं में बदलाव किए जिनका उल्लेख नीचे किया गया है।

भारतीय दंड संहिता में विशेष संशोधन

एस. 326ए—तेजाबी हमला/क्षयकारी पदार्थ से हमला

तेजाब या अन्य क्षयकारी पदार्थ फेंककर चोट, नुकसान या विकृत करने के इरादे से किये गये हमले में दोषी को दस साल की सजा अथवा जुर्माना सहित उम्र कैद की सजा दी जा सकती है। जुर्माने की रकम पीड़िता को पहुंचे नुकसान की भरपाई/चिकित्सीय सेवाओं के अनुकूल तय की जाएगी।

एस. 326बी—तेजाबी हमले का प्रयास

तेजाब या अन्य क्षयकारी पदार्थ से हमले की कोशिश के लिए कम से कम पांच और अधिक से अधिक सात वर्ष की कठोर सज़ा का प्रावधान।

एस. 354ए—यौन उत्पीड़न

निम्न में से किसी भी कारवाई को यौन उत्पीड़न समझा जाएगा:
- अनचाहा शारीरिक स्पर्श
- यौन प्रस्ताव/मांग
- अश्लील साहित्य/फोटो/पोर्नोग्राफिक सामग्री दिखाना
- यौन अर्थ वाले जुमले, संकेत, लतीफे

इन सभी अपराधों के लिए एक वर्ष की कैद का प्रावधान किया गया है।

एस. 354बी—निर्वस्त्र करने का प्रयास

किसी भी महिला को जबरदस्ती कपड़े उतारने या निर्वस्त्र होने को बाध्य करने के जुर्म की सजा एक से तीन वर्ष, जुर्माना सहित दी जा सकती है। इस सज़ा को मामले की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए कम से कम तीन और अधिक से अधिक सात वर्ष, जुर्माना सहित बढ़ाया जा सकता है।

एस. 354सी—दर्शनरति (व्यायरिज़्म)

'निजी' गतिविधि करती हुए महिला को उसकी जानकारी के बगैर की घर, सार्वजनिक शौचालय, एकांत जगहों पर देखने या कैमरे में फोटो खींचने पर, जहां उसे देखे जाने की उम्मीद न हो, के लिए जुर्माना सहित एक से तीन वर्ष सज़ा का प्रावधान है। अपराध साबित हो जाने पर सज़ा को सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। इस तरह की निजी गतिविधि के फोटो या चित्रों का वितरण भी अपराध की श्रेणी में आएगा।

एस. 354डी—स्टॉकिंग

किसी महिला का जबरन पीछा करना या उसे परेशान करने की कोशिश, खुलेआम, छिपकर या उसके फोन, इंटरनेट, ईमेल या अन्य संचार उपकरणों की ताका झांकी को अपराध की श्रेणी में शामिल किया गया है। जुर्म की रोकथाम

या कानूनी कार्रवाई अथवा किसी जायज कारण का उल्लेख किये बगैर इस तरह की कोई भी गतिविधि अपराध मानी जायगी जिसके लिए 3 से 5 वर्ष तक सजा या कैद, जुर्माना सहित दिये जाने का प्रावधान है।

एस. 376डी—बलात्कार

बलात्कार की परिभाषा को व्यापक बनाते हुए इसमें निम्न भी जोड़े गये हैं। अगर कोई पुरुष

- महिला के गुह्य, योनि, गुदा या मूत्रमार्ग में कोई वस्तु या शरीर का अंग डालता है या उसकी इजाजत के बिना जबरदस्ती उसे आने या किसी अन्य के साथ ऐसा करने को मजबूर करता है;
- अपना मुंह उसके मुंह, योनी, गुदा, मूत्रमार्ग पर लगाता है या किसी अन्य के साथ लगाने को बाध्य करता है; या।
- उसके शरीर में कुछ जबरन घुसेड़ने या किसी अन्य के साथ ऐसी कोई हरकत करने या करवाने को बाध्य करता है; या।
- अगर महिला की उम्र 18 वर्ष से कम हो; या।
- अगर उसकी मर्जी/सहमति "अस्पष्ट" हो तो इसे बलात्कार माना जाएगा।

कई परिस्थितियों में सहमति "अस्पष्ट" हो सकती है उदाहरण के लिए – नशे की हालत में, बेहोशी, दवा के असर या कोमा की हालत में, धमकी या डर की हालत में, या अगर महिला यह नहीं समझ पाती कि वह किस बात की सहमति दे रही है (भाषा न आने पर, मानसिक कमजोरी, विकलांगता, अक्षमता या पागलपन में)।

इस श्रेणी के अपराध की सजा जुर्माने के साथ 7 वर्ष से लेकर उम्रकैद तक हो सकती है। इस अपराध में शारीरिक तौरोध की कमी या अभाव को सहमति नहीं समझा जा सकता। 'पेनिट्रेशन' किस हद तक किया गया इस बात का अपराध से कोई संबंध नहीं होगा, छोटे से छोटा या कम से कम 'पेनिट्रेशन' अपराध की श्रेणी में शामिल किया जाएगा।

एस. 376(2)— संगीन बलात्कार

अभी तक संगीन बलात्कार की श्रेणी में हिरासत में बलात्कार, पुलिसकर्मी, सेनाकर्मी, संस्थानों के आधिकारिक पदाधिकारी, वर्दीधारी पुरुष द्वारा बलात्कार शामिल किये जाते थे। अब इसमें ऐसे बलात्कार मामलों को भी शामिल किया गया है जिसके परिणाम स्वरूप महिला मानसिक अक्षमता या शारीरिक विकलांगता का सामना कर रही हो। संशोधन के बाद निम्न परिस्थितियों में कम से कम सात वर्ष की सजा का प्रावधान किया गया है।

- सहमति देने में अशक्त महिला के साथ बलात्कार;
- आधिकारिक पद पर आसीन व्यक्ति द्वारा बलात्कार;
- एक ही महिला के साथ बार-बार बलात्कार;
- बलात्कार जिसके परिणाम स्वरूप महिला शारीरिक रूप से विकलांग या मानसिक तौर पर अशक्त हो गई हो उसको गंभीर चोटें आई हों;
- गर्भवती महिला के साथ बलात्कार;
- सोलह वर्ष से कम उम्र की लड़की के साथ बलात्कार;
- साम्प्रदायिक हिंसा के दौरान बलात्कार।

एस. 376ए— मृत्यु या निष्क्रिय अवस्था में पहुंचाने के अपराध की सज़ा

इस खण्ड के अनुसार पीड़िता की मृत्यु हो जाने पर या उसे हमेशा के लिए निष्क्रिय अवस्था में पहुंचाने के अपराध के लिए आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड का प्रावधान किया गया है।

एस. 376सी— हिरासत में बलात्कार

अधिकारिक पद का दुरुपयोग कर महिला को यौन संबंध के लिए मजबूर करने, (जो ऐसे दर्शाया जाए जैसे सहमति के साथ बनाया रिश्ता हो) पर कम से कम पांच और अधिकतम दस वर्ष की सज़ा दी जा सकती है।

एस. 376डी—सामूहिक बलात्कार

सामूहिक बलात्कार की सज़ा दस साल से बढ़ाकर बीस वर्ष कर दी गई है।

एस. 376ई—आदतन अपराधी की सज़ा

सामूहिक बलात्कार की सज़ा काट चुके व्यक्ति को दोबारा अपराध करने पर उम्र कैद या मृत्युदण्ड की सज़ा का प्रावधान किया गया है।

अपराध प्रक्रिया संहिता में संशोधन

एस. 54—आरोपी की शिनाख्त

अगर आरोपी की शिनाख्त करने वाला व्यक्ति मानसिक या शारीरिक रूप से अक्षम या विकलांग है तो यह प्रक्रिया— न्यायिक मजिस्ट्रेट की निगरानी में की जाएगी अथवा वीडियोग्राफी के ज़रिए की जाएगी

एस. 154— बयान दर्ज करने की प्रक्रिया

पीड़िता महिला का बयान धारा एस 376/354/509 या इससे जुड़ी धाराओं के तहत महिला पुलिस आफ़सर अथवा महिला अधिकारी द्वारा दर्ज किया जायेगा।

अगर पीड़िता अस्थाई या स्थाई तौर पर मानसिक रूप से विकलांग है तो बयान

- वीडियोग्राफी के ज़रिए;
- पीड़िता महिला के आवास का ध्यान रखते हुए;
- एक विशिष्ट दुभाषिये या अनुवादक की मौजूदगी में दर्ज किया जाएगा।

एस. 309— सुनवाई

चार्जशीट दाखिल होने के दो माह के भीतर जहां तक संभव हो मामले की सुनवाई पूरी हो जानी चाहिए।

एस. 357बी— पीड़ित को मुआवज़ा

धारा एस 357 ए के अंतर्गत राज्य द्वारा दिये जाने वाले मुआवज़े के अतिरिक्त अपराधी को भारतीय दंड संहिता की धारा 326 ए 376 डी के तहत मुआवज़े की रकम अदा की जाएगी।

एस. 357सी—पीड़ित का इलाज/चिकित्सीय जांच

धारा 326 ए/376 के तहत दर्ज अपराधों के पीड़ितों को सरकारी व निजी सभी अस्पताल मुफ्त चिकित्सीय जांच/इलाज की सुविधा प्रदान करेंगे तथा किसी भी ऐसी वारदात की पुलिस को इत्तला करेंगे।

साभार: फ्लेविया एग्नेस, नजलिस मुंबई

भाग 2:

नीतियों व योजनाओं संबंधी जानकारी–

समुदाय से जुड़ी चुनिंदा सरकारी नितियों व

योजनाओं का विवरण व विशलेषण।

cPpks ds futh Ldwy esa lk<u ds vf/kdkj dk tkus

vkfFkZd :i ls fiNMs oxZ (bZ-MCkY;w-,l-) ds cPpks dk futh Ldwy esa lk<us dk vf/kdkj&

- f'k{kk dk vf/kdkj dkuwu 2009 ds rgr lHkh futh Ldwyksa dks vkfFkZd :i ls fiNMs oxZ (bZ-MCY;w-,l-) ds cPpks dks 25 प्रfr'kr nkf[kys nus gSA
- vkfFkZd :i ls fiNMs oxZ (bZ-MCY;w-,l-) mu cPpks dks ekuk tk,xk ftuds ekrk&firk dh lkykuk vk; 1 yk[k ls de gSA
- ;g 25 प्रfr'kr nkf[kys ,UVªhLrj ij ;kfu fd & uljh] ds th ;k d{kk 1 esa nus gSA
- bZ-MCkY;w-,l- ds Nk=ks ls dkbZ Hkh nkf[kys dh Qhl] lkykuk Qhl ;k dkbZ vU; प्रdkj dk QaM olwy ugha fd;k tk,xkA
- nkf[kys ds fy, vko';d nLrkost&

  1- ekrk&firk dh lkykuk vk; dk lcwr& ihyk@yky jk'ku dkMZ ;k rgflynkj }kjk tkjh vk; izek.k&i=
  2- cPps dh vk;q dk lcwr& cPps dk tUe izek.k&i= ;k ekrk&firk }kjk tkjh cPps dh vk;q dk izek.k&i=
  3- ?kj ds irs dk lcwr& jk'ku dkMZ@igpku i=@fctyh fcy@ikuh fcy@,e-Vh-,u-,y fcy
  4- Rkhu lky ls fnYyh esa jgus dk lcwr

- bZ-MCy-,l- dksVs ds rgr nkf[kys ds fy, ifjokj dh lkykuk vk; ,d yk[k ;k mlls de gksuh pkfg,
- bZ-MCY;w-,l- dksVs ds rgr nkf[kys ds fy, dkeu nkf[kyk QkeZ f'k{kk foHkkx dh oscklkbV vkj lHkh Ldwy esa fu%'kqYd miyC/k djk, x, gSA
  http://www.edudel.nic.in/upload_2013_14/ews_form_2013_14_dt_04012013.pdf
- bZ-MCy-,l- ds nkf[kys ds fy, Ldwy mu cPpks dks izkFkfedrk nsxk tks fd Ldwy ls ,d fdyks ehVj ls de dh nwjh ij jgrs gSA

- ;fn bZ-MCyw-,l- nkf[kys ds lEca/k esa dksbZ f'kdk;r gS rks vki fyf[kr esa viuk {ks= ds mi&funs'kd f'k{kk foHkkx dks dj ldrs gSa vkSj lkFk gh cky vf/kdkj laj{k.k vk;ksx dks Hkh dj ldrs gSaA

- fnYyh esa cky vf/kdkj laj{k.k vk;ksx dk irk& 5oha eafty] vkbZ ,l ch Vh fcfYMax] d'ehjh xsV Qksu& 01123862685@92@93

lwpuk dk vf/kdkj dkuwu 2005 ds rgr vki f'k{kk foHkkx ls bZ-MCyw-,l- nkf[kys ls lacaf/kr dksbZ Hkh tkudkjh ekax ldrs gSaA lwpuk ds vf/kdkj dh vthZ vki f'k{kk foHkkx ds tu lwpuk vf/kdkjh ds ikl tek dj ldrs gSaA f'k{kk dk vf/kdkj dkuwu 2009 dks tkusa]

cPpksa dks futh Ldwy esa fu%'kqYd i<k,aA

lEidZ o izdk'ku] lrdZ ukxfjd laxBu o tkx'kjh }kjk] Xykscy lQ lhfVt+ ikxkke] ;w ,u oeu]

fnYyh ds rgr ¼2012&13½

futh vLirkyks esa fu%'kqYd bykt djkus dk vf/kdkj

gkbZ dksVZ ds 22@3@2007 vkns'k ds vuqlkj&

1 ftu futh vLirkyksa dks ljdkj ls fj;k;rh njksa ij tehu feyh gS] mu vLirkyksa dks xjhcksa dks fu%'kqYd bykt miyC/k djkuk gksxkA fnYyh esa 38 futh vLirky gSa ftUgsa xjhc ejhtksa dks fu%'kqYd bykt miyC/k djkuk gSA

2 vkns'k ds vuqlkj 25 izfr'kr ckgjh ejhtksa ds fy, vkSj 10 izfr'kr vLirky ds vUnj ejhtksa dks fu%'kqYd bykt miyC/k djkuk gksxkA

3 xjhc ejhtksa ls fdlh Hkh izdkj dk nkf[kyk] cSM] nokbZ;ka] bykt ;k lthZjh dk 'kqYd ugh fy;k tk,xkA bykt ds nkSjku dkbZ Hkh [kpkZ ejhtksa ls ugha fy;k tk,xkA

4 vkns'k ds vuqlkj fu%'kqYd bykt ds fy, ejht+ dh ifjokfjd ekfld vk; ljdkj }kjk r; U;wure vdq'ky etnwjh ls de gksuh pkfg,A orZeku esa fu%'kqYd bykt ds fy, ejht+ dh ifjokfjd ekfld vk; # 7254 ls de gksuh pkfg, A

5 fu%'kqYd bykt ds fy, ejht+ dh ifjokfjd vk; dk dkbZ 1 lcwr pkfg,& ch-ih-,y- jk'ku dkMZ @vUrksn;k jk'ku dkMZ@vk; izek.k&i= tks fd ,l-Mh-,e-;k rgflynkj }kjk tkjh gksA ;fn ;g nLrkost ejht ds ikl ugh gS rks] ejht+ LoksLF; lsokvksa ds funs'kky; }kjk tkjh ijQkesZ ij Lo;a ?kks"k.kk i= ns ldrh@ldrk gSA

6 ;fn vLirky xjhc ejhtksa ls fdlh Hkh izdkj dk iSlk ysrk gS rks bls dksVZ ds vkns'k dk mYya?ku ekuk tk,xk vkSj vLirky ds f[kykQ+ dkjokbZ dh tk,xhA vLirky ds funs'kd vkSj vLirky ds VªLV ;k lkslkbVh ds lnL; dks bl mYya?ku ds fy, ftEesnkj Bgjk;k tk,xk vkSj mudss f[kykQ+ Hkh dkjokbZ dh tk,xhA

7 iR;sd futh vLirky esa 24 ?kaVs lgk;rk dsUnz miyC/k gksuk pkfg, tgka ij ljdkjh vLirky ls Hkstsa x;s ejhtksa dks vLirky esa nkf[kyk fnyokus esa enn dh tk,xhA lgk;rk dsUnz esa ftEesnkj O;fDr dk uke] VsfyQksu u0] bZ esy dk irk vkSj QSDl u0 iez[k txg ij lkoZtfud rjhds ls miyC/k gksuk pkfg,A

8 lkkjn'khrk lqfuf'pr djus ds fy, iR;sd vLirky miyC/k lqfo/kkvksa vkSj fu%'kqYd fcLrjksa dh nSfud fLFkfr dh tkudkjh n'kkZ,xkA blds bykok LokLF; foHkkx viuh osclkbV ij Hkh futh vLirkyksa esa fu%'kqYd fcLrjksa dh nSfud fLFkfr jkstkuk miyC/k djk;sxkA
http://health.delhigovt.nic.in/mis/(S(foukj4iu5jqthreiehk3korj))/frmlogin.aspx

9 lHkh og lqfo/kk,¡ vkj bykt tks iSls nsus okys ejhtksa dks vLirky miyC/k djkrk g\] og lkjh lqfo/kk,¡ xjhc ejhtksa dks Hkh nh tk,xhA

10 xjhc ejhtksa dks ljdkjh vLirky }kjk futh vLirkyksa esa LFkkukUrj.k fd;k tk ldrk gSA

11 38 futh vLirky ftUgsa xjhc ejhtksa dk fu%'kqYd bykt miyC/k djkuk g\] mudh lwph fuEu osclkbV ij miyC/k g\&
http://www.delhi.gov.in/wps/wcm/connect/DoIT_Health/health/related+links/information+regarding+free+treatment

lsdYiuk o iznk'ku] lrdZ ukxfjd laxBu o tkxksjh }kjk] Xykscy lsQ lhfVt+ ikxke] ;w ,u oheu]
fnYyh ds rgr ¼2012&13½

स्वच्छ रहन सहन सुरक्षा हमारी

महिलाओं की सुरक्षा में सबकी साझेदारी

साफ सफाई या स्वच्छता नागरिकों का बुनियादी हक होने के साथ उनकी प्राकृतिक ज़रूरत भी है। फिर चाहे वो स्वच्छता शौचालयों, गलियों, सड़कों या फिर नाला/नाली सफाई से जुड़ी हो। चूंकि आज भी पुरूषों की बजाय महिलाओं का ज़्यादा समय घरेलू कार्य व बच्चों की देखभाल के लिए घरों में बीतता हैं। इसलिए घर व परिवार के अन्य कार्यों में बच्चों, बुजुर्गों की देखभाल व उससे जुड़ी सफाई, घर–आंगन व घरों के आगे नाली की सफाई, कूड़ा इक्कटठा कर उसे कूड़ेदान में फेंकना, पानी भरना, खाना पकाने, कपड़े धोने, पीने के संयोजन व उनका प्रबंधन भी महिलाओं को ही करना पड़ता है। साथ ही पुर्नवासित कालोनियों में अधिकतर लोगों के व्यक्तिगत शौचालय नहीं होते इसलिए उन्हें सामूदायिक शौचालयौं या खुले स्थान का इस्तेमाल करना पड़ता है। ऐसे में पानी भरने की स्वच्छ जगह, साफ पानी, कूड़दानों, शौचालयों, जैसी महत्वपुर्ण सुविधाओं की कमी और असमानुपात का असर पुरूषों और लड़कों की अपेक्षा महिलाओं और लड़कियों की ज़िन्दगी पर अधिक पड़ता है।

हमारे समाज में जितने सारे वर्ग हैं उतनी ही सारी महिलाओं की ज़िम्मेारियां भी महिलाओं की झोली में डाली गई। जिसमें एक महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारी शिशु को दुनिया में लाना है। इसके अलावा घर में रोजमर्रा के कार्य, बच्चों बड़ों की सेवा व उनकी देखभाल महिलाओं की भिन्न भूमिकाओं को दर्शाती हैं। इन भूमिकाओं को आदमी व औरत के अलग–अलग काम का दर्जा देते हुए विभाजित किया गया है।

रात को शौचालय बंद हो जाने की वजह से जिनके पास व्यक्तिगत शौचालय नहीं हैं, उन्हें खुले में शौच के लिए जाना पड़ता है। पिछले कुछ समय से खुले में शौच करने की जगहें कम होती जा रही हैं।
महिलाएं ये स्थान केवल अंधेरे में इस्तेमाल करती हैं, और उन्हें अपने साथ किसी भी तरह की छेड़छाड़ या यौनिक शौषण हो जाने का डर बना रहता है। ये महिलाएं कभी अकेले नहीं जाती हैं ,किसी अन्य महिला या लड़की का साथ चाहती हैं। लंबे दौर में रोजमर्रा के जीवन में इस कारण स्वास्थ्य समस्याएं आती हैं क्योंकि अंधेरा होने तक वे अपनी इस बुनियादी ज़रूरत को दबा कर रखती हैं। गर्भवती और विकलांग महिलाओं को और भी ज़्यादा परेशानियों का सामना करना पड़ता है। ये ज़रूरतें ख़ासतौर से लड़कियों और महिलाओं , शारीरिक रूप से विशेष ज़रूरतमंद, गर्भवती महिलाओं , के मानसिक, प्रजनन स्वास्थ्य के साथ उनकी सुरक्षा को भी बुरी तरह प्रभावित करती हैं।

महिला सामुदायिक शौचालयों का डिजाईन ऐसा है जिसमें छत का हिस्सा खुला है। इन खुली छतों से लड़के और आदमी ताका– झांकी करते हैं। जब बड़ी संख्या में लड़के सामुदायिक शौचालय के आस पास मंडराते हैं तो महिलाएं और लड़कियां असहज महसूस करती और डरती हैं। कई जगह की महिलाओं को पस्रुषों वाले शौचालय में पानी लेने के लिए जाना पडत़ा है अंधेरे में घर वापसी के समय महिलाओं को परूी तरह से जोखिम उठाना पडत़ा है।

गर्भवती और विकलांग महिलाओं को और भी ज़्यादा परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इन महिलाओं के लिए पानी भरने या फिर शौच की लाईन में ज़्यादा देर तक खड़े रह पाना बहुत मुश्किल हो जाता है। पानी का भार उठाकर दूर तक चलना, उनके लिए ख़तरनाक साबित हो जाता है। गीले में कहीं फिसल ना जाएं या भीड़ में अब गिरी तब गिरी का भय हरदम दिमाग़ में बना रहता है। कूड़ेदान दूर होने व कूड़ेदानों की कमी की वजह से ज़्यादातर लोग कूड़ेदान का इस्तेमाल नहीं करते हैं। इसलिए कूड़े को सड़क के किनारे, कोनों में, खाली प्लॉटों में फेंक देते हैं। आसपास रहने वाले लोगों का कूड़े फेंकने वाले के साथ बहस या मारपीट भी हो जाती है। इस कारण महिलाएं और लड़कियों को इन सेवाओं की प्राप्ती के लिए बहुत ज़्यादा समय लग जाता हैं और पुरूषों व लड़कों की तरह पढाई, काम काज के मौकें भी नहीं ले पाती हैं।

lQkbZ dk vf/kdkj

- दिल्ली नगर निगम और दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड द्वारा झुग्गी झोपड़ी में सफाई की सुविधाऐं उपलब्ध कराई जाती है।
- सरकार की नीति के अनुसार एक सफाई कर्मचारी 200 झुग्गियों की सफाई के लिए उपलब्ध होना चाहिए।
- सरकार की नीति के अनुसार 1 किलो मीटर लम्बी नाली की सफाई के लिए एक सफाई कर्मचारी उपलब्ध होना चाहिए।
- आवश्यकता के अनुसार हर झुग्गी बस्ती में कूड़ेदान और ढलाव उपलब्ध होना चाहिए।
- दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड द्वारा झुग्गी झोपड़ी में शौचालय की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। नीति के अनुसार–
    - एक टॉयलेट सीट 25 लोगों को उपलब्ध कराई जाएगी।
    - एक स्नान घर 50 लोगों के लिए उपलब्ध कराया जाएगा।
- दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड द्वारा झुग्गी झोपड़ी में नालियों व फुटपाथ का कार्य कराया जा सकता है।
- प्रत्येक एम.एल.ए. को हर साल 4 करोड़ रूप्ये अपने क्षेत्र के विकास लिए मिलते हैं। एम.एल.ए. अपना फंड सफाई संम्बधित विकास कार्यों जैसै कि– शौचालय, नालियां व कूड़ाघर आदि बनवाने के लिए खर्च कर सकते हैं।
- यदि सफाई के संबन्ध में कोई शिकायत है तो आप लिखित में अपने क्षेत्र के दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड के अधिशाषी अभियन्ता को और अपने क्षेत्र के दिल्ली नगर निगम के उपायुक्त को कर सकते हैं। तथा अपने क्षेत्र के एम.एल.ए. को भी लिख सकते हैं।
- सूचना का अधिकार कानून 2005 के तहत आप दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड और दिल्ली नगर निगम से सफाई से संम्बधित कोई भी जानकारी मांग सकते हैं।
- सूचना के अधिकार की अर्जी आप जन सूचना अधिकारी के पास जमा कर सकते हैं।

विभाग का पता

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड दक्षिण ज़िला– किलोकरी, माहरानी बाग, रिंग रोड, नई दिल्ली दक्षिण दिल्ली नगर निगम, दक्षिण ज़ोन– ग्रीन पार्क, नई दिल्ली

Ikkuh dk vf/kdkj

- fnYyh ty ckM dh ftEenkjh g fd >Xxh >kiMh e fuk'kYd ikuh miyC/k djk;k tk, A
- >Xxh >kiMh e fnYyh ty ckM }kjk ikuh gkbMUV@uy o VUdjk }kjk miyC/k djk;k tkrk gA
- ljdkj dh uhfr d vuqlkj 50 ykxk d fy, 1 uy@ikuh dk L=kr miyC/k djk;xhA
- uhfr d vuqlkj >Xxh cLrh e iR;d ifjokj dk vyx dUkD'ku ugh fey xkA
- iR;d ,e-,y-,- dk gj lky 4 djkM :i; viu {k= d fodkl fy, feyr gA ble l 1 djkM dk oy ikuh dh leL;k dk nj dju d fy, feyr gA ,e-,y-,- viuk QM ikuh lcfU/kr fodkl dk;k tl fd& V;coy] ikbi] vkfn cuokus d fy, [kp dj ldr gA
- ;fn ikuh d lcU/k e dkb f'kdk;r gk rk vki (SMS) lnsk l f'kdk;r dj ldr g& DJB W fy[kdj 53030 ij Hkt A
- f'kdk;r Qku }kjk gYi ykbu u0& 01123538495 ij dj ldr gA
- ;fn ikuh d lEc/k e dkb f'kdk;r g rk vki fyf[kr e Hkh viu {k= d vf/k'kk"kh vfHk;Urk dk dj ldr gA rFkk viu {k= d ,e-,y-,- dk Hkh fy[k ldr gA
- lpuk dk vf/kdkj dkuu 2005 d rgr vki fnYyh ty ckM l lEcf/kr dkb Hkh tkudkjh ekx ldr gA
- lpuk d vf/kdkj dh v th vki tu lpuk vf/kdkjh d ikl tek dj ldr gA

foHkkx dk irk

fnYyh ty ckM nf{k.k ft yk& ,& Cykd] xVj dykk'k 1] ub fnYyh] 29233037

lkoZtfud forj.k iz.kkyh

eqn~nk

Hkkjrh; lafo/kku ds vuqlkj Hkkstu dk vf/kdkj izR;sd O;fDr dk ekSfyd vf/kdkj gSA lkFk gh ;g vf/kdkj jkT;ksa dks ck/; djrk gS fd os vko';Drk ds vuq:Ik fo'o [kk| vkiwfrZ ;ksa dk leku forj.k lqfu'pr djus ds fy, lg;ksx nsaA tSls fd Hkkstu dk vf/kdkj ,d lkekU; vf/kdkj gS] bl vf/kdkj ds rgr izR;sd O;fDr dks lEekuiwoZd thou fuokZg ds fy, Ik;kZIr Hkkstu ds vf/kdkj ,oa Hkq[kejh ls eqfDr ikus ls lac/kh ekSfyd vf/kdkj ds vuq:Ik lqjf{kr ,oa iks"kVd Hkkstu rd igqp dk vf/kdkj 'kkfey gSA vko';d ek=k esa cqfu;knh :i ls i;kZIr Hkkstu ,oa Hkq[kejh ls eqfDr ikus ds fy, Ykksxksa ds ikl laoS/kkfud vf/kdkj gS] ftlls os viuk thou fuokZg dj ldsA blds lkFk gh mUgsa lqjf{kr] iks"kVd] ;kX; ,oa iw.kZ ek=k esa Hkkstu dk vf/kdkj gks izR;sd O;fDr dks bl vf/kdkj dks ikus dk gd gS rkfd os viuh 'kkjhfjd vkSj ekufld gqujksa@t:jrksa dh ns[kjs[k ds lkFk lEekuiwoZd thou th ldsA

lHkh ukxfjdksa dks Hkq[k vkSj dqiks"k.k ls eqfDr dk ekSfyd vf/kdkj izkIr gSA bl vf/kdkj dks gkfly djus ds fy, u dsoy lerkewyd vkSj fVdkÅ [kk| O;oLFkkvksa dh vko';drk gS cfYd vkthfodk dh lqj{kk ls lacfa/kr vf/kdkjksa dks nsuk Hkh t:jh gS& tSls jkstxkj dk vf/kdkj] Hkwfe lq/kkj vkSj lkekftd lqj{kkA p<+fd orZeku lnh dh turk dh eqyHkwr vko';drk,¡ iwjh djuk jktuhfrd izkFkfedrk ugha cu ikrh] blfy, izHkkoh ykdfiz; lqxBu gh jkT; ds gLr{ksi dks izsfjr dj ldrs gSaA

Hkkstu dk vf/kdkj vkSj lkoZtfud forj.k iz.kkyh] e/;kà Hkkstu] lesfdr cky fodkl lsokvksa dh xq.koÙkk ds lkFk ykd0;kihdj.k] jk"Vªh; xzkeh.k jkstxkj xkjaVh dkuwu] 2005 vUR;ksn; vUu ;kstuk dk 'kfDr'kkyh foLrkj ;g dk;ZØe vfrxjhc ifjokjksa dks [kk| vk/kkfjr lkekftd lqj{kk nsrk gSA

O;kid Lrj ij lkoZtfud forj.k iz.kkyh ij dfUnzr djrs gq, blls lcdks Hkq[k ls futkr fnykuk o lcdh [kk| lqj{kk ds y{; dks izkIr djuk gSA lkoZtfud forj.k iz.kkyh dbZ lenk;ksa dh thou js[kk gSA bl iz.kkyh dk eq[; y{; lcdh [kk| lqj{kk dks lqfuf'pr djuk gS[kklrkSj ij xjhcksa js[kk esa thou ;kiu djus okys rcds dks A lkoZtfud forj.k iz.kkyh ,d jk'ku forj.k O;oLFkk gSA fQYgky lkoZtfud forj.k iz.kkyh Hkkjr ljdkj }kjk twu] 1997 ls yf{kr lkoZtfud forj.k iz.kkyh ds :i esa dke dj jgh gSA yf{kr lkoZtfud forj.k iz.kkyh ds rgr jkT;ksa dks t:jr gS fd [kk| lkexzh ds [kjhn ifjr vkSj blds forj.k o mfpr nj dh nqdku ds Lrj ij ikjnf'kZrk vkSj ftEesnkjh dks ykxw djukA bl iz.kkyh dk eryc gS fd [kk| lkexzh vkSj vU; lkexzh dks mfpr nj dh nqdkuksa esa lLrs nkeksa ij forfjr djk;k tk, A gj ifjokj ds ikl jk'ku dkMZ gksuk pkfg,A rhu izdkj ds jk'ku dkMZ tks ifjokj dh okf"kZd vk; ij fuHkZj djrs gSa os gSA %

- ,- ih- ,y-¼xjhch js[kk ls Åij½ mu ifjokjksa ds fy, ftudh okf"kZd vk; 24]000@& ls Åij gSA
- ch-ih-,y- ¼xjhch js[kk ls uhps½ mu ifjokjksa ds fy, ftudh okf"kZd vk; 24]000@& ls uhps gSA

- ,-,- okb- ¼vrkn;k vUUk ;ktuk½ mu ifjokjk d fy, yf{kr lkoZtfud forj.k iz.kkyh dk y{; tk vkcknh dk vrkn; vUu ;ktuk d rgr [kk| lkexh lLrs nkek e eg;k djk ld A ifjokj tk vrkn;k vUu ;ktuk d rgr vkr g%&

1- o`)] efgyk,] nc;y] 'kkjhfjd :i l fo'k"k t:jr ¼fodykx½ fujkfJr vkneh vkj vkjr] xHkorh vkj n/k fiykus okyh efgyk,A

2- fo/kok vkj vU; ,dy efgyk, ftudh dkbZ fu;fer lgk;rk ugh gA

3- ,sl ifjokj tk o`) g ¼60 l Åij g½ dkbZ fu;fer lgk;rk ugh g vkj fuokg dk dkbZ tfj;k ugh gA

4- ,sl ifjokj tks 'kkjhfjd :i l vLoLFk d lkFk gA vkj ftudk fuokg dk tfj;k ugh gA

5- 'kkjhfjd vkj ekufld :i l vLoLFk] lkekftd iFkkvk] 'kkjhfjd :i l fo'k"k t:jr d dkj.k n[kHkky dh t:jr gA ;k fQj vU; dkj.k tSl fdlh ik< lnL;k dh ekStnxh dk uk gkuk tk ?kj d ckgj vkenuh oky dke dk gkfly dj ldrk gkA

6- vkfnokl h oxZ l tqM ifjokj

ennu tk fyx vk/kkfjr 0;oLFkk dk c<kok nrs g vkj bl vf/kdkj rd igp cukus e ck/kk Mkyr gA

ifjokjk d T;knkrj iq:"k gh ef[k;k dh Hkfedkvk e gkrs gA efgyk;s de gh ifjokjk e ef[k;k gkrh gA efgyk;s gh ijs ifjokj lnL;k d fy, jk'ku mBkdj ykrh gA fuEu vkfFkd oxZ e vf/kd l vf/kd ykx nfud etnjh djrs gA jk'ku dkM dh idfr vkj mud h vk; n'kkrs g fd tk jk'ku dkMZ mUgs ikIr gkus pkfg, ok mUgs ikIr ugh g, gA jk'ku forj.k e ndkunkjk }kjk fujrj ndku uk [kyuk vkj jk'ku forj.k e vfu;ferk ,d cMh leL;k gA dN ykxk dk jk'ku fcYdy ugh feyrk leL;kvk e vU; ckrs 'kkfey g tSl dkMZ ij ekgj uk yxuk ck;kefVd vkj dEI;Vj MsVk miyC/k uk gkuk vkj jk'ku dkMZ dk dSly gk tkukA

jk'ku d cnys e uxn ¼:Ik;k½ gLrkrj.k dh uhfr l lkekU; thou e gkus okyh leL;k;s vkj muij ppk pyus ;kX; dN fcUnq

- ljdkj }kjk jk'ku d cnys iSlk ¼lfClMkbZTM euh½ nukA lfClMkbZTM euh mUgh dk feyxh tk dkMZ e ef[k;k g] ;kfu fd iSlk T;knkrj iq:"kk d gkFk e vk;xkA ftl l T;knk lHkkouk gkxh fd o iSl jk'ku tSlh cfu;knh t:jrk dh txg vU; dkj.kk e [kp fd;s tk,A vke thou e tMj Hkfedk;k dh otg l jk'ku] Hkkstu vkj ikuh dh 0;oLFkk dh ftEenkjh vkjrk ij gkrh g vkj vDlj ik;k x;k g fd o de lsl k/kuk e Hkh ifjokj dk xtkjk dj iku dh dks'kyrk j[krh gA pfd iq:"k ifjokj e fnu&jkr gkuh okyh NkVh&NkVh t:jrk dk djhc l ugh n[k iku dh otg l iq:"kk e bl dq'kyrk dh deh gkrh gkA

- ckt kjHkko vkleku dk N jgk g vkj lfCIMkbTM euh lko tfud forj.k i.kkyh ij vk/kkfjr gkxhA [ky ckt kj l lkeku [kjhn ikuk xjhc ifjokjk d fy, lHko ugh gk ik;xkA

- ,dy efgyk vkj 'kkjhfjd :i l ckf/kr L=h i:"k tk ef[k;k gku d lkFk ikfjokfjd fTkEenkfj;k dk fuHkkr g vkj ftudh vk; d lk/ku fcyd y Hkh ugh gkr gA ,l e ch ih ,y dkM ;k vrkn; vUu ;ktuk d rgr dkM cuku dh Ldhe g ij ok mu ykxk ij ykx ugh gk ik jgh gA ,dy efgykvk o 'kkfjjhd :i l detkjk d fy, vrkn;k dkM cuu pkfg, ij mud Hkh ,- ih- dkM cuk fn, x, gA

- foLFkkfir dykfu;k e Lk;Dr ifjokjk d fy, ,d gh jk'ku dkM gkrk gA mle jk'ku dh ek=k ifjokj d lnL;k d fglkc l ugh gkrhA vkj jk'ku l;Dr ifjokj d fy, i;kIr ugh gkrk gA

- cLrh e vHkh rd db ykxk d igpku i= ugh cu ik, g vkj bl dkj.k o viu vkidk ogk dk fuokl h iekf.kr ugh dj ikr gA bll jk'ku d lkFk lkFk fcty Hkh mUg ugh fey ikrhA pfd fcty d fcy d duD'ku igpku i= d vk/kkj ij feyr g vkj foHkkx bu nLrko tk d fcuk dN Hkh ugh dj ldrk gA

- ykxk dk vk/kkj dkM feyu vkj cuoku e vHkh Hkh db rjg dh leL;k, vk jgh gA

उदाहरण के लिए–

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाएं कानूनी पेचिदिगीयों को ही झेलती रहती हैं। जैसे कि एक महिला का घरेलू हिंसा कानून के तहत घर में रहने क अधिकार है परन्तु पति को ही आधार कार्ड बनाने और परिवार के सदस्यों का नाम जोड़ने और हटाने का अधिकार है।

एक एकल महिला घर और समाज दोनों में तो मुखिया के रूप में पहचानी जा रही है। परन्तु दस्तावेजीकरण में कमी या सही डेटा और शोध नहीं होने की वजह से अन्नश्री का लाभ नहीं ले पा रही है।

नई योजनाओं की स्पष्ट जानकारियां लोगों को नहीं हैं। बैंक खाते नहीं खोलने में भी बहुत leL;k, आती है।

jk'ku dh nqdku vkj vkidh vf/kdkj

1- jk'ku dh nqdku lIrkg esa 6 fnu [kqyh gksuh pkfg,A lIrkg esa fIQZ 1 fnu NqVVh gksrh gS] tks igys ls fu/kkZfjr gksrh gSA

2- nqdku [kqyus dk le;

& lqcg 9 cts ls nksigj 1 cts rd

&nksigj 3 cts ls 'kke 7 cts rd

3- nqdku ls jk'ku [kjhnrs le;] nqdkunkj dks jk'ku dkMZ esa jk'ku nsus dh rkjh[k vkj jk'ku dh ek=k fy[kuh gksrh gSA iSls dh jlhn Hkh nsuh gksrh gSA

4- ikjnf'kZrk lqfuf'pr djus ds fy, fuEu tkudkjh jk'ku nqdku ds ckgj ckMZ ij yxh gksuh pkfg, &

& iR;sd iSdkj ds jk'ku dkMZ ij miyC/k jk'ku lkexzh dk nke ¼jsV½ vkj ek=k

& nqdku [kqyus dk le; vkj NqVVh dk fnu

& jk'ku lkexzh ds miyC/k LVkd dh LFkfr

& fdruk jk'ku nqdku dks Hkstk x;k vkj fdruk fcdk

& f'kdk;r fuokj.k vf/kdkjh dk lEidZ

5- nqdku ij iR;sd iSdkj ds jk'ku lkexzh dk ueuk miyC/k gksuk pkfg,A cspus tk jgs vukt dh xq.koRrk ueuk tSlh gksuh pkfg,A

6- nqdkunkj vkidk jk'ku dkMZ viuh ikl ugha j[k ldrkA

7- nqdkunkj jk'ku dkMZ u gh cuok ldrk gS vkj u gh dSfly@jnn djk ldrk gSA

8- jk'ku ls lEcfU/kr f'kdk;r vki viuh ldZy dk;kZy; ;k {ks= ds lgk;d vk;qDr dks fyf[kr esa dj ldrs gSA f'kdk;r dh dkih viuh fo/kk;d dks Hkstsa D;ksfd fo/kk;d ldZy jk'ku fuxjkuh lfefr ds v/;{k gSA f'kdk;r Qksu }kjk Hkh dh tk ldrh gSA f'kdk;r Qksu u0& 011&23370841

9- lwpuk dk vf/kdkj dkuwu 2005 ds rgr vki jk'ku lEcfU/kr dksbZ Hkh tkudkjh [kk|,o lEHkj.k foHkkx ls ekax ldrs gSA lwpuk ds vf/kdkj dh vthZ vki tu lwpuk vf/kdkjh ds ikl tek dj ldrs gSA

D;k vkidks jk'ku Bhd nke ij feyrk gS\

<u>ch-ih-,y jk'ku dkMZ@ihyk jk'ku dkMZ</u>

;kstuk& lkykuk ikfjokfjd vk; # 24]200 ls de

jk'ku	nke izfr fdyks	ek=k gj eghus
xsagw	4-80 :-	24 fdyks
Pkkoy	6-30 :-	10 fdyks

phuh	13-65 :-	6 fdyks
feVVh rsy	14-96 :-	12-50 yhVj

ukV& ch-ih-,y jk'ku dkMZ ij c<+dj 35 fdyks xsgw vkSj 14 fdyks Pkkoy fey jgk gSA

vUrks;n; jk'ku dkMZ @ yky jk'ku dkMZ

;kstuk& ch-ih-,y Js.kh esa vkus xjhc

jk'ku	nke izfr fdyks	Ekk=k gj eghus
xsgw	2-00 :-	25 fdyks
Pkkoy	3-00 :-	10 fdyks
phuh	13-50 :-	6 fdyks
feVVh rsy	14-96 :- izfr yhVj	12 yhVj

,-ih-,y jk'ku dkMZ@lQsn jk'ku dkMZ ¼ekgj oky½

jk'ku	nke izfr fdyks	Ekk=k gj eghus
xsgw	7-05	25 fdyks
Pkkoy	9-25	10 fdyks
phuh	ugh feyrh	ugh feyrh
feVVh rsy	ugh feyrk	ugh feyrk

Lkjdkj dh feVVh rsy eqDr fnYyh ;kstuk ds rgr vUrks;n;@ ch-ih-,y@>qXxh jk'ku dkMZ/kkjh tks feVVh rsy miHkksDrk g S] mudks 1 xSl pwYgk k vkSj flfyUMj eqQr fn;k tk jgk gSA pwYgk vkSj flfyUMj feyus ds ckn budk feVVh rsy ugha feyxkA

ftu yksxksa dks lykV ugh feys gS mudks ljdkj dh dksbZ lqfo/kk ugha feysxhA bu yksxksa ds igpku i= u gksus ls jk'ku dkMZ cuus esa leL;k vk jgh gSA jk'ku dkMZ uohuhdj.k dh izfØ;k esa yxHkx vk/ks ls T;knk yksxksa dk dkMZ uohuhdj.k ugha gqvkA bu yksxksa us vihy rks tek djk nh gS yfdu vihy dh dksbZ le; vof/k u gksus ds dkj.k vkxs dh izfØ;k :dh gqbZ gSA

lsdY;iuk o iz'kklu] lrdZ ukxfjd laxBu o tkxksjh }kjk] Xykcy lsQ lhfVt iksxkze] ;w ,u oeu] fnYYkh ds rgr ¼2012&13½

fnYyh 'kgjh vkJ; lq/kkj cksM

दिल्ली सरकार ने 2010 में दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड कानून पास किया था। यह कानून राष्ट्रीय राजधानी के पूरे क्षेत्र पर लागू है।

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड की ज़िम्मेदारी है कि वह दिल्ली में झुग्गी झोपड़ियों के रख – रखाव का काम करे, बस्तियों में जरूरी बुनियादी सुविधाऐं उपलब्ध कराए और बस्तियों का पुनर्वास और स्थानान्तरण करे।

cfLr;ksa esa t:jh lqfo/kk,a

इस कानून के तहत दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड झुग्गी झोपड़ियों का सर्वेक्षण कर सकता है। साथ ही यहां रहने वाले लोगों की संख्या उनके स्वास्थ्य, सफाई, शिक्षा जैसी मूलभूत सुविधाओं व अन्य जरूरी सुविधाओं का सर्वे कर सकता है।

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड की ज़िम्मेदारी है कि वह झुग्गी झोपड़ी और बस्तियों के सुधार के लिए उपयुक्त योजना बनाए जिसके तहत सुधार के लिए शौचालय, नहाने की सुविधा, नालियों के सुधार की सुविधा, पानी उपलब्ध कराने की सुविधा, गलियों के सुधार की सुविधा, कूड़ेदान की सुविधा जहॉ से कूड़ा इकट्ठा किया जा सके, गलियों में लाईट व अन्य जरूरी सुविधाऐं उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

cfLr;ksa dk iquokZl vkSj LFkkukUrj.k

बोर्ड, जिस भूमि पर झुग्गी–झोपड़ी बसी है उसके मालिक से सलाह लेकर बस्ती का पुनर्वास, स्थानान्तरण या उसी स्थान पर विकास कर सकता है । वहॉ के वातावरण व स्थानिय शर्तो के आधार के अनुसार उपयुक्त योजना बना सकता है।

बस्तियों के पुनर्वास और स्थानान्तरण के लिए, जहॉ बस्ती स्थित है वहॉ के भूमि मालिक और लाभ पाने वाले परिवारों से पुनर्वास और स्थानान्तरण का शुल्क लिया जाएगा।

vU; vko';d lwpuk

कोई योजना बनाते समय या लागू करते समय बोर्ड को झुग्गी–झोपड़ी और बस्तियों में रहने वाले परिवारों से सहमति लेने की जरूरत नहीं है।

बोर्ड झुग्गी–झोपड़ी और बस्तियों में बस्ती विकास समिती बना सकता है। जिसकी सलाह से बोर्ड को झुग्गी–झोपड़ी और बस्तियों के मुद्दो व गतिविधियों की जानकारी दी जा सकती है।

इस कानून के तहत बोर्ड एक आवासीय योजना तैयार कर सकता है जिसके तहत हटाऐ गये या स्थानान्तरण किये गये लोगों को कोई अन्य विकल्प उपलब्ध कराया जा सके ।

बोर्ड, आर्थिक रूप से पिछड़े और गरीब परिवारों के लिए आवास उपलब्ध कराने के लिए योजना बना सकता है।

सूचना का अधिकार कानून 2005 के तहत आप दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड संम्बधित कोई भी जानकारी मांग सकते हैं। सूचना के अधिकार की अर्जी आप दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड के जन सूचना अधिकारी के पास जमा कर सकते हैं।

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड में जन सूचना अधिकारी उपनिदेशक (DRIA) है।

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड का आपातकालीन हेल्पलाइन नंबर – 9868399222 / 011-27120590

दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड का पता– पुनर्वास भवन, आइ.पी.एस्टेट, नई दिल्ली – 110001

ldYiuk o idk'ku] lrd ukxfjd lxBu o tkxkjh }kjk] Xykcy lQ lhfVt ikxke] ;u ,u oeu]
fnYyh dr rgr ¼2012&13½

tokgj yky ug: jk"Vªh; 'kgjh uohdj.k fe'ku vkSj jktho vkokl ;kstuk

1. Hkkjr ljdkj ds tokgj yky ug: jk"Vªh; 'kgjh uohdj.k fe'ku ds vUrxZr 'kgjksa esa vkokl dk izko/kku vkSj Lye cLrh ds uohdj.k ds fy, jktho vkokl ;kstuk cukbZ xbZ gSA
2. tokgj yky ug: jk"Vªh; 'kgjh uohdj.k fe'ku o jktho vkokl ;kstuk dk mn~ns'; 'kgj dks Lye Qzh cukuk gSA Lye esa jgus okys ykx bl ;kstuk ds fy, ;ksX; gSA
3. ;kstuk ds rgr 'kgjksa esa vkokl dk izko/kku vkSj Lye cLrh ds uohdj.k ds fy, dsUnz ljdkj jkT; ljdkj dks 50 izfr'kr vkfFkZd lgk;rk miyC/k djk,xhA dsUnz ljdkj ;g lgk;rk fLQZ mu jkT; ljdkj dks iznku djsxh tks vkokl ;kstuk ds vUrxZr Lye esa jgus okys ykxksa dks lEifr @ iksiVhZ dk ekfydkuk vf/kdkj nsxhA
4. ;kstuk dk mn~ns'; 'kgjksa esa xjhcksa ds fy, lLrs vkokl miyC/k djkuk gSA
5. jktho vkokl ;kstuk ds rgr Lye cLrh mlss ekuk tk,xk tks cLrh csrjrhc rjhds ls cuh gks vkSj tgka ikuh] 'kkSpky; vkSj lQkbZ ds fy, vi;kZIr izko/kku gks rFkk de ls de 20 ifjokj jgrs gksaA
6. tokgj yky ug: jk"Vªh; 'kgjh uohdj.k fe'ku vkSj jktho vkokl ;kstuk dk eq[; mn~ns'; 'kgjksa dk O;kid fodkl g]tlds rgr ykxksa dks ekfyd@cfu;knh lsok,a o vf/kdkj tSls ?kj] ikuh] lQkbZ vkfn iklr gksA
7. Hkkjr ljdkj ds 12osa ikp o"kZh; ;kstuk ds rgr jktho vkokl ;kstuk 250 'kgjksa esa ykxw gksxkA
8. fn'kk funsZ'k ds vuqlkj ;kstuk dks ykxw djus vkSj lyku djrs le; gj Lrj ij cLrh ds ykxksa dh Hkkxhnkjh gkuh pkfg, vkSj mudk ls>ko 'kkfey gkuk pkfg,A
9. ;kstuk ds rgr gj jkT; o 'kgj viuh fLFkrh ds vuqlkj iR;sd cLrh ds fy, mfpr ;kstuk cuk,xk rkfd cLrh dk fodkl gks] pkgs oks uohdj.k gks ;k LFkkukarj.k gksA fn'kk funsZ'k ds vuqlkj dkf'k'k gkuh pkfg, fd tgka cLrh fLFkr gS ogha mldk lq/kkj gks ftlls ykxksa ds ukSdjh ds volj vkSj vkenuh ds rjhds uk mtMsaA
10. jktho vkokl ;kstuk ds rgr Lye dk fodkl djus ds fy, futh lsDVj dh Hkkxhnkjh dks Hkh c<kok fn;k tk,xk A
11. jktho vkokl ;kstuk nks pj.kks esa ykxw gksxh&
    d- rS;kjh dk pj.k& ekpZ 2010 ls jkT; ljdkj dks jktho vkokl ;kstuk dk lyku cukus esa enn fey jgh gSA lyku ds rgr lHkh cfLr;ksa ds uohuhdj.k rFkk ubZ cfLr;ksa dks jksdus dh ;kstuk cukbZ tk jgh gSA bl pj.k esa Lye esa jgus okys ykxksa dks lEifr @ iksiVhZ dk ekfydkuk vf/kdkj nsus ds fy, dkuwu cuk;k tk,xk] Lye esa cqfu;knh lsok,a nsus ds fy, ;kstuk cukbZ tk,xhA
    [k- dk;kZU;ou@ykxw djus dk pj.k& ;g pj.k rc 'kq# gksxk tc rS;kjh ds pj.k dk lyku dsUnzh; ljdkj Lohdkj djsxhA

12. jktho vkokl ;kstuk ds rgr cuk, x, edku dk vkdkj U;wure 25 xt ehVj dk gksxkA

lsdYiuk o izdk'ku] lrdZ ukxfjd laxBu o tkxksjh }kjk] Xykscy lQ lhfVt ikxke] ;w ,u oeu] fnYyh ds rgr ¼2012&13½

fnYyh ljdkj dh vkfFkd lgk;rk ;kstuk,a

समाज में व्याप्त अधिकारों में लिंग आधारित असमानता के चलते पेंशन योजना बनी। समुदाय में वर्ग, जाति, महिला, पहचान, सामाजिक स्थितिं में गैरबराबरी को समझते हुए इस पेंशन योजना को लागू किया गया। इससे कोई व्यक्ति गैरबराबरी के कारण मूलभूत अधिकारों से वंचित ना हो जाए। परन्तु हम समझते और जानते हैं कि समाज में औरतें दोयम दर्जा जीवन जीने के अलावा परिवार को संभालने व चलाने की जिम्मेदारी उठाती हैं। इसीलिए हाशिये पर जीने वाले गरीब, बुजुर्ग, एकल, अस्वस्थ एवं शारीरिक रूप से विशेष ज़रूरतमंद महिलाओं की मूलभूत ज़रूरतें भी कहीं ना कहीं पुरूष की ज़रूरतों से अलग हो जाती हैं। पेंशन का अधिकार सामाजिक लिंग आधारित भेदभाव रहित दिखता है।

हम अभी भी सामाजिक लिंग आधारित गैरबराबरी को वर्तमान में भी अपना स्थान बनाए देख सकते हैं। पुरूषों के लिए पेंशन लाना सहज हो जाता है। क्योंकि उनके पास जानकारी, किसी भी जगह में आवाजाही, रौब, घर से बाहर निकलकर कार्य करने का माहौल उनके अनुसार मौजूद है।

महिलाएं और ख़ासतौर पर बुजुर्ग, कम उम्र एकल, अस्वस्थ और शारीरिक रूप से विशेष ज़रूरतमंद महिलाएं सरकार द्वारा दी जाने वाली पेंशन पाकर उसके ज़रिये आत्मनिर्भर बनने के अवसरों को तलाश सकती हैं। महिलाओं का सामाजिकरण, महिलाओं की तिहरी भूमिकाएं (बच्चे पैदा करना, उनका लालन–पालन और सामुदायिक काम की भूमिकाएं) और उनमें लगने वाला समय, सामाजिक पहचान, परिवार में उनकी स्थिति, सार्वजनिक स्थलों व विभागों की कम जानकारी, असुरक्षा का डर और कम जानकारी के चलते वे अपने अधिकारों से वंचित रह जाती हैं।

अपने अधिकार को प्राप्त करने के लिए महिलाओं और लड़कियों को समझौते के साथ साथ उसकी कीमत चुकानी पड़ती है। गरीब, बुजुर्ग एकल, अस्वस्थ एवं शारीरिक रूप से विशेष ज़रूरतमंद महिलाओं की आर्थिक निर्भरता व संसाधनों तक न पंहुच पाने की बाध्यता महिलाओं के आगे बढ़ने के अवसरों को खोता है। जब एकल व गर्भवती महिलाएं पेंशन लेने के लिए अपनी बारी के इंतजार की लाईन में खड़ी होती हैंतो कोई अप्रिय असहज घटना के डर से चिंतित रहती हैं। इसके अलावा बुजुर्ग व बीमार महिलाओं को अपने बच्चों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है। जब उनके बच्चे उन्हें लेकर जाते हैं तब जाकर वे अपनी पेंशन को ले पाती हैं। उस पर भी कई परिवारों में उनकी पेंशन का इस्तेमाल परिवार के लोग ही करते हैं। वे महिलाएं अपने लिए अपने हिसाब से उस पेंशन को खर्च भी नहीं कर पाती हैं।

इन योजनाओं को ख़ासतौर पर महिलाओं के लिए लाया जाता है। विभिन्न विभागों द्वारा दिये जाने वाली पेंशन व उनसे जुड़ी योजनाओं की निगरानी में संवेदनशीलता की कमी है। साथ ही पेंशन योजना को पाने की प्रक्रिया में कुछ ही महिलाओं के पास पहचान पत्र, राशन कार्ड या तो हैं ही नहीं और यदि हैं तो राशन कार्ड व पहचान पत्र में उम्र या नाम का मिलान नहीं हो पाता है। इसके अलावा अधिकतर मुखिया पुरूष होने के कारण संबंधित दस्तावेज बनाने में लोगों को पेंशन पाने की प्रक्रिया में पेचीदगियाँ महसूस होती हैं। इस वजह से महिलाओं व लक्षित समुदाय तक पेंशन पहुंच ही नहीं पाती हैं। सरकार द्वारा अलग अलग विभाग द्वारा दी जाने वाली पेंशन योजना का लाभ कौन, कैसे, कब और कहां से ले सकता है? इसकी जागरूगता समुदाय में बराबर और सलीके से महिला पुरूषों तक पहुंचाने की ज़रूरत है।

पेंशन किसी व्यक्ति विशेष या बी पी एल लोगों तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। क्योंकि ये ज़रूरत सर्वव्यापी है और पेंशन का सर्वव्यापीकरण होना चाहिए।

दिल्ली सरकार की आर्थिक सहायता योजनाएं

योगयता व आर्थिक सहायता	प्रक्रिया और आवश्यक दस्तावेज

योगयता व आर्थिक सहायता	प्रक्रिया और आवश्यक दस्तावेज
विधवा पेंशन	
• विधवा महिलाओं के लिए 1500 रु. हर महीने • 18 से 60 वर्ष के लिए • आवेदक की सालाना पारिवारिक आय 60,000 रूपये से कम	1. पेंशन के लिए आवेदन फार्म अपने क्षेत्र के विधायक/महिला एवं बाल विकास विभाग से प्राप्त करें। 2. आवेदन के साथ निम्नलिखित दस्तावेज विभाग में जमा करें– • पति का मृत्यु प्रमाण पत्र की कापी • दिल्ली में पॉच साल से रहने का सबूत की कापी • बैंक खाते की कापी ;एकल खाता • आय के सबूत के लिए स्वंय प्रमाणित घोषणा पत्र 3. आवेदन करने के 60 दिन के अंदर विभाग आवेदन को मंजूर या रद्द करेगा। 4. हर 3 महीने में पेंशन लाभकारी के बैंक खाते में भेजी जाएगी
वृद्धा पेंशन	
• 60 से 69 वर्ष के वृद्ध को 1000 रू. हर महीने • 70 वर्ष से अधिक वृद्ध लोगों को 1500 रू. हर महीने • आवेदक की सालाना पारिवारिक आय 60,000 रूपये से कम	1. पेंशन आवेदन फार्म अपने क्षेत्र के विधायक/ समाज कल्याण विभाग से प्राप्त करें 2. आवेदन के साथ निम्नलिखित दस्तावेज विभाग में जमा करें– • आयु प्रमाण पत्र की कापी • दिल्ली में पॉच वर्षों से रहने का सबूत की कापी • बैंक खाते की कापी ;एकल खाता • आय के सबूत के लिए स्वंय प्रमाणित घोषना पत्र 3. आवेदन करने के 45 दिन के अंदर विभाग आवेदन को मंजूर या रद्द करेगा। 4. हर 3 महीने में पेंशन लाभकारी के बैंक खाते में भेजी जाएगी
विकलांग पेंशन	
• विकलांग को 1000 रू. हर महीने • आवेदक की सालाना पारिवारिक आय 75,000 रूपये से कम • 0–60 व र्ा के लिए • पेंशन के लिए विकलांगता 40: से ज्यादा होनी चाहिए	1. पेंशन आवेदन फार्म अपने क्षेत्र के विधायक/ समाज कल्याण विभाग से प्राप्त करें 2. आवेदन के साथ निम्नलिखित दस्तावेज विभाग में जमा करे– • सरकारी हस्पताल द्वारा जारी विकलांगता का प्रमाण पत्र • दिल्ली में पॉच व र्ाों से रहने का सबूत • बैंक खाते की कापी ;एकल खाताद्ध। केवल मानसिक विकलांगों/मनोरोगियों के लिए संयक्त खाता की कापी मान्य है। • आय के सबूत के लिए स्वंय प्रमाणित घो ाना पत्र 3. आवेदन करने के 45 दिन के अंदर विभाग आवेदन को मंजूर या रद्द करेगा। 4. हर 3 महीने में पेंशन लाभकारी के बैंक खाते में भेजी जाएगी

विधवा की पुत्री के लिए आर्थिक सहायता योजना	
• विधवाओं की पुत्री के विवाह हेतु 30,000 रु की आर्थिक सहायता • आवेदक की सालाना पारिवारिक आय 60,000 रूपये से कम	1. आवेदन फार्म महिला एवं बाल विकास विभाग से प्राप्त करें। 2. आवेदन के साथ निम्नलिखित दस्तावेज विभाग में जमा करें– • पति का मृत्यु प्रमाण पत्र की कापी • दिल्ली में पॉच साल से रहने का सबूत की कापी • पुत्री का जन्म–प्रमाण पत्र की कापी 3. आवेदन करने के 60 दिन के बाद विभाग आवेदन को मंजूर या रद्द कर सकता है।
लाडली योजना	
• परिवार की वार्षिक आय 1 लाख से कम • परिवार में दो लड़कियों से ज़्यादा को योजना का लाभ नहीं मिल सकता • बालिका का जन्म दिल्ली में होना चाहिए यदि जन्म 1/1/2008 के बाद हो तो • यदि जन्म 1/1/2008 से पहले हुआ हो तो बालिका दिल्ली में सरकारी मान्यता प्राप्त स्कूल में दाखिल होनी चाहिए	1. लाडली योजना के लिए आवेदन फार्म अपने क्षेत्र के विधायक/आंगनबाड़ी/महिला एवं बाल विकास विभाग से प्राप्त करें। 2. आवेदन के साथ निम्नलिखित दस्वावेज लगाकर जमा करें– • पुत्री के जन्म–प्रमाण पत्र की कापी • माता–पिता के राशन कार्ड/पहचान पत्र की कापी। • दिल्ली में 3 वर्ष रहने का सरकारी प्रमाण की कापी। • परिवार की वार्षिक आय का शपथ पत्र 3. यदि बालिका का जन्म 1/1/2008 के बाद हो तो जन्म के 1 साल के अंदर आवेदन करें। यदि बालिका का जन्म 1/1/2008 से पहले हुआ हो तो जब वह कक्षा 1, 6, 9, 12 में प्रवेश ले या कक्षा 10 से पास करें, तब आवेदन करें। 4. 10,000 रु जन्म के समय और फिर 5,000 रु कक्षा 1, 6, 9, 12 में प्रवेश लेने पर और कक्षा 10 पास करने पर बालिका के नाम से फ़िक्सड् डिपोज़िट में डाले जाएंगें। 5. बालिका के 18 वर्ष पूरे होने व 12वीं कक्षा पास करने पर जमा राशी और उसका ब्याज़ बालिका के बैंक खाते में दी जाएगी 6. आवेदन करने के 90 दिन के अंदर विभाग आवेदन को मंजूर या रद्द कर सकता है

विभाग का पता

महिला एवं बाल विकास विभाग और समाज कल्याण विभाग दक्षिण ज़िला

जन सूचना अधिकारी– ज़िला अधिकारी

शिकायत निवारण अधिकारी– ज़िला अधिकारी या विभाग के आयुक्त

कस्तूरबा निकेतन, लाजपत नगर 2, नई दिल्ली

ljdkj l le; lhek dkuu d rgr viuk dke le; l djoku d viu vf/kdkj dk tku

- दिल्ली में सेवा तय समय सीमा कानून 2011 में लागू हुआ है।
- इस कानून के तहत सरकारी विभाग को लोगों तक कुछ सरकारी सेवाऐं तय समय सीमा में पहुॅचानी है।
- सरकारी सेवा प्राप्त करने के लिए आवेदन करते समय हर आवेदन को एक नम्बर दिया जाएगा जिस का प्रयोग करके आवेदन की प्रगति इन्टरनेट के द्वारा पता की जा सकती है।
- कानून के तहत हर सरकारी विभाग में सक्षम अधिकारी नियुक्त किए गए हैं।
- यदि कोइ सेवा तय समय सीमा के अंदर नहीं उपलब्ध कराई जाए तो सक्षम अधिकारी की जिम्मेदारी है कि वह आवेदक को हरजाना देने का आदेश जारी करे और सरकारी अधिकारी पर जुर्माना लगाए।
- यदि कोइ सेवा तय समय सीमा के अंदर नहीं उपलब्ध हो, तो आवेदक को हर्जाना 10 रूपये प्रतिदिन के हिसाब की देरी से मिलेगा। हर आवेदन पर अधिकतम हर्जाना 200 रूपये तक लगाया जा सकता है।

ifØ;k

- सेवा के लिए आवेदन करते समय अपने आवेदन का नम्बर मांगें जिस का प्रयोग करके आवेदन की प्रगति इन्टरनेट के द्वारा पता की जा सकती है।
- सेवा के लिए आवेदन करते समय, सेवा उपलब्ध करने की समय सीमा को जानें।
- यदि सेवा तय समय सीमा के अन्दर न मिले तो सक्षम अधिकारी से हर्जाना मॉग सकते हैं। हर्जाना उसी समय दिया जाएगा।

dN t:jh ljdkjh lsok,sa vkSj r; le; lhek

	सेवा का नाम	विभाग का नाम	तय समय सीमा	सक्षम अधिकारी
1	नया राशन कार्ड जारी करना ;सफेद राषन कार्डद्ध	राशन विभाग	45 दिन	अतिरिक्त आयुक्त सतर्कता
2	राशन कार्ड में संषेधन	राशन विभाग	12 दिन	अतिरिक्त आयुक्त सतर्कता
3	दिल्ली के अंदर राशन कार्ड ट्रांसफ़र	राशन विभाग	45 दिन	अतिरिक्त आयुक्त सतर्कता
4	जन्म और मृत्यु प्रमाण पत्र जारी करना ;यदि आवेदन जन्म या मृत्यु के 21 दिन के अन्तर्गत	दिल्ली नगर निगम	7 दिन	उप–स्वास्थ्य अधिकारी
		एन.डी.एम.सी.	7 दिन	थ्नदेशक कार्मिक
	जन्म और मृत्यु प्रमाण पत्र के लिए आर्डर जारी करना	राजस्व	30 दिन	संम्बधित सब–डीविजनल मजिस्ट्रेट – एस. डी. एम.
5	आय प्रमाण पत्र जारी करना	राजस्व	21 दिन	संम्बधित सब–डीविजनल मजिस्ट्रेट – एस. डी. एम.
6	अनु. जाति और अनु. जन जाति प्रमाण पत्र जारी करना	राजस्व	60 दिन	संम्बधित एस. डी. एम.
7	अन्य पिछड़ा वर्ग जाति प्रमाण पत्र जारी करना	राजस्व	60 दिन	संम्बधित एस. डी. एम.
8	अधिवास/निवास प्रमाण पत्र जारी करना	राजस्व	21 दिन	संम्बधित एस. डी. एम
9	नया बिजली कनैकशन	ब. एस. ई एस़	35 दिन	मुखिया, डोर स्टेप सर्विस

ladYiuk o izdk'ku] lrdZ ukxfjd laxBu o tkxksjh }kjk] Xykcy lsQ lhfVt iksxzke] ;w ,u oeu]
fnYyh dh rgr ¼2012&13½

lpuk dk vf/kdkj

ऐसी सूचना की जानकारी जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से असर लोगों की जिंदगी पर पड़ता है, उसे पाने का प्रत्येक नागरिक के अधिकार को 'सूचना के अधिकार' के रूप में 2005 में लागू किया गया। सूचना का अधिकार एक ऐसा अधिकार है जो किसी विशेष जाति, लिंग, वर्ग, नस्ल को ही केवल जानकारी लेने का अधिकार नहीं देता बल्कि ये कानून लोगों को एक समान देखते हुए समता का अधिकार` देता है। परंतु दुख की बात यह है कि व्यवहार में आज भी इस कानून का प्रयोग कुछ सक्षम समुदाय के सक्षम लोग यानि काफी संख्या में सिर्फ, शिक्षित, उच्च वर्ग, जाति के पुरूष लोग ही कर पा रहे हैं।

आज भी आंकड़े बताते हैं कि सामाजिक राजनीति से लेकर घरेलू राजनीति में सिर्फ पुरूषात्मक एवं मर्दानगी भरी सत्ता ही हावी है। आज भी बेघर, असुरक्षित गर्भ में पल रही व अजन्मी लड़कियां, पढ़ने वाली यूवा लड़कियां शिक्षित, अशिक्षित, कामकाजी, या घरों में रहने वाली महिलाओं को स्व–सुरक्षा का डर हर वक्त सताता रहता है। सदियों पर सदियां बीत रही हैं परन्तु लड़कियों की पढ़ाई अब तक छूट रही हैं। आज भी लड़कियों व महिलाओं के लिए परिवार में डर का अहसास और समाज में महिलाओं के प्रति व्याप्त असंवेदनशील रवैया मौजूद है।

क्या वाकई महिलाएं समान रूप से इस अधिकार का फायदा उठा पा रहीं हैं। इन जेंडर असमानता की अगर गहराई से नाप तोल करें तो जवाब अभी तक ना ही दिखाई पड़ता है। धीरे धीरे कुछ महिलाएं सचेत हो रही हैं और सूचना के अधिकार का प्रयोग करने या निर्णय लेने की ओर बढ़ रही हैं। परन्तु अभी भी गैरबराबरी का माहौल उनके अधिकारों तक उनकी पहुंच ना बनने देने में मददगार साबित हो रही हैं। अभी तक महिलाएं अपने सवाल और संवाद के लिए दूसरों पर निर्भर हैं। कुछ महिलाएं अगर निर्णय ले भी लें तो उनकी असाक्षरता, सामाजिक पहचान व उससे जुड़ी सुरक्षा उन्हें रोकती है।

viuk lpuk dk vf/kdkj tkuA ljdkj l fglkc ekxA

- सूचना का अधिकार कानून 2005 में लागू हुआ था।
- इस कानून के अन्तर्गत लोग सरकार के lHkh foHkkxk से lkjh tkudkjh ekx ldr हैं। केवल कुछ जानकारी जैसै कि राष्ट्रीय सुरक्षा से संम्बधित जानकारी नहीं ekx ldr हैं।
- सरकार से रिकार्ड की QkVkdkih] रिकार्ड की tkp और कार्यों/सामग्री के ueu मॉग सकते हैं।
- सरकार के हर विभाग में आवेदन जमा करने के लिए और जानकारी उपलब्ध कराने के लिए tu lpuk vf/kdkjh बनाए गए हैं।
- vkonu dh Qhl& 10 # और जानकारी के iR;d i"B d fy, QkVkdkih Qhl&2 #
- xjhch j[kk से नीचे रहने वालों के लिए dkbZ Qhl ugh (पीले या लाल राशन कार्डधारी)।
- 30 fnu में जानकारी उपलब्ध कराई जाएगी। यदि जानकारी thou ;k LorU=rk से संबंधित हो तो जानकारी 48 ?kV के अन्दर उपलब्ध कराई जाएगी।
- समय से सूचना न देने पर tu lpuk vf/kdkjh पर 250 # ifr fnu का । अधिकतम जुर्माना 25]000 #।
- सूचना के लिए आवेदन किसी भी विभाग में जमा कर सकते हैं। कानून के तहत जन सूचना अधिकारी की जिम्मेदारी है कि वह आवेदन को सही विभाग तक पहुचाएॅं।
- कानून के तहत मांगी गई जानकारी LFkkuh; Hkk"kk में देनी होती है ।
- कानून के तहत जन सूचना अधिकारी की जिम्मेदारी है कि वह आवेदक की lHkh idkj l enn करे। यदि आवेदक मौखिक रूप से कानून के तहत जानकारी मांगे तो जन सूचना अधिकारी को उसके लिए लिखित में आवेदन बनाना होगा।
- कानून की धारा 4 के तहत सरकार को सार्वजनिक जानकारी लोगों तक वेबसाइट और बोर्ड के माध्यम से पहुँचानी होती है।

tkudkjh ekxu dh ifØ;k

- जानकारी मॉगने के लिए fyf[kr e vkonu dj vkj lkFk gh Qhl tek करें। आवेदन सादे कागज़ पर बनाएॅं । आवेदन का कोई फार्म नहीं है।
- जानकारी मॉगने के लिए आवेदन में किसी कारण या व्यक्तिगत विवरण देने की आवश्यकता नहीं है। केवल सम्पर्क पता देना ही आवश्यक है।
- यदि निधारित समय में जानकारी न मिले तो प्रथम अपील विभाग को करें और दूसरी अपील सूचना आयोग को करें। केन्द्रीय सूचना आयोग का पता— अगस्त्त क्रांति भवन, बीकाजी कामा पलैस, नई दिल्ली— 110066, फोन— 26161137, 61117666

जानकारी मांगने के लिए इस तरह आवेदन तैयार कर सकते हैं।

Lkpuk dk vf/kdkj dkuu 2005 d rgr vkonu

tu lpuk vf/kdkjh
foHkkx dk uke &

vkond dk Ukke &
vkond dk irk &

Lkpuk dk fooj.k&
i'u 1 -

i'u 2 -

i'u 3 -

i'u 4 -

i'u 5 -

vkond dk gLrk{kj& fnukd&

ukV& vkonu dh Qhl 10 # नकद, पोस्टल ऑडर, डीमांड ड्राफ़्ट या बैंन्कर्स चैक द्वारा tek dh tk ldrh gA यदि आप xjhch j[kk से नीचे रहतें हैं तो dkbZ Qhl ugh लगेगी – अपने पीले या लाल राशन कार्ड की कॉपी vkonu d lkFk yxk,A

भाग 3:

हितधारकों संबंधी जानकारी–

हितधारकों की जवाबदेही और ज़िम्मेदारियां संबधी सूचनाए।

fnYyh e: ,e-,y-,- (fo/kk;d) dh ftEesnkfj;k

क्या आपके क्षेत्र में–

• राशन ठीक से मिलता है (समय से दुकान खुलती है, राशन उचित मात्रा में मिलता है, ग्राहकों के साथ अच्छा बर्ताव होता है) ?
• पानी की समस्या है (इलाके में समय से पानी आता है, नलके की उचित व्यवस्था है, आस पास सफाई है, लोगों की पानी की ज़रूरत पूरी होती है) ?
• सड़कें टूटी हुई हैं ?
• शौचालय खराब/बंद पड़े हैं ?
• पुलिस वाले लोगों को बेवज़ह परेशान करते हैं ?
• वृद्धा, विधवा और विकलांगों को पेंशन नहीं मिलती है?

अगर हाँ, तो आप अपने एम.एल.ए. पर दबाव बनाऐं क्योंकि, एम.एल.ए. की जिम्मेदारी है कि :

- वह हमारे मुद्दों व समस्याओं को दिल्ली विधान सभा में उठाएं और उन पर सही कानून और नीतियाँ बनाएं।

- हर एम.एल.ए. को क्षेत्र के विकास के लिए 4 करोड़ रूपये सालाना मिलते हैं। इस पैसे से एम.एल.ए. अपने क्षेत्र के लोगों के लिए शौचालय, ट्यूब वैल, सड़क, गलियाँ, स्कूल, बारात घर, अस्पताल, कूड़ाघर आदि बनवा सकते हैं और बस्ती के विकास पर खर्च कर सकते हैं।

- दिल्ली सरकार के विभागों पर निगरानी रखें और सुनिश्चित करें कि लोगों को ज़रूरी सुविधाएँ उपलब्ध हों।

- एम.एल.ए. क्षेत्र की राशन निगरानी समिति के अध्यक्ष हैं। समिति का काम है– क्षेत्र में राशन वितरण प्रणाली पर निगरानी रखना, राशन कार्डधारियों की शिकायतों का निवारण करना और राशन में भ्रष्टाचार रोकने के लिए सुझाव देना।

- एम.एल.ए. क्षेत्र के थाना समिति के अध्यक्ष हैं।

- एम.एल.ए. आपके क्षेत्र के जिला विकास समिति और जिला शिकायत निवारण समिति के सदस्य हैं। जिला शिकायत निवारण समिति का काम है लोगों की पानी, बिजली और सफाई से संबन्धित शिकायतों का समाधान/निवारण करना।

- एम.एल.ए. क्षेत्र के वृद्धा, विधवा और विकलांगों की पेंशन के लिए उनकों पेंशन के फार्म उपलब्ध करा सकतें हैं।

viu {k= d ,e-,y-,- dk igpku

क्षेत्र का नाम	एम.एल.ए. का नाम और पता

ldYiuk o idk'ku] lrd ukxfjd lxBu o tkxkjh }kjk] Xykcy lQ lhfVt ikxke] ; ,u oeu]
fnYyh d rgr ¼2012&13½

fuxe ik"kn dh ftEenkjh

क्या आपके क्षेत्र में—

- *बस्ती की सफाई ठीक से नहीं होती?*
- *प्राथमिक स्कूल में ठीक पढ़ाई नहीं होती है?*
- *डिस्पेन्सरी में डॉक्टर और दवाईयाँ नहीं मिलती हैं?*
- *वृद्धा, विधवा और विकलांगों को पेशंन समय से नहीं मिलती है?*

अगर हाँ, तो आप अपने निगम पार्षद पर दबाव बनाऐं क्योंकिः

➢ पार्षद एम. सी. डी. (दिल्ली नगर निगम) के चुने हुए सदस्य होते हैं और उनकी ज़िम्मेदारी है कि अपने क्षेत्र में वो एम. सी. डी. के काम पर निगरानी रखें और काम ठीक से करवाएँ। एम. सी. डी. का काम है कि वो देखें कि लोगों को सड़क, पार्क, नाली, सफाई, प्राथमिक स्कूल व डिस्पेन्सरी की सुविधा उपलब्ध हों।

➢ पार्षद हमारे मुद्दों व समस्याओं पर एम. सी. डी. की बैठकों में सवाल उठा सकते हैं और उन पर सही नीतियाँ व उप—कानून बना सकते हैं।

➢ हर पार्षद को वार्ड के विकास के लिए हर साल फंड मिलता हैं। इस पैसे से पार्षद वार्ड में लोगों के लिए विकास कार्य कर सकते हैं।

➢ पार्षद वार्ड समिति के सदस्य होते हैं जहां पर वो क्षेत्र की समस्याओं व मुद्दों को उठा सकते हैं। इस समिति की मीटिंग में एम. सी. डी. के क्षेत्रीय अधिकारी भी बैठते हैं।

➢ पार्षद एम. सी. डी. की समितियों के सदस्य होते हैं। एम. सी. डी. का बहुत सा काम इन समितियों में किया जाता है। ऐसी कई समितियां हैं, जैसे— स्वास्थ्य समिति, सफाई समिति, शिक्षा समिति।

➢ पार्षद अपने वार्ड में रहने वाले वृद्धा, विधवा और विकलांगों के नाम को एम. सी. डी. की पेशंन के लिए प्रस्तावित कर सकते हैं।

➢ 2012 से दिल्ली नगर निगम का 3 हिस्सों में विभाजन हो चुका है— दक्षिणी दिल्ली नगर निगम, उत्तरी दिल्ली नगर निगम, पूर्वी दिल्ली नगर निगम।

Lkkaln dh ftEesnkfj;k¡

देश में सांसद (एम.पी.) के चुनाव 2009 में हुए थे। देश के सांसद (एम.पी.) की ज़िम्मेदारियाँ समझें और उनसे जवाब मांगे या उन्हें जबावदेह बनायें ।

सांसद की जिम्मेदारी है कि –

- हमारे मुद्दों व समस्याओं को संसद में उठाएं और उन पर सही कानूनँ बनाएं।
- देश के सरकारी विभागों पर निगरानी रखें और सुनिश्चित करें कि लोगों को ज़रूरी सुविधाएँ उपलब्ध हों। संसद में सवाल उठाने के माध्यम से भी वह सरकारी विभागों पर निगरानी रख सकते हैं।
- सांसद को क्षेत्र के विकास के लिए 5 करोड़ रूपये सालाना मिलते हैं। इस पैसे से वे अपने क्षेत्र में शौचालय, ट्यूब वैल, सड़क, स्कूल, कूड़ा घर आदि बनवा सकते हैं।
- सांसद संसदीय समितियों के सदस्य होते हैं। संसद का बहुत सा काम इन संसदीय समितियों में किया जाता है। ऐसी लगभग 50 समितियां हैं, जैसे– पानी समिति, स्वास्थ्य समिति, राशन समिति और शहरी विकास समिति।

अपने क्षेत्र के एम.एल.ए. को पहचानें और उनकी ज़िम्मेदारियाँ समझ कर, उनसे जवाब मागें।

आपका वोट आपको विकास की ओर ले जा सकता है। अगले सांसद (एम.पी) के चुनाव से पहले उम्मीदवार से सवाल करें कि वो क्या काम करेंगें, और फिर अपना किमती वोट डालें।

ladYiuk o ikdk'ku] lrdZ ukxfjd laxBu o tkxksjh }kjk] Xykcy lQ lhfVt ikxkke] ;w ,u oeu] fnYYkh dh rgr ¼2012&13½

भाग 4:

मीडिया उल्लेख –

मुख्य हिंदी समाचार पत्रों से जेंडर व महिला हिंसा से सम्बंधित विचार विमर्श।

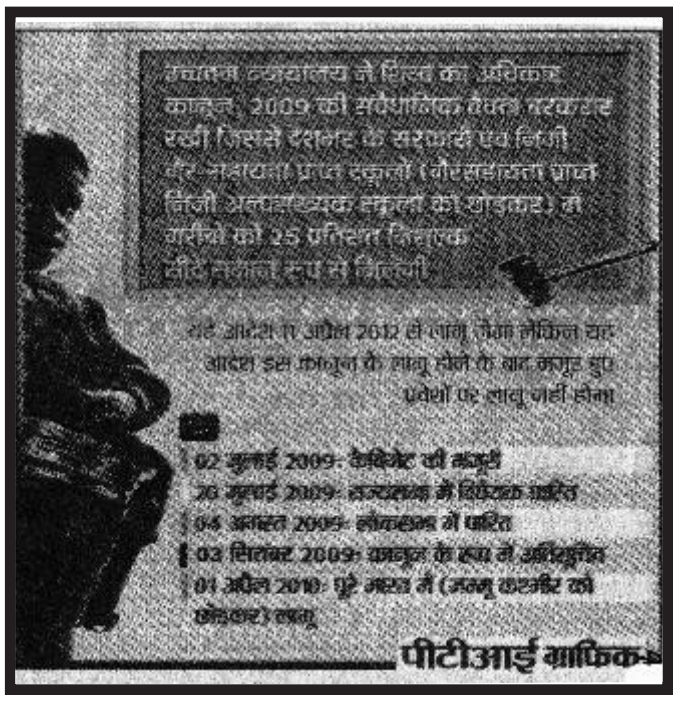

आओ पढ़ें आगे बढ़ें.....

■ रंजीत वर्मा

लेखक विधि विषयों के जानकार हैं।

लेकिन बाकी हैं कुछ सवालों के जवाब

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 को विभिन्न निजी स्कूलों द्वारा अदालतों में दी गई चुनौतियों का पटाक्षेप सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के साथ हो गया। निजी स्कूलों के व्यवस्थापक उक्त अधिनियम की धारा 12(1)(सी) को लेकर क्षुब्ध थे। इस धारा में प्रावधान है कि प्रत्येक निजी स्कूल को चाहे उसे सरकार द्वारा वित्तीय सहायता मिलती हो या नहीं 25 फीसदी सीटें गरीब बच्चों के लिए आरक्षित रखनी होंगी, जिन्हें निःशुल्क शिक्षा पाने का अधिकार इस कानून के तहत सरकार ने दिया है।

सर्वोच्च न्यायालय का फैसला अब निजी स्कूलों के लिए बाध्यकारी है। देखा जाए तो 2009 में जो कानून बना था, अब उसके लागू होने के दिन आ गए हैं। लेकिन लगता नहीं कि इस साल यह कानून लागू हो पाएगा, क्योंकि देश भर के स्कूलों में 1 अप्रैल से पहले ही नामांकन प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। क्या फैसला देने के पहले स्कूलों से यह कहा गया था कि वे 2012-13 सत्र की 25 प्रतिशत सीटें फैसला आने के बाद भरेंगे। यह बात समझ से परे है कि जब मुकदमे में बहस पिछले साल अगस्त में ही समाप्त हो चुकी थी तो क्या फैसला 1 अप्रैल से पहले मार्च की किसी तारीख में नहीं दिया जा सकता था। बहरहाल बात सिर्फ इतनी ही नहीं है बल्कि इसके बावजूद कई सवाल और हैं जो किसी को परेशान कर सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय को भी चाहिए था कि वह अपने फैसले से शिक्षा का अधिकार कानून की वैधता पर अपनी मुहर ही नहीं लगाता, बल्कि उन सवालों का जवाब भी सरकार से देने को कहता।

इस कानून के तहत गरीब बच्चों का स्कूलों में नामांकन का अधिकार सिर्फ पड़ोस के स्कूल पर दिया गया है। यानी कहा जा सकता है कि यह अधिकार सिर्फ शहरी बच्चों को दिया गया है क्योंकि गांवों में पड़ोस क्या बल्कि उससे भी कहीं आगे दूर दूर तक कोई स्कूल नहीं होता। सरकार से पूछा जाना चाहिए था कि उसने क्यों गांवों के गरीब बच्चों को इस अधिकार से वंचित रखा। दूसरी बात यह कि शहरों में भी पड़ोस में रहने वाले सभी गरीब बच्चों का नामांकन इस कानून या फैसले के तहत स्कूल में हो जाए जरूरी नहीं क्योंकि उनकी संख्या कई बार कहीं ज्यादा हो सकती है। क्यों नहीं वे उन स्कूलों में भी जाएं जो अमीरों के मोहल्लों में होते हैं। कई स्कूल ऐसे भी होते हैं जहां छात्रों को हॉस्टल में रहना पड़ता है लेकिन इस कानून के तहत गरीब बच्चों को हॉस्टल में निःशुल्क रखे जाने का कोई प्रावधान नहीं रखा गया है। अगर पड़ोस में ऐसा ही बोर्डिंग स्कूल हो तो वहां आसपास के गरीब बच्चे कहां पढ़ने जाएंगे। फिर एक सवाल यह भी है कि गैर सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक स्कूलों को इस कानून की हद से बाहर क्यों रखा गया है। चाहे वह मदरसा हो या मिशनरी या आर्य समाजी उन्हें भी कहना चाहिए था कि वे जिस अल्पसंख्यक समुदाय के उत्थान के लिए शैक्षणिक संस्थान खोले हैं, उसी समुदाय के गरीब बच्चों के लिए वे 25 प्रतिशत निःशुल्क सीटें आरक्षित रखें। कई बार इस तरह के स्कूल उन्हीं इलाकों में होते हैं जहां उनके समुदाय के लोग रहते हैं तो फिर ऐसे बच्चे पड़ोस में कौन सा स्कूल ढूंढेंगे।

इन सवालों के बीच एक महत्वपूर्ण सवाल यह भी है कि यह अधिकार सिर्फ 14 साल तक के बच्चों को ही क्यों दिया गया है? सर्वोच्च न्यायालय को चाहिए था कि वह सरकार से इसका जवाब मांगता। जब कोई बच्चा छह साल की उम्र में स्कूल में दाखिला लेगा तो 14 साल तक की उम्र में वह स्कूल की पढ़ाई पूरी नहीं कर सकता, ज्यादा से ज्यादा वह आठवीं कक्षा तक की पढ़ाई कर सकता है। फिर जाहिर है कि वह उस महंगे स्कूल में अपनी आगे की पढ़ाई पूरी नहीं कर पाएगा और किसी सस्ते या सरकारी स्कूल में नाम लिखाना भी उसके लिए शायद संभव नहीं हो पाएगा, क्योंकि इस कानून के लागू किए जाने के बाद जिस तादाद में बच्चों की संख्या बढ़ेगी उसी अनुपात में स्कूलों की क्षमता न सरकार बढ़ा पाएगी और न निजी स्कूल वाले ही। यानी इतनी भीड़ होगी हर जगह कि आठवीं के बाद अगर उसके अभिभावक उस स्कूल की फीस देने की स्थिति में नहीं होंगे तो उसे बाहर का रास्ता देखना होगा और फिर वे वही जमात बनाएंगे, जो आज बिना आठवीं पास किए वे बना रहे हैं।

फर्क यह हो सकता है कि आज जिस तरह के ड्राइवर-कंडक्टर होते हैं बसों के या छोटे-बड़े होटलों के बेयरा, दरबान या दफ्तरों के चपरासी या स्टेशनों पर जो कुली होते हैं, उनसे बेहतर व्यवहार शायद वे करें और सबसे बड़ी बात यह कि ये अंग्रेजी समझेंगे और थोड़ी बहुत अंग्रेजी बोलेंगे भी और तब सरकार को यह चिंता नहीं होगी कि इस देश में जो विदेशी उद्यमियों, खिलाड़ियों, सैलानियों, राजनयिकों की आने वाले दिनों में बड़ी तादाद होगी, उन्हें आसानी हो जाएगी। जो उच्च तबका है उसे भी 'समझदार' सहायक मिल जाएंगे, जो अपने मालिक को अच्छी तरह समझ रहे होंगे क्योंकि आठवीं तक दोनों की शिक्षा आखिर एक ही जो होगी।

यह अधिकार से पाई जा रही शिक्षा नहीं है बल्कि दया में दी जा रही शिक्षा है, जिसका मकसद और चाहे जो हो लेकिन गरीब बच्चों को उच्च शिक्षा की ओर ले जाना नहीं है। जरा सोचिए आखिर 14 साल तक ही यह अधिकार क्यों दिया जा रहा है। क्या ऐसा नहीं लगता कि चूंकि बाल श्रम कानून के तहत 14 साल के बाद बच्चे काम पर लग सकते हैं, इसलिए शायद सरकार ने सोचा हो कि उसे तभी तक पढ़ने का अधिकार दिया जाए। उसके बाद उसे पढ़ने की क्या जरूरत।

verma.ranjeet@gmail.com

अधिकार एक अंतर्विरोध अनेक

शिक्षा

आनंद कुमार

स्वाधीनता के साथ ही हमने अपने संविधान में यह संकल्प लिया था कि आजाद भारत शुरू के दस बरस में ही चौदह बरस की उम्र तक के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क, समान और अच्छी आरंभिक शिक्षा की व्यवस्था करेगा। इस आश्वासन को पूरा करने की दिशा में अब तक की सरकारें कछुआ चाल से चलती रही हैं, जिसके कारण आजादी के 65 साल बाद भी दुनिया में भारत निरक्षर स्त्री-पुरुषों का सबसे बड़ा देश है। निरक्षरता की निरंतरता निर्धनता के दलदल में फंसे चालीस फीसद परिवारों के बच्चों में अब भी जारी है। इसलिए शिक्षा के अधिकार की कानूनी गारंटी की व्यवस्था हमारी आजादी और लोकतंत्र दोनों के अधूरेपन को दूर करने की अभिनंदनीय शुरुआत है। अब यह प्रश्न स्वाभाविक है कि शिक्षा के अधिकार को अमली जामा पहनाने में हम कहां तक गंभीर हैं और संप्रग सरकार की कानून बनाने के कागजी कदम की आगे की उपलब्धियां क्या हैं?

अब तक की जो कोशिशें हैं, उनमें तीन बड़ी कमियों का सच देश के सामने है। अच्छे शिक्षकों की कमी, संतोषजनक विद्यालय व्यवस्था और निजी क्षेत्र द्वारा चलाए जा रहे विद्यालयों में उपेक्षा की भावना। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ने निजी विद्यालयों को अपनी एक चौथाई जगहें साधनहीन वर्गों के बच्चों को उपलब्ध कराने का आदेश देकर निजी क्षेत्र को सहयोग का खुला निर्देश दे दिया है। इसके सकारात्मक परिणाम आने की आशा करनी चाहिए क्योंकि आज शिक्षा के क्षेत्र में केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालय के अपवाद को छोड़कर समूची सरकारी प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था लड़खड़ाई हुई है।

लेकिन शिक्षा के अधिकार को असरदार तरीके से कार्यान्वित करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को कौन आदेश देगा? जिला परिषद और ग्राम पंचायतों को कौन कर्तव्यनिष्ठ बनाएगा? इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति की जरूरत है, ऐसा कहा जा रहा है। मेरी समझ से यह एक निर्गुण शब्द है। सत्ता की इच्छाशक्ति है तो सत्ता का समाज के लिए सदुपयोग करने के कर्तव्य के लिए अलग से कौन-सी इच्छाशक्ति की तलाश है...। असल में इसके लिए समतामूलक समाज बनाने के संवैधानिक आदर्श के प्रति ईमानदारी और प्रतिबद्धता की जरूरत है। हमारी शिक्षा व्यवस्था अभी भी भाषा, वर्ग और गांव बनाम शहर और स्त्री बनाम पुरुष के चार बड़े अवरोधों से पीड़ित है। अधिकांश विद्यालयों में दर्जा एक से ही अंग्रेजी को माध्यम बनाने का नया सिलसिला शुरू हो चुका है। इसमें निहित पूर्वाग्रह की उपेक्षा की जा रही है। सुशिक्षित परिवारों के बच्चों को निरक्षर परिवारों के बच्चों की तुलना में खुली वकृत का भेद आरंभिक शिक्षा माध्यम की भाषा में छिपा हुआ है। दूसरी समस्या संपन्न और विपन्न वर्ग के बच्चों के परस्पर फासले की है। संपन्न वर्गों के बच्चे न सिर्फ अत्यंत सुविधासंपन्न विद्यालयों में पढ़ाए जा रहे हैं और उनकी पढ़ाई में विद्यालय के समानांतर ट्यूशन आदि की सुविधा उपलब्ध है। जबकि विपन्न बच्चों के लिए सीमित सुविधाओं वाले विद्यालयों का ही दरवाजा खुल पा रहा है। ट्यूशन-कोचिंग जैसी सुविधाओं का प्रबंध सरकार द्वारा वंचित समूहों के लिए गठित आयोगों की तरफ से खानापूरी के रूप में किया जाता है। जब 77 प्रतिशत कामकाजी भारतीय के पास 20 बीस रुपया खर्च के लिए उपलब्ध है तो वह पहले बच्चों का पेट भरेगा या दिमाग की खुराक का प्रयास करेगा! गांव और शहर की शिक्षा का अंतर तो नगरीकरण को प्राथमिकता दे चुकी हमारी विकास दिशा में चर्चा के लायक भी नहीं माना जा रहा है; जबकि दो तिहाई भारत गांव में ही रह रहा है। इसी अंतर्विरोध को इंडिया बनाम भारत की लड़ाई भी कहा गया है।

- निरक्षरता की निरंतरता निर्धनता के दलदल में फंसे चालीस फीसद परिवारों के बच्चों में अब भी जारी है। इसलिए शिक्षा के अधिकार की कानूनी गारंटी की व्यवस्था हमारी आजादी और लोकतंत्र दोनों के अधूरेपन को दूर करने की अभिनंदनीय शुरुआत है
- लेकिन एक तरफ शिक्षा के अधिकार को नागरिकों का मूल अधिकार बनाना और दूसरी ओर समूचे शिक्षा तंत्र को अराजकता और स्तरहीनता के दलदल में धकेलने की प्रक्रिया की अनदेखी करना परस्पर अंतर्विरोधी है

लड़कियों के लिए उपलब्ध पढ़ाई की सुविधाओं का यक्ष प्रश्न सीमित समाधान के आगे नहीं बढ़ पा रहा है। भाषा, वर्ग और गांव-शहर की दीवारों को लांघने के बाद भी भारत की बेटियां शिक्षा के अधिकार के लिए जरूरी पारिवारिक और सामाजिक अनुकूलता की प्रतीक्षा कर रही हैं। बिना लिंगभेद की जड़ों को खत्म किए हमारी शिक्षा अधिकार आधारित नई कोशिशें आधे-अधूरे परिणामों के लिए अभिशप्त रहेंगी। शिक्षा के अधिकार के लागू होने के साथ ही हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त क्षेत्रीय विषमता को भी समयबद्ध तरीके से समाप्त करने की चुनौती ने नई प्रासंगिकता प्राप्त की है। शिक्षा के अधिकार के कार्यान्वयन में निर्धनता पीड़ित भारतीय राज्यों को शेष भारत के सहायता की जरूरत होगी, अन्यथा विद्यालयों की कमी, शिक्षकों का अभाव और साधन की समस्या- पैसे की कमी के स्थाई बहाने में उलझी रहेगी। इसलिए योजना आयोग की निगरानी में शिक्षा की दृष्टि से सभी पिछड़े जिलों के लिए एकमुश्त राशि की अगले पांच बरस तक लगातार व्यवस्था करनी पड़ेगी अन्यथा 'हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और' वाला फासला बना रहेगा।

यह अच्छी बात है कि शिक्षा के अधिकार के कानून को लेकर शुरू से ही पूरे देश में सतर्कता दिखती है। जिले-जिले से इसके अधूरे अमल की जानकारी मीडिया द्वारा देश को मिल रही है। इस सवाल पर विभिन्न दलों की सूबाई सरकारों का तुलनात्मक मूल्यांकन भी किया जा रहा है। फिर केंद्र में सरकार चला रहे संप्रग के समक्ष भी शिक्षा के अधिकार के क्रियान्वयन को 2014 के आम चुनाव में अपनी सबसे जनहितकारी पहल के रूप में पेश करने की विवशता है। इससे यह आशा है कि जनता के दबाव और राजनीतिक नेतृत्व के स्वार्थ के संयोग से शिक्षा के अधिकार के पूर्ण कार्यान्वयन के लिए अगले दो वर्षों में जरूर आगे बढ़ा जाएगा। उम्मीदों का तोड़ना कुर्सी से हटाए जाने में बदल सकता है, ऐसे में कौन अपनी कुर्सी गंवाना चाहेगा?

इन सब चुनौतियों से ज्यादा बड़ी समस्या शिक्षा के क्षेत्र में गहराई तक फैले भ्रष्टाचार की हो गई है। विद्यार्थी की भर्ती से लेकर उसके परीक्षाफल तक में पैसे के लेनदेन का चौतरफा रोग फैल गया है। चूंकि बिना शिक्षा के अब रोजगार ही नहीं विवाह तक असंभव है, इसलिए, चाहे जिस कीमत पर हो, हर परिवार शिक्षा के व्यवसायीकरण के नए सच को बर्दाश्त करने के लिए अभिशप्त है। दूसरी तरफ आज शिक्षक का पेशा अत्यंत शोषणमय हो चुका है। प्राथमिक विद्यालय से लेकर वित्तरहित महाविद्यालय तक दो हजार रुपये मासिक से दस हजार रुपये तक की राशि के जरिये आप उच्चशिक्षा प्राप्त युवक-युवतियों को गृह विज्ञान से लेकर कंप्यूटर विज्ञान की पढ़ाई के लिए अपना कर्मचारी बना सकते हैं। आप जिन परिस्थितियों में अपना शिक्षा व्यापार चला रहे हैं, उसके बारे में कोई पूछने वाला नहीं है। क्योंकि राज्य की तरफ से आपकी संस्था को कोई अनुदान नहीं दिया जा रहा है। यह राज्य की शिक्षा क्षेत्र में बढ़ रहे शोषण की जानबूझकर अनदेखी है। ऐसे अनैतिक परिवेश में चल रहा शिक्षण कार्य किस हद तक व्यक्तित्व निर्माण और आदर्श नागरिकता में योगदान कर पाएगा, यह सवाल अभिभावक से लेकर मीडिया तक सबको पूछना चाहिए।

एक तरफ शिक्षा के अधिकार को नागरिकों का मूल अधिकार बनाना और दूसरी ओर समूचे शिक्षा तंत्र को अराजकता और स्तरहीनता के दलदल में धकेलने की प्रक्रिया की अनदेखी करना परस्पर अंतर्विरोधी है। शिक्षा के क्षेत्र में फैल रही अस्वस्थता दूर किए बिना शिक्षा का अधिकार कानून बनाकर संतुष्ट हो जाना गैर जिम्मेदारी है। शिक्षा के अधिकार को नागरिक निर्माण और देश-निर्माण से जोड़ने के लिए तत्काल शासकों, शिक्षकों, अभिभावकों और विद्यार्थियों का संयुक्त अभियान चलाना होगा। असाधारण हस्तक्षेप बिना असरदार बदलाव की आशा करना अपने को भुलावे में रखना है।

(लेखक जेएनयू में प्राध्यापक हैं)

शौचालय बनाम मोबाइल फोन

सवाल

अनिल चमड़िया

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश ने कहा कि गांवों में महिलाएं उनसे शौचालय की सुविधा मुहैया कराने के बजाए मोबाइल फोन की मांग करती हैं। इसके बहाने हमें भारत में सरकार द्वारा बहस के लिए किसी भी विषय को उठाने के तरीके पर बातचीत करनी चाहिए। भारत में 2011 की भवन गणना के बाद आंकड़ों के रूप में यह सच सामने आया है कि सौ में से सैंतालीस घरों में ही शौचालय की सुविधा है। दस वर्ष पहले केवल 34 प्रतिशत घरों में शौचालय थे। यानी दस वर्षों में 13 प्रतिशत का ही सुधार हुआ है। दस वर्ष पहले का यह आंकड़ा इसीलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि आज की तारीख में शौचालय की समस्या को मोबाइल फोन के विस्तार के बरक्स प्रस्तुत किया जा रहा है। लगभग दस वर्ष पहले से ही भारत में आम घरों में मोबाइल फोन आने का सिलसिला तेज हुआ। वर्तमान में देश के 63 प्रतिशत घरों में फोन की सुविधा उपलब्ध है जिनमें 53 प्रतिशत घरों में केवल मोबाइल फोन है और 6 प्रतिशत के पास टेलीफोन और मोबाइल दोनों हैं। ग्रामीण इलाकों के आधे से ज्यादा घरों में मोबाइल फोन आ गया है।

आखिर दस वर्षों में मोबाइल फोन का इतनी तेजी के साथ विस्तार कैसे हो गया और शौचालय जैसी मूलभूत सुविधा का विस्तार अंग्रेजी हुकूमत के बाद आजाद भारत की सरकारों के कार्यकाल में अपेक्षित तेजी से क्यों नहीं हो सका। पहली बात कि क्या किसी भी समस्या को किसी दूसरी जरूरत की उपलब्धता के समानांतर खड़ा किया जा सकता है? सरकार से ही यह सवाल किया जाए कि शौचालय की समस्या का समाधान अंग्रेजों के बाद की अपनी कल्याणकारी सरकारें क्यों नहीं कर पाईं। क्या शौचालय सुविधा सरकारी कार्यक्रम है? शौचालय की जरूरत हर परिवार व उसके सदस्यों को है। सरकार का लगातार जोर घरों में शौचालय के निर्माण को लेकर रहा है। सरकार ने घरों में शौचालयों के निर्माण के लिए कई कार्यक्रमों की घोषणा की है लेकिन सरकार द्वारा रियायत दिए जाने का कार्यक्रम बनाए जाने के बावजूद शौचालय के निर्माण के प्रति लोगों की गति में कोई तेजी दिखाई नहीं दी।

देश में एक कमरे के मकानों की संख्या गांवों में 39.4 प्रतिशत और शहरों में 32.1 प्रतिशत है। ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश जब शौचालय की सुविधा की मांग न किये जाने के लिए लोगों, खासतौर से महिलाओं को जिम्मेदार ठहराते हैं तो उनके विकास की सामाजिक प्रक्रिया के अध्ययन की जरूरत महसूस होती है।

ग्रामीण इलाकों में महिलाओं की अस्वस्थता के सबसे बड़े कारणों में एक कारण घरों में शौचालयों का नहीं होना भी है।

- ग्रामीण इलाकों में महिलाओं की बीमारी के बड़े कारणों में एक कारण घरों में शौचालयों का नहीं होना है। इसीलिए यह कहना कि गांवों में शौचालयों के बजाय मोबाइल फोन की मांग होती है, समाज का उपहास उड़ाने जैसा प्रयास कहा जाएगा
- सरकार अब तक सभी भारतीय घरों में शौचालयों के नहीं पहुंच पाने की स्थिति अगर देख रही है तो उसे इस दिशा में चल रहे अपने कार्यक्रमों पर अवश्य गौर करना चाहिए

यदि महिलाएं सुबह सूर्य उगने से पहले निवृत्त होने के लिए घरों से नहीं निकल सकीं तो उन्हें अक्सर शाम को झुटपुटा होने तक उसी अवस्था में रहना पड़ता है। इसीलिए यह कहना कि गांवों में शौचालयों के बजाय मोबाइल की मांग होती है, समाज का उपहास उड़ाने जैसा प्रयास कहा जाएगा।

दरअसल, यह कोई नई बात नहीं है। यह भारतीय समाज में वर्चस्ववादी संस्कृति की सोच और समझ का परिचायक है। ठीक उसी तरह जैसे किसी गरीब को वह कहकर हिकारत भरी निगाहों से देखा जाता है कि वह रोटी के बदले शराब में पैसे खर्च करता है। पहली बात तो यह कि यह विचार का कौन-सा पक्ष है जो गरीब के लिए यह मानक तय करता है कि उसे पहले रोटी पर ही पैसे खर्च करने चाहिए? दूसरा, उसे गरीब के शराब पीने पर एतराज क्यों है? क्या यह मानवतावादी दृष्टिकोण है कि गरीब को पहले रोटी खानी चाहिए क्योंकि जिंदा रहने के लिए रोटी एक जरूरत है। इसके समानांतर एक सवाल यह है कि जो गरीब के लिए रोटी की जरूरत निर्धारित करना चाहता है,-क्या उसकी जरूरतों को निर्धारित करने का मन गरीब भी बना सकता है? किसी की जरूरत को निर्धारित करने का काम किसका है! क्या ताकत के साथ इसका रिश्ता जुड़ा हुआ है? इससे जुड़े दूसरे प्रश्नों पर भी विचार करें।

आखिर गरीब से यह अपेक्षा क्यों की जाती है कि वह अपने आसपास फैलाई गई अमीरों की संस्कृति और जीवनशैली को स्वीकार करने से परहेज रखे। आमतौर पर हम यह देख सकते हैं कि समाज का वर्चस्ववादी तबका गरीब और जरूरतमंदों के लिए मुद्दे निर्धारित करता है और वह उन्हें स्वीकार नहीं करने वालों को हिकारत से देखता है। लेकिन अपनी विकसित की गई संस्कृति को स्वीकार करने से चिढ़ता भी है। यह दोहरी मार गरीब क्यों सहन करें? एक सामंती परिवार का लड़का अपने पूर्वजों की याद में रोजाना गांव और आसपास के लोगों को खिचड़ी खिलाना चाहता था लेकिन उसकी खिचड़ी खाने कोई नहीं आता था तो वह चिढ़ गया। उसने यह मानने से इनकार कर दिया कि समाज में भुखमरी जैसी स्थिति भी है। उसने यह विचार कतई नहीं किया कि कोई गरीब क्यों उसके पूर्वजों की आत्मा की शांति में हिस्सेदार बनें। गरीब जब इस तरह सोचने लगता है तो वह प्रतिक्रिया का शिकार होता है। महिलाएं मोबाइल फोन चाहती हैं, यदि इस मांग के पीछे महिलाओं की पृष्ठभूमि को ध्यान में नहीं रखा जाएगा तो उनकी इस मांग को केवल उपहास उड़ाकर ही काम चलाया जा सकता है।

समर्थ या शासक वर्ग का एक राजनीतिक विचार यानी नजरिया होता है। उस नजरिये से ही वह समाज, उसकी समस्या और अपने तमाम तरह के हित देखता है। अपने पूर्वजों की आत्मा की शांति के लिए गरीबों के भोजन न करने पर प्रतिक्रिया और जयराम रमेश की प्रतिक्रिया में कोई बुनियादी अंतर नहीं है तो इसका कारण यह है कि दोनों एक ही राजनीतिक नजरिये के दो पहलू हैं। समस्या का समाधान यह नहीं बताना है कि सरकार से शौचालय की जगह मोबाइल की मांग की जा रही है।

सरकार ने एक महिला को इसलिए पुरस्कार दिया क्योंकि उसने अपनी ससुराल में शौचालय की मांग की। सरकार ने अपनी फोटो उसके साथ खिंचवा ली और वह दस्तावेज का हिस्सा बन गया। सरकार का मकसद इतिहास के पन्नों को रंगीन छपाई करवाने का है तो इस इन प्रयासों से शौचालय की समस्या दस्तावेजों में ही हल हो सकती है। ससुराल उसका अपना घर है, वहां उसे मांग करने की जरूरत नहीं हो सकती है; खासकर तब जबकि वह इतनी ताकतवर है कि अपनी ससुराल में कोई सशर्त मांग खड़ी कर सके। आमतौर पर महिलाओं की यह स्थिति नहीं है। ऐसा होता तो वे सबसे पहले अपनी बीमारियों के सबसे बड़े कारण घरों में शौचालय के अभाव को दूर करतीं।

कहने का आशय यही है कि भारतीय गरीब घरों में शौचालयों के प्रति गरीबों का उपेक्षा का भाव एक नहीं, कई तरह की मजबूरियों की उपज है। सरकार अब तक सभी भारतीय घरों में शौचालयों के न पहुंच पाने की स्थिति अगर देख रही है तो उसे इस दिशा में चल रहे अपने कार्यक्रमों पर अवश्य गौर करना चाहिए।

नजर से ओझल एक बुनियादी जरूरत

प्रसंगवश

स्त्रियों के विशेषाधिकारों की बात होने लगी है लेकिन अभी तक उसके सामान्य अधिकारों का ही संघर्ष खत्म नहीं हुआ है। सार्वजनिक स्थलों में साफ-सुथरे शौचालयों पर स्त्री का बुनियादी हक तो बनता ही है। लेकिन स्त्री की इतनी मामूली- सी लेकिन अहम जरूरत को भी समाज और सरकारों ने हमेशा से नकारा है। बल्कि सच तो यह है कि इस तरफ किसी का ध्यान ही नहीं गया। आधी आबादी यानी पुरुषों के लिए सार्वजनिक जगहों पर शौचालयों का न होना किसी समस्या जैसा है ही नहीं। क्योंकि वे अपनी जरूरत के लिए शौचालयों के मोहताज नहीं! किसी भी गली-मोहल्ले, नुक्कड़, मैदान और सार्वजनिक जगह के साथ वे निसंकोच शौचालय जैसा व्यवहार करने को आजाद हैं!

देश के इतिहास में पहली बार सुप्रीम कोर्ट ने स्त्रियों की इस अव्यक्त समस्या पर नोटिस लिया। स्कूलों में लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग शौचालयों की व्यवस्था को शिक्षा के बुनियादी अधिकार से जोड़ा गया है,18 अक्तूबर 2011 को सुप्रीम कोर्ट ने स्कूलों में शौचालयों की व्यवस्था को लेकर बेहद अहम आदेश दिया। सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को आदेश दिया गया कि वे सभी स्कूलों में अस्थाई शौचालयों की व्यवस्था 30नवंबर तक करें।

पूरे देश के लगभग आधे स्कूलों में आज भी साफ-सुथरे शौचालयों की कोई व्यवस्था नहीं है। सुप्रीम कोर्ट द्वारा दी गई दोनों समयसीमाएं खत्म हो चुकी हैं लेकिन अब तक सभी स्कूलों में लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग शौचालयों की व्यवस्था नहीं हो पाई है।

सभी स्कूलों में लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग साफ-सुथरे शौचालयों की स्थाई व्यवस्था के लिए सुप्रीम कोर्ट ने 31दिसंबर की अंतिम तारीख दी, जिसे बाद में बढ़ाकर 31 मार्च कर दिया गया।

पूरे देश के लगभग आधे स्कूलों में आज भी साफ-सुथरे शौचालयों की कोई व्यवस्था नहीं है। सुप्रीम कोर्ट द्वारा दी गई दोनों समयसीमाएं खत्म हो चुकी हैं लेकिन अब तक सभी स्कूलों में लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग शौचालयों की व्यवस्था नहीं हो पाई है। लेकिन यह अपने आप में अहम है कि कम से कम लड़कियों के लिए स्कूलों में अलग से शौचालयों की जरूरत को समझा गया, रेखांकित किया गया। सार्वजनिक जगहों और अलग-अलग संस्थानों में महिला शौचालयों की जरूरत को समझा जाना एक स्त्री-संवेदी सूचक है।

ऐसा नहीं है कि सिर्फ भारत की स्त्रियों को ही सार्वजनिक स्थानों और संस्थानों में महिला शौचालयों की घोर कमी का सामना करना पड़ रहा है। पड़ोसी देश चीन में भी महिला शौचालयों की स्थिति बेहद खराब है। इसी से तंग आकर कॉलेज की छात्राओं के एक समूह ने 'आक्युपाई वॉल स्ट्रीट' की तर्ज पर 'आक्युपाई मेन्स टायलेट' जैसे आंदोलन की शुरुआत की। सार्वजनिक महिला शौचालयों की कमी के विरोध में कॉलेज की छात्राओं के एक समूह ने पुरुष शौचालयों का उपयोग करते हुए सार्वजनिक महिला शौचालयों को बढ़ाने की मांग की है। लिंग समानता की तरफ पहल के तौर पर यहां इस अधिकार की मांग की जा रही है। 1996 में ताइवान में भी इस तरह की घटनाएं सामने आई थीं।

स्कूल, कॉलेज, दफ्तर और अन्य सार्वजनिक स्थलों पर महिला शौचालयों का न होना सिर्फ महिला शौचालयों की कमी का मसला भर नहीं है। शौचालयों के घोर अभाव की वजह से जो शारीरिक परेशानियां लड़कियों और महिलाओं को होती हैं, वे चिंता का विषय हैं। ज्यादा देर तक दबाव को रोकने की वजह से महिलाओं और लड़कियों के शरीर में कई खतरनाक बीमारियों के पैदा होने की आशंका रहती है। गुर्दे में रक्त प्रवाह की कमी, गुर्दे में संक्रमण या खराबी या किडनी फेल या मूत्रनली में रुकावट जैसी तमाम व्याधियां घेर लेती हैं। यह महज संयोग ही नहीं कि लड़कियों में मूत्रसंबंधी संक्रमण का खतरा लड़कों की अपेक्षा ज्यादा होता है। एक शोध में सामने आया है कि सोलह की उम्र से पहले ग्यारह फीसद लड़कियों और चार फीसद लड़कों में मूत्रनलिका संबंधी संक्रमण होता है।

दिन के कई घंटे मूत्र रोककर कक्षा में बैठे रहने की मजबूरी भी बच्चियों को स्कूल के प्रति हतोत्साहित करती है। मासिक चक्र के समय स्कूलों में शौचालयों की कमी कितनी खलती होगी कोई इन लड़कियों से पूछे। शौचालयों की सामान्य सी सुविधा की कमी की वजह से स्त्रियों को सार्वजनिक जीवन में कितनी बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ता है। ये परेशानी तब और भी गंभीर हो जाती है जब शरीर में शौच रोकने संबंधी बीमारियां पैदा हो जाती हैं। सार्वजनिक जीवन में स्त्रियों की भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए जिस बुनियादी ढांचे को खड़ा करने की जरूरत है उसमें सार्वजनिक महिला शौचालय निर्माण एक अहम घटक है।

केरल की एक एजेंसी ने शहर के मुख्य स्थानों और पर्यटन स्थलों पर विशेषतौर पर से महिलाओं के लिए शौचालय बनाने की परियोजना शुरू की है। देश में पहली बार इस तरह की अनूठी पहल हो रही है। राज्य महिला विकास निगम द्वारा इस योजना के पहले चरण में 35 शी-टायलेट बनाए जाएंगे। इनमें महिलाओं के लिए सैनिटरी नैपकिन वेंडिंग और इस्तेमाल किए जा चुके नैपकिन को जलाने वाली मशीनें भी लगाई जाएंगी। केरल के एरनाकुलम में लड़कियों के एक स्कूल में देश का पहला इलेक्ट्रॉनिक शौचालय बनाया गया है।

न सिर्फ सार्वजनिक महिला शौचालयों की कमी एक समस्या है बल्कि आज भी सिर्फ 46.9 फीसद घरों में ही शौचालय की सुविधा है। नई जनगणना में सामने आया है कि घरेलू शौचालय की बजाय मोबाइल फोन रखने वाले घरों की संख्या ज्यादा है। शहरों की भीड़-भाड़ और समाज का स्त्रियों के प्रति नजरिया- ये चीजें स्त्रियों की शौचालय संबंधी समस्या को कितना ज्यादा विकट और पेचीदा बना देती हैं। कितने अचरज की बात है कि स्त्री के दिल, दिमाग, शरीर और एकांत पर भी पहरे बिठाने वाला समाज उसके नितांत निजी जरूरतों के प्रति कितना उदासीन और घोर असंवेदनशील है। स्त्री की बुनियादी जरूरतों से लेकर मानसिक, शारीरिक भावनात्मक तमाम तरह की जरूरतें पुरुषों और पितृसत्तात्मक समाज ने अपने हिसाब से तय की हैं। ज्यादातर पुरुषों को लगता है कि स्त्री के पास सोने के गहने होना जरूरी है, इसलिए उसके पास वे होते हैं, किसी भी कीमत पर। हालांकि, उन्हें नहीं लगता कि स्त्री के लिए गहनों और अन्य ताम-झाम से ज्यादा जरूरी घर और बाहर में शौचालय की व्यवस्था है, इसलिए वे नहीं हैं। बेटियों के विवाह के वक्त पक्केतौर पर सोने के गहने चिंता का विषय होते हैं, ससुराल में शौचालय तो सपने में भी किसी की चिंता का विषय नहीं होता।

ग्रामीण और शहरी, स्त्रियों के स्वास्थ्य के प्रति चिंता जताने वाली सारी सरकारी कथनियां कितनी थोथी नजर आती हैं। शौचालय निर्माण जैसी बुनियादी सुविधा उपलब्ध कराने भर से कितनी बच्चियां व स्त्रियां कितनी गंभीर बीमारियों की चपेट में आने से बच सकती हैं। जिस समाज में लड़कियां, स्त्रियां अपनी प्रकट बीमारियों के प्रति भी चुप रहने को बाध्य हैं वहां गुप्त बीमारियों के बारे में घरवालों को अवगत कराने और उसका इलाज कराने की भला क्या और कितनी संभावना है? इन गुप्त और प्रकट बीमारियों से अकेले चुपचाप लड़ती बच्चियों, लड़कियों और स्त्रियों का गुनहगार कौन है? या कहें कि गुनहगार कौन नहीं है? विज्ञान और तकनीक की वजह से इंसान बड़ी-बड़ी और असंभव चीजें जान गया है लेकिन एक स्त्री की बुनियादी जरूरतें से ये देश-दुनिया कितनी अनजान है? सवाल तो यह भी है कि क्या सच में कोई स्त्रियों की बुनियादी जरूरतें जानना चाहता भी है या नहीं? ❑

आधी आबादी आज भी खुले में शौच को मजबूर

जनगणना रिपोर्ट 2001 के मुकाबले स्थिति में फिर भी सुधार, 63 फीसदी लोगों के पास मोबाइल फोन और 33 फीसदी घरों में है टीवी

नेशनल ब्यूरो · नई दिल्ली

देश में अच्छे स्वास्थ्य की जगह स्टेटस सिंबल को ज्यादा तवज्जो दी जा रही है। रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया (आरजीआई) ने 2011 जनगणना की ताजा रिपोर्ट में खुलासा किया है कि देश के लगभग 53.1 फीसदी घरों में शौचालय की सुविधा नहीं है। आधी आबादी आज भी खुले में शौच करने को मजबूर है। लेकिन इसके ठीक उलट देश में लगभग 63.2 प्रतिशत जनता मोबाइल फोन का इस्तेमाल करती है। 2001 के मुकाबले पचास फीसदी ज्यादा घरों में नए टीवी सेट खरीदे गए हैं।

जनगणना-2011 के 'मकान-सूचीकरण और मकानों की गणना' से मिले आंकड़ों के अनुसार, भारत में 70 फीसदी ग्रामीण और लगभग 19 प्रतिशत शहरी लोग आज भी खुले में शौच करते हैं।

हालांकि 2001 जनगणना के मुकाबले दस सालों में शौचालय के इस्तेमाल में कुल दस फीसदी का इजाफा भी देखा गया है। 2001 में 63.6 आबादी खुले में शौच करने को मजबूर थी। 2011 में यह आंकड़ा 53.1 प्रतिशत तक गिर गया है। इसके ठीक उलट की तस्वीर दिखाते हुए रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत के लगभग 63.2 घरों में मोबाइल या टेलीफोन की सुविधा मौजूद है। सबसे रोचक बात तो यह है कि पिछले दस सालों के दौरान इस क्षेत्र में लगभग 54 प्रतिशत का जबरदस्त इजाफा हुआ है।

2001 जनगणना के अनुसार सिर्फ 9.1 प्रतिशत लोग टेलीफोन या मोबाइल का इस्तेमाल करते थे। आरजीआई रिपोर्ट के अनुसार देश की 47.2 फीसदी घरों में टीवी सेट मौजूद है। बच्चों के अधिकारों के लिए काम करने वाली अंतरराष्ट्रीय संस्था 'यूनिसेफ' के विशेषज्ञ एडन क्रोनी का कहना है ' खुले में शौच करने की वजह से ही पोलियो, हैजा और एनीमिया जैसे बीमारियों का संक्रमण बढ़ता है। भारत में 80 फीसदी बच्चों में हैजा होने का कारण गंदा पानी है। प्रमुख कारण खुले में शौच करना ही है।'

रिपोर्ट की अन्य प्रमुख बातें

- 49 फीसदी घरों में खाना बनाने के लिए सूखी लकड़ियों का इस्तेमाल
- सिर्फ 42 फीसदी घरों में ही है बाथरूम
- नल से पेयजल की सहूलियत अभी तक सिर्फ 43 प्रतिशत लोगों तक
- 67 फीसदी घरों में बिजली उपलब्ध
- 31 प्रतिशत खाना पकाने के लिए केरोसिन पर निर्भर
- 59 फीसदी परिवार बैंक सुविधा का करते हैं इस्तेमाल

... तो हर घर में होगा शौचालय

स्वच्छता अभियान जयराम ने प्रधानमंत्री से मांगे 44 हजार करोड़ रुपए, गृह निर्माण-पेयजल-स्वच्छता एक योजना में शामिल किए जाएं

शिशिर सोनी | नई दिल्ली

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश की चली तो देश में स्वच्छता का महा-अभियान चल सकेगा। खुले में शौच की परंपरा बंद होगी। हर घर में शौचालय होगा। गरीबी रेखा से नीचे जीवन बसर करने वालों को शौचालय के निर्माण में केंद्रीय मदद 3 हजार 200 रुपए से बढ़ाकर 8 हजार रुपए दिए जा सकेंगे। 12वीं पंचवर्षीय योजना मे इस परियोजना को शामिल करने का अनुरोध करते हुए जयराम ने इस अभियान के लिए सीधे प्रधानमंत्री से मदद की अपील की है। पत्र में उन्होंने लिखा है कि महा-अभियान पर युद्धस्तर पर काम करने के लिए योजना आयोग को 44 हजार करोड़ रुपए का आवंटन सुनिश्चित करना चाहिए। 10वीं और 11वीं पंचवर्षीय योजना में इस मद में 2 हजार 100 और 7 हजार करोड़ रुपए का इंतजाम किया गया था। जयराम इस राशि में छह गुनी बढ़ोतरी चाहते हैं। ग्रामीण विकास के साथ स्वच्छता और पेयजल मंत्रालय का अतिरिक्त प्रभार संभाल रहे जयराम ने प्रधानमंत्री से अपील की है कि गृह निर्माण, पेयजल आपूर्ति और स्वच्छता को अलग-अलग योजनाओं में शामिल करने की बजाय बेहतर जीवन के लिए जरूरी तीनों विषयों को एक ही परियोजना में शामिल किया जाना चाहिए।

खुले में शौच राष्ट्रीय शर्मः

तीन पेज का पत्र लिखकर केंद्रीय मंत्री ने 21वीं सदी में भी खुले में शौच जाने को राष्ट्रीय शर्म की संज्ञा दी है। उन्होंने प्रधानमंत्री को याद दिलाते हुए लिखा कि हाल ही में आपने कुपोषण को राष्ट्रीय शर्म बताया था, ठीक ऐसे ही राष्ट्रीय शर्म का विषय है खुले में शौच जाना। प्रधानमंत्री को 38 पेजों का स्वच्छता के महा-अभियान का ब्लूप्रिंट भी पत्र के साथ नत्थी कर भेजा है। उन्होंने दावा किया है कि ब्लूप्रिंट पर अमल किया गया तो वर्ष 2017 तक पचास फीसदी और वर्ष 2022 तक शत-प्रतिशत घरों में शौचालय के निर्माण का लक्ष्य सरकार पूरा कर सकती है सौ फीसदी स्वच्छता अभियान को निर्मल-ग्राम परियोजना के अनुरूप चलाए जाने का अनुरोध प्रधानमंत्री से किया गया है। देशभर में 25 हजार निर्मल-ग्राम हैं, जिनमें अकेले महाराष्ट्र में 9 हजार निर्मल-ग्राम की स्थापना हो चुकी है।

यूनेस्को और डब्लूएचओ के एक रिपोर्ट को माध्यम बनाते हुए जयराम ने प्रधानमंत्री को बताया है कि देश में अभी 60 फीसदी गरीब जनता खुले में शौच जाने को विवश है। केंद्रीय मंत्री ने शौचालय बनाए जाने को दिए जा रहे 3 हजार 200 रुपए को नाकाफी बताया है। उन्होंने कहा कि ज्यादातर लोगों ने एक शौचालय के बनाने में कम से कम 8 हजार रुपए के खर्च का जिक्र किया है। मदद को बढ़ाए जाने की आवश्यकता पर उन्होंने खासा बल दिया है।

देश 2022 तक खुले शौचालय से होगा मुक्त

अमर उजाला ब्यूरो

सरकार ने रखा लक्ष्य, योजना साकार करने को बजट बढ़ाने की जरूरत

नई दिल्ली। सरकार ने स्वच्छता अभियान के तहत अगले दस वर्षों में देश को खुले शौचालय से मुक्त कराने का लक्ष्य रखा है। पंचायतों के जरिए इस योजना को साकार करने के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय ने योजना आयोग से स्वच्छता अभियान के तहत आवंटित की जाने वाली राशि को बढ़ाने का आह्वान किया है। मंत्रालय का कहना है कि लक्ष्य को समय पर पूरा करने के लिए बारहवीं पंचवर्षीय योजना में इस मद की राशि में कम से कम 60 फीसदी की बढ़ोतरी जरूरी है।

ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश के मुताबिक मौजूदा समय सिर्फ 10 फीसदी ही ग्राम पंचायतें ऐसी हैं जहां खुले में शौच की प्रथा समाप्त हो पाई है। लिहाजा अगले दस वर्षों में शेष 90 फीसदी ग्राम पंचायतों में खुले शौचालयों को समाप्त करने के लिए अधिक धनराशि और समयबद्ध कारगर योजना के साथ काम करना होगा। इसके लिए ग्रामीण परिवारों को घरों में शौचालय बनाने के लिए दी जाने वाली राशि बढ़ाने की आवश्यकता है। मौजूदा समय शौचालय बनाने के लिए प्रति परिवार को सरकार 3000 रुपये दे रही है। लेकिन महंगाई को देखते हुए इस राशि में शौचालय बन पाना संभव नहीं है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में यह योजना गति नहीं पकड़ पा रही है। रमेश ने बताया कि सभी ग्राम पंचायतों को वर्ष 2022 तक खुले शौचालय से मुक्त कराने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके लिए योजना आयोग से इस मद की आवंटन राशि में 60 फीसदी तक बढ़ोतरी करने की मांग की गई है।

बैतूल की अनीता को पांच लाख का सुलभ पुरस्कार

नई दिल्ली (एजेंसी)। देश में किफायती शौचालय आंदोलन को प्रोत्साहित करते हुए केंद्रीय ग्रामीण विकास, पेयजल एवं स्वच्छता मामलों के मंत्री जयराम रमेश ने शौचालय के अभाव में ससुराल छोड़ने वाली अनीता नर्रे को पांच लाख रुपये के सुलभ स्वच्छता पुरस्कार से सोमवार को यहां सम्मानित किया। मध्य प्रदेश में बैतूल जिले के जीतूढाणा गांव के शिवराम नर्रे से शादी करने वाली अनीता ससुराल में शौचालय सुविधा न होने के कारण अगले ही दिन मायके लौट आई थी और शौचालय बन जाने के बाद ही दोबारा ससुराल लौटी थी।

शौचालय के प्रति अनीता की जागरूकता और उसके कड़े कदम को ध्यान में रखते हुए गैर-सरकारी संगठन सुलभ इंटरनेशनल ने उसे पांच लाख रुपये का स्वच्छता पुरस्कार देने की घोषणा की थी।

इस अवसर पर जयराम रमेश ने सामाजिक संगठनों, स्व-सहायता समूहों एवं आम आदमी से स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ाने में सहयोग की अपील की। उन्होंने कहा कि सरकार का लक्ष्य आने वाले एक दशक के भीतर देश के प्रत्येक गांव को निर्मल ग्राम बनाने का है।

हालांकि उन्होंने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए देश के स्व-सहायता समूहों एवं गैर-सरकारी संगठनों के सहयोग को महत्वपूर्ण करार दिया। रमेश ने कहा कि देश में करीब ढाई लाख ग्राम पंचायत है लेकिन वह काफी दुखद है कि फिलहाल मात्र 25 हजार पंचायत ही निर्मल ग्राम पंचायत है। उन्होंने जनता से यह संकल्प लेने की अपील की कि वह भारत को निर्मल बनाकर ही दम लेगी। उन्होंने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि देश की 60 प्रतिशत महिला को शौच सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं।

- ससुराल में शौचालय सुविधा न होने के कारण अगले ही दिन मायके लौट आई थी अनीता और शौचालय बन जाने के बाद ही दोबारा ससुराल लौटी
- अनीता को 'स्वच्छता की दूत' की संज्ञा देते हुए देश की सभी महिलाओं को उनसे प्रेरणा लेने की सलाह

बैतूल जिले की जीतूढाणा गांव की अनीता को 'स्वच्छता की दूत' की संज्ञा देते हुए देश की सभी महिलाओं को उनसे प्रेरणा लेने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि सरकार ने भी आगामी बजट में पेयजल और स्वच्छता के मद में चालू वित्त वर्ष की तुलना में 40 फीसद अधिक राशि आवंटित की है जो इस दिशा में सरकार की सकारात्मक सोच का प्रतीक है।

जाने-माने सामाजिक कार्यकर्ता एवं सुलभ आंदोलन के प्रणेता डॉ. बिन्देश्वर पाठक ने कहा कि शौचालय उपलब्ध होने की बात पर विद्रोह पर उतरने वाली इस ग्रामीण महिला ने इस देश के लिए क्रांतिकारी कदम उठाया है, जहां 66 करोड़ की आबादी खुले में शौच करती है।

देखी सुनी अंक: 25 (राष्ट्रीय सहारा, अमर उजाला, दैनिक भास्कर व जनसत्ता) से लिये गये लेख,

दो टूक

ज्यां द्रेज

अर्थनीति

edit@amarujala.com

अपने-अपने गरीब

यही कारण है कि गोदामों में अनाज भरे हैं और गरीब भूखे मर रहे हैं

झारखंड के लातेहार जिले के डबलू सिंह के परिवार की दुर्दशा वर्तमान खाद्य नीतियों की विसंगतियों को जितनी मार्मिकता से उजागर करती है, उतनी शायद कोई और बात नहीं करती। दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर आदिवासी युवक डबलू तकरीबन दो साल पहले काम करते वक्त छत से गिर पड़ा और उसकी रीढ़ की हड्डी टूट गई। उसका परिवार भुखमरी के कगार पर खड़ा है। झारखंड में गरीबी रेखा (बीपीएल) से नीचे के परिवारों को प्रति माह एक रुपया की दर से 35 किलो अनाज हासिल करने का हक है। लेकिन डबलू सिंह के परिवार के पास बीपीएल कार्ड नहीं है।

बहरहाल, भारतीय खाद्य निगम के गोदाम एक बार फिर ठसाठस भरे हुए हैं। लेकिन डबलू सरीखे परिवारों की कमी नहीं। नेशनल सैंपल सर्वे के अनुसार, ग्रामीण भारत के कुल गरीब परिवारों में से तकरीबन आधे के पास बीपीएल कार्ड नहीं है, तो क्यों न इन परिवारों को भी बीपीएल कार्ड देकर उनमें अनाज बांट दिया जाए? डबलू सिंह की एकमात्र आशा यही है कि उसका दुख नजर में आ गया है। दुर्घटना के तुरत बाद सबसे पहले उस पर स्थानीय पत्रकार की नजर गई फिर जिला कलेक्टर और बाद में स्थानीय विधायक तथा बाकियों की। सबने माना कि फौरी राहत के तौर पर उसे बीपीएल कार्ड मिलना चाहिए।

लेकिन प्रशासनिक दांव-पेच के कारण जब उसे बीपीएल कार्ड नहीं मिला, तो डबलू के शुभचिंतकों ने यह मामला रांची से लेकर दिल्ली तक उठाया। जब सुप्रीम कोर्ट के कमिश्नरों ने कमान संभाली और जिला कलेक्टर को तलब किया, तब जाकर उसने माना कि जिला प्रशासन डबलू को बीपीएल कार्ड देने में लाचार है, क्योंकि इसके लिए किसी का नाम बीपीएल सूची से बाहर करना पड़ेगा। गौरतलब है कि जिले का बीपीएल कोटा निर्धारित है, इसलिए जिले की बीपीएल सूची से किसी का नाम हटाए बगैर उसमें नया नाम जोड़ा नहीं जा सकता।

लातेहार से दिल्ली तक फैली डबलू के शुभचिंतकों की एक पूरी टोली के एक साल से ज्यादा की कोशिशों के बावजूद कुछ हफ्ते पहले तक मामला यहीं तक पहुंचा था। खैर, स्थानीय प्रखंड आपूर्ति अधिकारी ने जुगत लगाई और बलि का बकरा ढूंढ निकाला। डबलू के गांव में किसी की मौत हो गई थी, उसकी पत्नी भी चल बसी थी और उसके बेटे को अलग से एक बीपीएल कार्ड था, इसलिए मृतक का नाम सूची से हटाकर उसमें डबलू का नाम जोड़ना ठीक जान पड़ा। इसमें 10-15 दिन लगे और डबलू को बीपीएल कार्ड मिल गया।

> **तमिलनाडु में जिस गरीब को रियायती दर पर अनाज मिलता है, वह झारखंड में इस सुविधा से वंचित क्यों है?**

लेकिन एक पेच और है : हो सकता है, डबलू जल्दी ही अपने बीपीएल कार्ड से वंचित हो जाए, क्योंकि मौजूदा 'बीपीएल जनगणना' पूरी होने के बाद बीपीएल सूची फिर से बनाई जानी है। और, इस जनगणना की पद्धति ऐसी है कि इसमें गरीब में गिने जाने के लिए निर्धारित सात 'कसौटियों' में से डबलू का परिवार बस एक पर खरा उतरता है। बीपीएल में डबलू के शामिल होने को तनिक और कठिन बनाने के लिए योजना आयोग ने साफ कर दिया है कि ग्रामीण इलाके में 26 रुपये प्रति व्यक्ति प्रतिदिन को गरीबों के आकलन में मानक मनाने वाली आधिकारिक गरीबी रेखा के हिसाब से बीपीएल की सूची आगे चलकर छोटी होने वाली है। डबलू को तो रोजाना कम से कम 25 रुपये अपने जरूरी डॉक्टरी देखभाल के लिए ही चाहिए।

कई राज्यों ने योजना आयोग की इस गरीबी रेखा के प्रति विद्रोह किया है और सार्वजनिक वितरण प्रणाली को बीपीएल सूची से ज्यादा बड़ा विस्तार दिया है। यदि डबलू तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश या छत्तीसगढ़ में रह रहा होता, तो उसे इस अग्निपरीक्षा से नहीं गुजरना पड़ता। तमिलनाडु में पीडीएस सार्वजनिक है, वहां हरेक के पास राशन कार्ड है। आंध्र प्रदेश में सरकारी नौकरी करने वाले को छोड़कर सबको राशन कार्ड के योग्य माना गया है। छत्तीसगढ़ में 'समावेशी पद्धति' का इस्तेमाल होता है, लेकिन समावेश की कसौटी व्यापक है। जैसे वहां अनुसूचित जाति-जनजाति के सभी परिवारों को राशन कार्ड के योग्य माना गया है और पीडीएस के दायरे में लगभग 80 फीसदी ग्रामीण आबादी शामिल है। फिर, राशन कार्ड की तालिका का नियमित अंतराल पर सत्यापन होता है।

लातेहार जैसे ग्रामीण इलाकों में सार्वभौमिक (यूनिवर्सल) पीडीएस की बड़ी जरूरत है। दरअसल ठेकेदारों और महाजनों को छोड़कर वहां कोई धनी आदमी नहीं है। अपने बच्चे का दाखिला तनिक बेहतर स्कूलों में करवाना हो, तब भी इलाके के ज्यादातर धनी लोग शहर चले जाते हैं। गांवों में लगभग सारे लोग या तो गरीब हैं या फिर गरीबी के कगार पर। फिर, स्थानीय प्रशासन इतना अकर्मण्य, भ्रष्ट और शोषक है कि न तो कोई विश्वसनीय बीपीएल सर्वेक्षण करा सकता है और न ही गरीबों को चिह्नित करने संबंधी कोई और काम।

प्रस्तावित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून, गरीबी रेखा से जुड़े इस दुःस्वप्न को समाप्त करने और इस बात को सुनिश्चित करने का एक अवसर है कि डबलू सरीखे परिवारों को खाद्य सबसिडी बतौर हक मिले। दुर्भाग्य से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के आधिकारिक मसौदे में बीपीएल वाली मानसिकता को ही नए कलेवर में पेश किया गया है। इस बीच सरकार ने खाद्य संकट के समाधान के नाम पर निजी निर्यातकों को बाजार में भी कम दाम पर अनाज बेचना शुरू कर दिया है।

- लेखक जाने-माने सामाजिक कार्यकर्ता और अर्थशास्त्री हैं।

पसंदीदा दुकान से अब राशन लें या कैश

सरकार ने नीलेकणि के फॉर्मूले को दी सैद्धांतिक मंजूरी

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के उपभोक्ताओं को जल्द ही एक नई सुविधा मिलने वाली है। वे या तो रियायती राशन को अपनी पसंदीदा दुकान से खरीद सकेंगे या फिर इसके बदले नकद ले सकेंगे। पीडीएस में सुधार का यह फॉर्मूला नंदन नीलेकणि की अगुवाई वाले टास्क फोर्स ने सरकार को सुझाया है। सरकार ने सैद्धांतिक तौर पर इन सुझावों को मंजूरी भी दे दी है।

गड़बड़ी रोकने के लिए टास्क फोर्स ने सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) और आधार कार्ड आधारित बैंक खातों के इस्तेमाल का भी फॉर्मूला सुझाया है। ये सुझाव टास्क फोर्स की ओर से तैयार 'आईटी स्ट्रेटजी फॉर द पीडीएस' को लेकर तैयार रिपोर्ट का एक हिस्सा है। यह रिपोर्ट बुधवार को वित्त मंत्री प्रणब मुखर्जी के समक्ष पेश कर दी गई। प्रणब को रिपोर्ट सौंपने के बाद यूआईडीएआई के चेयरमैन नंदन नीलेकणि ने कहा कि सरकार ने सैद्धांतिक तौर पर इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया है। अब इस पर

> **पीडीएस में सुधार को टास्क फोर्स ने आईटी के इस्तेमाल का भी दिया सुझाव**

समुचित कदम उठाने की तैयारी चल रही है। पीडीएस नेटवर्क में सुधार के लिए दो चरणों वाली रणनीति का सुझाव देते हुए टास्क फोर्स ने कहा है कि यह लाभार्थियों की इच्छा पर निर्भर करेगा कि वे या तो वे राशन खरीद के लिए अपनी पसंदीदा जगह, राशन की मात्रा और मिश्रण के बारे में बता सकते हैं या फिर वे राशन के मूल्य पर मिलने वाली सब्सिडी की रकम नकद ले सकते हैं। मौजूदा समय में पीडीएस उपभोक्ता केवल तयशुदा दुकान से तयशुदा मात्रा में ही राशन ले सकता है। देशभर में 4.62 लाख उचित मूल्य दुकानें हैं जिनके जरिए करीब 18 करोड़ परिवारों को 30 हजार करोड़ से ज्यादा कीमत के गेहूं, चावल, चीनी का वितरण किया जाता है।

मां होगी परिवार की मुखिया

राशन कार्ड में नाम ऊपर होगा, पैसा भी महिलाओं के नाम पर ही जारी होगा

पंकज कुमार पांडेय | नई दिल्ली

पितृ प्रधान समाज की धारणा धीरे-धीरे बदल रही है। 'मेरे पास मां है' का गर्वीला फिल्मी संवाद अब यूपीए सरकार के एक महत्वपूर्ण कदम से घर-घर की कहानी बन सकता है। केंद्र सरकार ने तय किया है कि अब खाद्य सुरक्षा का लाभ देने के लिए बनने वाले राशन कार्ड में अनिवार्य रूप से पहला नाम 'मां' का होगा। मां के बाद ही परिवार के अन्य सदस्यों के नाम दर्ज किए जाएंगे। केंद्रीय खाद्य वितरण व नागरिक आपूर्ति मामलों के मंत्री केवी थॉमस ने भास्कर से खास बातचीत में इसकी पुष्टि की।

उन्होंने कहा कि राशन कार्ड में अब किसी पुरुष का नाम पहले नहीं होगा। परिवार की मुखिया के तौर पर मां का नाम राशन कार्ड पर पहले दर्ज होगा। इसके अलावा खाद्य सुरक्षा कानून के तहत अगर किसी परिवार को कोई धनराशि दी जाएगी तो वह भी महिला के नाम से ही भेजी जाएगी। कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी के प्रयास से केंद्र सरकार ने खाद्य सुरक्षा कानून में महिलाओं से जुड़े सभी पहलुओं को खास तवज्जो दी है। एक अन्य अहम फैसले के तहत बच्चे को जन्म देने वाली मां को जन्म देने से लेकर छह माह की अवधि तक एक हजार रुपए प्रतिमाह दिए जाएंगे। कानून का अंतिम ड्राफ्ट मंत्रालयों की राय आने के बाद कैबिनेट में लाया जाएगा। थॉमस ने कहा कि सरकार इस विधेयक को शीतकालीन सत्र में लाना चाहती है, इसी दिशा में काम हो रहा है।

सोनिया के दखल से माने मंत्रालय

थामस ने बताया कि दूध पिलाने वाली मां को खाद्य सुरक्षा के दायरे में लाने पर कुछ मंत्रालयों और राज्यों ने सवाल उठाए थे। पर कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी के दखल से यह मामला सुलझ गया है। दरअसल एक नवजात के लिए आहार उसकी मां के दूध से ही मिलता है। ऐसे में खाद्य सुरक्षा के दायरे में दूध पिलाने वाली मां को लाना तार्किक है। कांग्रेस सूत्र मान रहे हैं कि अगर सरकार विधेयक शीतकालीन सत्र में लाती है तो इसका फायदा उसे पांच राज्यों के आसन्न विधानसभा चुनाव में भी मिल सकता है।

सूचना अधिकार की चुनौतियां

हरबंश दीक्षित

बीच बहस में

सूचना अधिकार के दुरुपयोग पर एक बार फिर बहस शुरू हो गई है। इस बार बहस की शुरुआत प्रधानमंत्री ने की है। इससे पहले सीबीआई तथा न्यायपालिका सहित कुछ लोकायुक्तों की तरफ से भी समय-समय पर ऐसे सुझाव आते रहे हैं। बीते अगस्त में सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि यदि इस कानून के दुरुपयोग को नहीं रोका गया, तो इससे कई समस्याएं खड़ी हो जाएंगी। अदालत ने यह भी कहा कि कोई राष्ट्र यह नहीं चाहेगा कि सरकारी विभागों के 75 फीसदी कर्मचारी अपने कामकाज के 75 फीसदी समय में केवल सूचनाएं देने में उलझे रहें, इससे काम बाधित होगा।

प्रधानमंत्री और शीर्ष अदालत की चिंता से सहमत होने वालों की अच्छी-खासी संख्या है। सरकारी दफ्तरों में तो ऐसे लोगों की संख्या बहुत ज्यादा है, जो इससे त्रस्त हैं। दूसरे कानूनों की तरह इस कानून के भी दुरुपयोग के मामले आ रहे हैं। कुछ जगहों पर इसे भयादोहन का हथियार बनाने की खबरें भी आई हैं। यदि सब कुछ इसी तरह चलता रहा, तो कुछ वर्षों में दफ्तरों में रोजमर्रा के मामलों के निस्तारण में देरी आएगी, जिस कारण यह कानून अप्रासंगिक हो जाएगा।

सूचना अधिकार कानून ने काफी कम समय में लोगों का इतना विश्वास हासिल किया है, जिसे कायम रखने की अपनी चुनौतियां हैं। यह अभी शुरुआती विकास के दौर में है, जिसे और मजबूत बनाए जाने की जरूरत है। इस कानून में सभी विभागों से अपेक्षा की गई है कि वे अपने विभाग से संबंधित तमाम जानकारियां इंटरनेट तथा अन्य माध्यमों से प्रकाशित करेंगे। इसे 12 अक्तूबर, 2005 तक ही पूरा किया जाना था, जो अब तक आंशिक रूप से ही पूरा हो पाया है। इसके लिए जवाबदेही भी सुनिश्चित नहीं की गई है और जवाबदेह अधिकारी को दंडित किए जाने का प्रावधान भी नहीं है। यदि वांछित सूचनाएं हर विभाग द्वारा उपलब्ध करा दी जाए, तो बहुत-सी आपत्तियों का स्वतः निवारण हो जाएगा।

मोटे अनुमान के मुताबिक, देश भर के सूचना आयुक्तों के यहां तीन लाख से ज्यादा मामले लंबित हैं। इसका सबसे बड़ा कारण जरूरत के अनुसार सूचना आयुक्तों का अभाव है। सूचना अधिकार कानून में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य में एक मुख्य सूचना आयुक्त तथा अधिकतम दस सूचना आयुक्त होंगे। सूचना आयुक्तों की यह अधिकतम संख्या उत्तराखंड तथा छत्तीसगढ़ जैसे छोटे राज्यों के लिए उपयुक्त हो सकती है, लेकिन उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्यों के लिए नाकाफी है। कानून में संशोधन कर हर जिले के लिए कम से कम एक सूचना आयुक्त की नियुक्ति जरूरी है।

विलंब का एक कारण यह भी है कि सूचना आयुक्तों के यहां विवाद निस्तारण की अधिकतम अवधि निर्धारित नहीं है, जबकि लोक सूचना अधिकारी के लिए तीस दिन तथा प्रथम अपीलीय अधिकारी के लिए पैंतालिस दिन का समय निर्धारित है। इसी का परिणाम है कि लोक सूचना अधिकारियों के समक्ष लंबित मामलों की संख्या नगण्य है, जबकि सूचना आयुक्तों के यहां लंबित मामलों की संख्या बढ़ती जा रही है।

बेशक इस कानून में भी खामियां हो सकती हैं, लेकिन इसने भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में नई इबारतें लिखी हैं। यही वजह है कि यह कानून जनप्रतिनिधियों और नौकरशाहों की आंखों की किरकिरी बना हुआ है। न्यायपालिका ने भी शुरू में खुद को इस कानून से अलग रखने की कोशिश की। सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों की संपत्ति का ब्योरा हासिल करने के लिए सूचना अधिकार के कार्यकर्ता सुभाष अग्रवाल को लंबी लड़ाई लड़नी पड़ी। अंततः न्यायाधीशों की परिसंपत्तियों की सूचना देने का फैसला आया, तो उससे पारदर्शिता के इस आंदोलन को एक नई दिशा मिली। इससे यह बात भी साफ हो गई कि गोपनीयता का सुरक्षा कवच सबको समान रूप से सम्मोहित करता है।

दरअसल जनाधिकारों को सर्वसुलभ बनाने की पहल दोधारी तलवार की तरह होती है, जिससे एक ओर जनाधिकारों को नई परिभाषा मिलती है, दूसरी ओर उसके दुरुपयोग की आशंकाएं भी रहती हैं। कई बार दुरुपयोग की सूचनाओं को अतिरंजित करके भी पेश किया जाता है। प्रभावशाली वर्ग इसे मौके के रूप में इस्तेमाल करके उसे कमजोर करने की कोशिश भी करता है। इसलिए एकतरफा बातों पर पूरी तरह भरोसा करना उचित नहीं है।

संभव है राष्ट्रीय स्तर पर शिकायत निवारण व्यवस्था

भारत डोगरा

लेखक स्तंभकार हैं।

सूचना के अधिकार के राष्ट्रीय अभियान ने शिकायत निवारण कानून का एक ड्राफ्ट तैयार किया है, जो काफी सराहा भी गया है। इस ड्राफ्ट को तैयार करने में सूचना के अधिकार के कानून के अनुभव से भी काफी सहायता मिल सकी है।

हाल के समय में सिटिजंस चार्टर व शिकायत निवारण व्यवस्था का मुद्दा काफी चर्चा में रहा है और कई राज्य सरकारों जैसे मध्य प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली आदि ने इस संदर्भ में कुछ सराहनीय कदम भी उठाए हैं। राष्ट्रीय स्तर पर शिकायत निवारण का कानून बनाने की दिशा में केंद्रीय सरकार सक्रिय हुई है।

जाहिर है, जनता की यह आवाज सरकार तक भी पहुंचने लगी है कि आम लोग अपनी शिकायतों की सुनवाई सरकारी तंत्र में न होने पर कितने परेशान होते हैं। अतः अब सरकार भी इस दिशा में कुछ महत्वपूर्ण पहल का मन बना चुकी है।

पर यह सवाल अभी हमारे सामने है कि इसके लिए बनाया जाने वाला कानून कितना मजबूत व व्यावहारिक स्तर पर कितना असरदार होगा। वह महज एक नया प्रशासनिक ढांचा खड़ा कर देगा या आम लोगों को सही अर्थों में सशक्त करेगा। इस दिशा में हो रहे अधिकांश प्रयासों में इतना तो सामान्य तौर पर माना जा रहा है कि विभिन्न सार्वजनिक प्राधिकरणों की नागरिकों के प्रति जिम्मेदारियों को समयबद्ध ढंग से परिभाषित किया जाए कि कौन-सा कार्य इनको कितने समय पर पूरा करना है। इसके साथ ही यह व्यवस्था हो कि यदि यह समयबद्ध जिम्मेदारी पूरी नहीं की जाती है तो इसके लिए समयबद्ध शिकायत निवारण प्रणाली विकसित की जाए।

इन मूल मान्यताओं के आगे कई सवाल हैं कि शिकायत निवारण व्यवस्था कितनी निष्पक्ष व न्यायसंगत बन सकेगी व आम लोगों को शीघ्र न्याय प्राप्त करने की कितनी संभावना होगी। विशेषकर दूर-दूर के गांवों में व निर्धन, कम शिक्षित परिवारों के संदर्भ में महत्वपूर्ण सवाल यह है कि क्या उन तक भी इस शिकायत निवारण व्यवस्था का लाभ पहुंच पाएगा, जबकि शिकायत निवारण की सबसे बड़ी जरूरत तो उनको ही है।

इस संदर्भ में सूचना के अधिकार के राष्ट्रीय अभियान ने शिकायत निवारण कानून का एक ड्राफ्ट तैयार किया है, जो काफी सराहा भी गया है। इस ड्राफ्ट को तैयार करने में सूचना के अधिकार के कानून के अनुभव से भी काफी सहायता मिल सकी है। जिस तरह सूचना के अधिकार के कानून में राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर सूचना आयोगों की स्थापना की व्यवस्था है वैसे इस ड्राफ्ट में शिकायत निवारण आयोगों की राज्य व केंद्र स्तर पर स्थापना की व्यवस्था है। शिकायत कानून के इस ड्राफ्ट में बताया गया है के देश के सभी ब्लाकों या प्रखंडों में शिकायत निवारण सहायता केंद्र स्थापित होने चाहिए, जो शिकायत निवारण के कार्य में आम लोगों विशेषकर कम शिक्षित व निर्धन परिवारों को सहयोग देंगे। सभी सार्वजनिक प्राधिकरणों में किसी अधिकारी को शिकायत निवारण अधिकारी के रूप में चयनित किया जाएगा। इस शिकायत निवारण अधिकारी को नागरिक व संगठन सीधे अपनी शिकायत भेज सकते हैं या उनकी शिकायत ब्लाक स्तर के शिकायत निवारण कार्यालय द्वारा भेजी जा सकती है।

उम्मीद है कि शिकायत निवारण अधिकारी समयबद्ध सीमा में शिकायत का संतोषजनक समाधान करेगा व जरूरत होने पर अधिकारी के लिए अनुकूल सजा की व्यवस्था भी करेगा, पर यदि उसके समय में कार्रवाई न की या उसके आदेश कार्यान्वित न हो तो इसकी अपील शिकायत निवारण आयोगों की जिला स्तर के शिकायत निवारण कार्यालय में की जा सकेगी। इस स्तर पर उम्मीद है कि शिकायत निवारण हो जाएगा। अधिकारी के दोषी पाए जाने पर सजा की व्यवस्था होगी। यदि भ्रष्टाचार का मामला बनता है तो इसकी अलग से जांच के लिए भेजा जाएगा। यदि यह आवश्यक समझा जाता है तो शिकायतकर्ता के लिए मुआवजे की व्यवस्था भी की जाएगी। जिला स्तर पर न्याय न मिलने पर राज्य व केंद्र स्तर के शिकायत निवारण आयोगों में अपील करने का प्रावधान भी इस ड्राफ्ट बिल में है।

इस ड्राफ्ट बिल की जानकारी अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए व विभिन्न संगठनों व नागरिकों के विचार इस बारे में प्राप्त करने के लिए सम्मेलन, कार्यशाला आदि का आयोजन किया जा रहा है। विभिन्न व्यवहारिक संदर्भों में यह कानून कैसे काम कर सकता है, इसकी बेहतर समझ बनाने के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, आवास, मनरेगा, बिजली, पानी, सामाजिक सुरक्षा, पंचायत राज, पर्यावरण व वन आदि के संदर्भ में शिकायत निवारण प्रणाली कैसे कार्य करेगी, इस बारे में कार्यशालाओं का आयोजन किया जा रहा है।

■ जगन्नानंद
राज्य सूचना आयुक्त, उड़ीसा

अभी तो पूरे प्रावधान ही लागू नहीं हुए

सारे लोगों के जीवन को प्रभावित करता है, उसे लागू करने से थोड़े पहले से आम लोगों के इस्तेमाल के लिए उपलब्ध कराना चाहिए, इससे आम लोगों की प्रस्तावित नियमों पर क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका फीडबैक मिल जाएगा और इस फीडबैक के आधार पर कानून या नियम में तर्कसंगत बदलाव करना संभव होगा। यह भी अभी तक नहीं हो पाया। अगर ऐसा हो जाता है तो लोग और प्रशासन के बीच आपसी रिश्ता ज्यादा सहज हो पाता।

आरटीआई के बारे में ही लोगों को बहुत कम जानकारी है। शहर में कुछेक जानते भी हैं तो गांव के गांव अनजान हैं। इसके लिए पंचायत स्तर पर एक सूचना सहायता केंद्र खोलना जरूरी है। संसद से लेकर पंचायतों के कामकाज का कम्प्यूटरीकरण बाकी है। सरकारी या सरकारी मदद से चलने वाली संस्थाओं को अपने नियमों की जानकारी 120 दिनों के भीतर ऑनलाइन करने का काम नहीं हुआ है। सूचना छिपाने की गुंजाइश खोजने वाले अफसरों को प्रशिक्षित किया जाना है। फिर केंद्र-राज्य सूचना आयुक्तों की वार्षिक सिफारिश रिपोर्टों पर भी एक्शन लिया जाना है

सूचना अधिकार कानून को दो अहम उद्देश्य से लागू किया गया था। पहला यह कि इससे व्यवस्था में शुचिता और जवाबदेही लाई जा सकेगी जिससे पारदर्शिता बढ़े और भ्रष्टाचार कम हो जाए। दूसरा मकसद यह था कि जितनी सरकारी संस्थाएं हैं या फिर वैसी संस्थाएं हैं, जो सरकार से मदद लेती हैं और संविधान द्वारा सत्यापित की गई हैं, उन्हें अपनी-अपनी कार्यप्रणाली और कार्यक्रम और सम्बन्धित नियमों को 120 दिनों के अंदर वेबसाइट पर डालना था। इसके अलावा कोई भी नागरिक अगर कोई सूचना चाहे तो उसे 30 दिनों के अंदर मुहैया कराना था। छह साल बाद भी इस दूसरे पहलू पर काफी काम बाकी है।

अगर सरकारी विभाग और संस्थाएं इस काम को सही ढंग से पूरा कर लेती तो कई मामलों में सूचना मांगे जाने की जरूरत ही नहीं होती। इस कानून के तहत पंचायत से लेकर संसद तक की कार्यप्रणाली और कामकाज को कम्प्यूटराइजेशन करने की बात शामिल थी। छोटे से लेकर बड़े काम तक ऑनलाइन दस्तावेज बन जाता है, जिसे कोई भी इंटरनेट के जरिए देख सकता था लेकिन यह काम अभी तक नहीं हो पाया है। हालांकि समाज में आरटीआई एक्ट को लेकर एक माहौल जरूर बना है। सरकारी कामकाज पर गलती होने पर सवाल उठ रहे हैं। लोग बाग आरटीआई के जरिए सरकारी कामकाज के बारे में तरह-तरह के सवाल भी पूछ रहे हैं लेकिन यह शहरी इलाकों में कहीं ज्यादा हो रहा है। देश की ग्रामीण आबादी अब भी इस कानून का पूरा लाभ नहीं उठा रही है। गांवों में चले जाइए या फिर आदिवासी बहुल इलाकों में जाकर देखिए तो पता चलेगा वहां के लोगों को इस कानून के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है। जिन लोगों के पास थोड़ी-बहुत जानकारी है, उनमें भी यह समझ नहीं है कि इस कानून का इस्तेमाल कैसे करें? कहां से जानकारी मांगें? कहां फीस जमा करनी है और वह जानकारी कैसे हासिल होगी?

इसकी वजह यही है कि सरकार को इस कानून का जितना प्रचार-प्रसार करना चाहिए था, वह नहीं हो पाया है। हालांकि कुछ राज्यों में इसको लेकर सराहनीय काम जरूर हुए हैं। मसलन, बिहार सरकार ने अपने जानकारी सेंटर की व्यवस्था की है, जहां एक टेलीफोन कॉल पर ही आपका आरटीआई रजिस्टर हो जाता है। यह एक अच्छी व्यवस्था है। मेरे राज्य उड़ीसा में कई सामाजिक संस्थाएं आरटीआई क्लीनिक चलाती हैं, जहां वे आदिवासी और गरीब लोगों तक इस कानून के इस्तेमाल के बारे में जानकारी देते हैं। एक सिटीजन असिस्टेंस सेंटर का हर पंचायत में होना जरूरी है तभी पूरे लोग इस कानून का लाभ ले पाएंगे। एक बड़ी मुश्किल अब भी बनी हुई है- - वह है सरकारी विभागों में काम करने वाले लोगों की मानसिकता है। जो सरकारी गोपनीयता अधिनियम का हवाला देकर जानकारी को छुपाने की मानसिकता से अभी तक उबर नहीं पा रहे हैं। इसलिए कभी-कभी आरटीआई आवेदन पत्र पर सरकारी विभाग की पहली प्रतिक्रिया यही होती है कि किस चीज को आधार बनाकर जानकारी देने से मना कर दिया जाए। सूचना अधिकारियों की नियुक्ति को सही ढंग से प्रशिक्षण देने की जरूरत है। इस कानून में एक और बात शामिल थी। धारा 4 (1) के तहत एक महत्वपूर्ण पहलू भी शामिल था, जिसके तहत कहा गया था कि कोई भी नीति या नियम जो एक साथ बहुत ज्यादा सहज हो पाता।

इसके अलावा प्रत्येक सरकारी विभाग के लिए इस कानून की धारा 4 (1) के तहत यह भी प्रावधान है कि वह कामकाज प्रणाली के बारे में वह आमलोगों को सूचना पट्ट के जरिए सूचित करें। मान लीजिए किसी को नगर निगम से अपने मकान का नक्शा पास कराना है तो नगर निगम में इस बात की सूचना पहले से उपलब्ध होनी चाहिए कि आपको मकान का नक्शा कितने दिन के अंदर मंजूर होगा। तभी लोगों को किसी काम को लेकर दफ्तरों के लगातार चक्कर काटने और रिश्वत देने का सिलसिला बंद होगा। यह काम अभी भी सरकारी दफ्तरों में नहीं हुआ है।

इस कानून के सुचारु तरीके से लागू कराने के लिए देश भर में कमीशन बने हुए हैं। केंद्र में केंद्रीय सूचना आयुक्त हैं तो राज्यों में भी सूचना आयुक्त हैं। इनके जिम्मे मुख्यतः दो काम हैं-एक तो मामलों को जल्दी से निपटाने की व्यवस्था करनी है और आरटीआई एक्ट के ऊपर भी निगरानी रखनी है। दूसरी जिम्मेदारी यह है कि आरटीआई एक्ट कैसे चल रहा है, इस पर सरकारों को अपनी रिपोर्ट देनी होती है। केंद्रीय सूचना आयुक्त हर साल संसद को अपनी रिपोर्ट देते हैं जबकि राज्य सूचना आयुक्त हर साल विधानसभा को अपनी रिपोर्ट सौंपते हैं। इन रिपोर्टों में सुझाव होते हैं, जिनके जरिए इस कानून को बेहतर बनाया जा सकता है। दुखद है कि अब तक इन रिपोर्टों पर ध्यान ही नहीं दिया है जबकि जरूरत इस बात की है कि इन रिपोर्टों के आधार पर एक एक्शन टेकन रिपोर्ट हर साल पेश किया जाना चाहिए। बहरहाल, यह एक ऐतिहासिक कानून है और इस पर निगरानी के लिए एक सक्रिय नागरिक समाज की जरूरत है।

देखी सुनी अंकः 25 (राष्ट्रीय सहारा, अमर उजाला, दैनिक भास्कर व जनसत्ता) से लिये गये लेख,

बजट में भी हाशिये पर स्त्री

डॉ. रंजना कुमारी

महिला अधिकारिता संगठन से संबद्ध

- स्टेइंग अलाइव रिपोर्ट को जारी करते वक्त महिला बाल कल्याण मंत्री कृष्णा तीरथ ने कहा कि उनका मंत्रालय चालू वित्तीय वर्ष में देश के सर्वाधिक अपराधग्रस्त 100 जिलों में 100 करोड़ रुपये की मदद से सीएसएस लागू करेगा
- सवाल है कि क्या सरकार मामूली अपराध क्षेत्र की महिलाओं की सुरक्षा के लिए जवाबदेह नहीं है?

सार्वजनिक

दायरे में बढ़ी हिंसा निजी घेरे में हो रही हिंसा से कम है। तथाकथित पूरी तरह संरक्षित कही जाने वाली 'परिवार' नामक संस्था में भारतीय स्त्री की अरक्षा ने अति खतरनाक आयाम लिये हैं। आंकड़े (एनएफएचएस-3) बताते हैं कि पांच में से दो विवाहिताएं घरेलू हिंसा की शिकार होती ही हैं। यह तब है जबकि घरेलू हिंसा से स्त्री की सुरक्षा कानून (पीडब्ल्यूडीवीए) के लागू होने का यह सातवां साल है। लागू कानून यह संदेश देता है कि घर परिवार में होने वाले मामूली झगड़े पहले से बढ़े हैं और इसने स्त्री विरुद्ध हिंसा का भयावह रूप ले लिया है। यह कानून प्रतिरक्षा अधिकारी (पीओ), सेवाएं देने वाले; जैसे, आश्रय गृह और चिकित्सा सुविधाएं मुहैया कराने वाले और पीड़ित महिला तक कानून की पहुंच वाली दुनिया का उल्लेख करता है। हालांकि पीडब्ल्यूडीवीए भी, स्त्री अधिकार संरक्षा के अन्य नियमनों की तरह, पर्याप्त बजटीय प्रावधान के अभाव में संतुलन खो रहा है। जरूरतों के मुताबिक धन का इंतजाम न किए जाने से पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन पर बुरा असर पड़ा है। इस तरह कि आज भी बेशुमार महिलाएं अपने हित में बने इस कानून से अनजान हैं। जिन संरक्षण अधिकारी (जैसे बाल विकास परियोजना अधिकारी, जिला समाज कल्याण अधिकारी इत्यादि) को हिंसा की शिकार स्त्री तक सबसे पहले पहुंचने की बात की गई है, वे पहले से ही तय कामों के बोझ तले लदे मिलते हैं। नतीजा होता है कि बुरी तरह बिगड़ी परिस्थितियों से निबटने के लिए कभी-कभी किसी नौसिखुए को मौके पर भेज दिया जाता है। इनके अलावा, सेवा प्रदान करने वालों को भी इतनी समुचित राशि नहीं मिलती कि वह अपनी निर्धारित जिम्मेदारियों को ठीक से निबाह सकें। हिंसा की सही वजहों की स्पष्ट समझदारी के अभाव में पीओ, एसपी, पुलिस, वकील और न्यायाधीश बहुधा परिणामों और समझौते कराने जैसे फैसले लेते हैं या पीड़िता पर 'बुरी औरत' होने और 'घर तोड़ने वाली' जैसे आरोप नत्थी कर देते हैं।

अतः स्त्री सशक्तीकरण ऐसे मिजाज में सही तरीके के सुधार लाने में अहम किरदार निभाता है। सरकार के भीतर भी ऐसी कोई प्रणाली नहीं विकसित की गई है, जहां पीडब्ल्यूडीवीए मामलों की रपट कर सके और निगरानी के ब्योरे दे सके। यह पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन के हरेक स्तर; जैसे, महिलाओं में उनके अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने, क्षमता अभिवर्द्धन, नोटिस की सेवा, आदेश के लागू होने या उसका उल्लंघन किए जाने के परिणाम आदि पर विपरीत असर डालता है। सबसे बढ़कर तो हिंसा की शिकार औरत को सामान्य करने के लिए परामर्श देने, आश्रय, स्वास्थ्य सेवाएं और वित्तीय सहायता की जरूरत पड़ती है।

हालांकि अभी कुछेक ही राज्यों ने पीडब्ल्यूडीवीए को लागू करने की दिशा में कदम उठाए हैं लेकिन इन प्रदेशों को कभी भी ये योजनाएं फालतू लगीं तो वे उन्हें जारी करने से हाथ खींच सकते हैं। अपराध की ऊंची दर (खासकर घरेलू हिंसा मामले में) वाले किंतु आर्थिक रूप से पिछड़े अनेक राज्यों ने इस दलील से पीडब्ल्यूडीवीए के लिए अलग से धन का आवंटन नहीं किया है कि वे इसे मौजूदा महिला कल्याण योजना के अंतर्गत ही पीडब्ल्यूडीवीए के प्रावधानों को क्रियान्वित कर लेने में सक्षम हैं। चूंकि महिला एवं बाल कल्याण मंत्रालय (एमडब्ल्यूसीडी) ने अधिनियम के तहत बजट आवंटन के कोई मानक उन्हें नहीं थमाए हैं, ऐसे में उसकी पहुंच के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता।

जेंडर बजट

महिलाओं के लिए आवंटन

(राशि 1000 करोड़ रुपये में)

	100%	30%	कुल
2007-08	8.4	14	22.3
2008-09	14.9	34.7	49.6
2009-10	15.5	40.8	56.3
2010-11	18.5	48.6	67.1
2011-12	20.5	56.4	76.9
2012-13	23	65.2	88

दरअसल, पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन के लिए पर्याप्त कोष आवंटन में सरकार की विफलता घरेलू हिंसा रोकने, स्त्रियों की सुरक्षा और समानता सुनिश्चित करने की उसकी प्रतिबद्धता, जिसका भारतीय संविधान में समर्थन किया गया है, पर सवाल खड़े करती है

यद्यपि महिलाएं सरकार के सालाना वित्तीय आंकड़ों को खंगालना शुरू कर दिया है; उनमें स्त्री के सभी मामलों को कोई प्राथमिकता नहीं दी गई है। इसका स्पष्ट मतलब है कि महिलाओं से जुड़ी परियोजनाओं को मामूली राशि दी गई है, जैसा कि पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन मद में किया गया है। वर्तमान में चल रही अधिकतर परियोजनाओं के लिए बहुत कम धन आवंटित किया गया है जबकि ये 12 वीं पंचवर्षीय योजना के लिए महिलाओं की एजेंसी और सशक्तीकरण पर संचालन समिति द्वारा प्रस्तावित हैं। 2012-13 के बजट अनुमानों के मुताबिक मंत्रालय का सकल बजट 18,500 करोड़ रुपये का है, जिसमें से महिलाओं के कल्याण मद में 858.68 करोड़ रुपये ही रखे गए हैं। हालांकि पीडब्ल्यूडीवीए का बजट अनुमान में उल्लेख किया गया है लेकिन इसके लिए राशि अति न्यून 20 करोड़ रखी गई है। राष्ट्रीय महिला आयोग (एनसीडब्ल्यू) और नागरिक समाज की एक समिति ने पीडब्ल्यूडीवीए पर प्रभावी अमल के लिए मार्च 2012 में केंद्र प्रायोजित योजना (सीएसएस) को अंतिम रूप दिया था, जिसके तहत इस मद में 1158 करोड़ रुपये का वार्षिक बजट तय किया गया था। महिला एजेंसी और सशक्तीकरण के लिए काम करने वाले कार्यकारी समूह ने 12 पंचवर्षीय योजना की पूरी अवधि में शुरू होने वाली नये कार्यक्रमों के लिए महज 450 करोड़ रुपये के कोष का प्रस्ताव किया था। यह अनुमानित सालाना रकम 1158 करोड़ रुपये की तुलना में बहुत मामूली और अपर्याप्त ठहरती है। हालांकि इस बात पर चुप रहा गया है कि कब ये सीएसएस लागू की जाएगी और पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन पर कितना धन आवंटित किया जाएगा।

स्टेइंग अलाइव रिपोर्ट को 21 जनवरी, 2013 को जारी करते वक्त अपने उद्घाटन भाषण में महिला बाल कल्याण मंत्री कृष्णा तीरथ ने साझा किया कि उनका मंत्रालय चालू वित्तीय वर्ष में देश के सर्वाधिक अपराधग्रस्त 100 जिलों में 100 करोड़ रुपये की मदद से सीएसएस लागू करेगा। यहीं सवाल उठता है कि क्या सरकार मामूली अपराध क्षेत्र की महिलाओं की सुरक्षा के लिए जवाबदेह नहीं है? इससे भी बढ़कर यह कि 100 करोड़ की राशि भी अनुमानित सालाना बजटीय जरूरत 1158 करोड़ से कम है। दरअसल, पीडब्ल्यूडीवीए के क्रियान्वयन के लिए पर्याप्त कोष आवंटन में सरकार की विफलता घरेलू हिंसा रोकने, स्त्रियों की सुरक्षा और समानता सुनिश्चित करने की उसकी प्रतिबद्धता, जिसका भारतीय संविधान में समर्थन किया गया है, पर सवाल खड़े करती है। इस चेतावनी को वित्त मंत्रालय की सहमति-पत्र से ही निबटा जा सकता है। हालांकि वित्त मंत्रालय का इस मसले पर स्त्री समूहों के साथ मुलाकात और बातचीत का द्वार बंद करना दुर्भाग्यपूर्ण है। लिहाजा, यहां हमें माननीय मंत्री गण से पूछना है कि 'आप लोग जब कानून पर अमल नहीं कर सकते तो उन्हें बनाते ही क्यों हो?'

राष्ट्रीय सहारा 23.2.2013

महिलाओं के लिए बैंक जैसे कदम महज 'प्रतीक' हैं : जेएस वर्मा

अलीगढ़ (एजेंसी)। पूर्व प्रधान न्यायाधीश जेएस वर्मा ने शनिवार को कहा कि महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तनों के बिना महिलाओं के लिए प्रस्तावित विशेष बैंक जैसे कदम देश में उनके प्रति न्याय सुनिश्चित करने की दिशा में महज प्रतीक हैं। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में तृतीय वार्षिक कैप्टन सिंह स्मृति व्याख्यान देते हुए वर्मा ने महिला बैंक की स्थापना के प्रस्ताव का हवाला दिया। उन्होंने कहा कि 'जब तक सरकार और समाज दोनों स्तरों पर सोच में पूरी तरह बदलाव नहीं आएगा तब तक इस तरह के प्रतीकात्मक उपायों का कोई फायदा नहीं होगा।' पूर्व प्रधान न्यायाधीश ने दिल्ली में 16 दिसम्बर को सामूहिक बलात्कार की घटना के बाद महिलाओं के खिलाफ अपराधों से संबंधित कानूनों की समीक्षा करने वाली तीन सदस्यीय समिति का नेतृत्व किया था।

वर्मा ने कहा, 'किसी भी समाज में न्याय का कल पारदर्शिता है। सीधा सच यह है कि सभाल हमारे घरों में

महिलाओं के साथ वास्तविक न्याय को मजबूत करने की जिम्मेदारी से बच नहीं सकता।' समिति ने महिलाओं के प्रति अपराधों को रोकने के लिए कड़े कानूनों की सिफारिश की थी, लेकिन पूर्व प्रधान न्यायाधीश का मत था कि 'जब तक समाज का अनुमोदन, समर्थन नहीं मिलता तब तक कानूनी प्रणाली में किसी भी बदलाव का कोई फायदा नहीं होगा।' वर्मा ने कहा कि 'यदि मौजूदा कानूनों और शासन संबंधी दिशा निर्देशों का पूरी तरह क्रियान्वयन हुआ होता तो राष्ट्रीय राजधानी में 16 दिसम्बर को भयावह बलात्कार की घटना नहीं हुई होती।' महिलाओं के खिलाफ अपराधों को लेकर कुछ तबकों में 'संवेदनशीलता की कमी' का हवाला देते हुए वर्मा ने दिल्ली बलात्कार की घटना के मद्देनजर 'कुछ तथाकथित गुरुओं' की टिप्पणियों पर हमला बोला। उन्होंने कहा कि समाज के ऊपरी तबके की ओर से आई टिप्पणियां 'पक्षपातपूर्ण, पुरुष प्रधान सोच' के 'हास्यास्पद' उदाहरण हैं।

राष्ट्रीय सहारा 3.3.2013

बजट तक पहुंची 'निर्भया' की गूंज

अंजलि सिन्हा

निर्भया, जिसने दिल्ली ही नहीं, देश के तमाम हिस्सों में तरुणाई को आन्दोलित किया, जो महिलाओं की बढ़ती असुरक्षा एवं उनके खिलाफ बढ़ती यौन हिंसा का प्रतीक बन कर देश में उभरी, उसने सपने में भी नहीं सोचा होगा कि उसकी कुर्बानी को एक दिन सरकार को भी स्वीकार करना पड़ेगा। अपना आठवां बजट पेश करते हुए वित्तमंत्री पी चिदम्बरम द्वारा की गयी यह घोषणा कि यह सरकार महिलाओं की सुरक्षा के लिए विशेष निर्भया फंड बनाने जा रही है और जिसके लिए एक हजार करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं, से यही निष्कर्ष निकलता है। मालूम हो कि इस फंड के इंतजाम के लिए ढांचा बनाने, उसके दायरे को तय करने एवं उसे आवंटित करने की जिम्मेदारी महिला एवं बाल विकास मंत्रालय को सौंपी गयी है। प्रस्तुत मंत्रालय को अतिरिक्त 200 करोड़ की राशि भी दी जा रही है ताकि वह कठिन परिस्थितियों में रहनेवाली महिलाओं के मामलों में सहायता प्रदान कर सके।

स्त्रियों में आ रही जागृति, उनके बढ़ते दायरे को रेखांकित करता दूसरा कदम यह भी दिखाता है कि इस बार बजट में सार्वजनिक क्षेत्र में देश के पैमाने पर महिला बैंक बनाने का प्रस्ताव रखा गया है और उसके लिए भी एक हजार करोड़ रुपए का प्रावधान है। अक्तूबर तक इस बैंक के स्थापित किए जाने की योजना है, जो मुख्यतः महिलाओं एवं महिलाओं द्वारा संचालित उद्योगों, महिला स्वयं सहायता समूहों और महिलाओं के जीवनयापन में सहायक होगा। इसमें मुख्यतः महिलाएं ही काम करेंगी ताकि उनके जेंडर व आर्थिक सशक्तिकरण के मुद्दों का ठीक से समाधान हो सके।

स्त्रियों की सुरक्षा की गारंटी के लिए इस तरह के फंड का गठन किस हद तक कारगर होगा या आर्थिक सशक्तिकरण के सन्दर्भ में महिलाओं का बैंक उनकी कितनी सहायता करेगा, इन मुद्दों की विवेचना करने से पहले इस बात को समझना जरूरी है कि इस बजट पर हाशिये से केन्द्र में पहुंचने के लिए तत्पर स्त्री समुदाय की दस्तक जरूर सुनाई देती है। वैसे इसमें कोई दो राय नहीं कि हम दुनिया का एकमात्र देश होंगे जहां आवश्यक सामाजिक सेवाओं के सार्वजनिक वितरण को 'योजनाओं' के सन्दर्भ में देखा जाता है, जिन्हें कृतज्ञ जनता के लिए सरकारें 'लोकरंजक खर्चों' के नाम पर पेश करती हैं। अन्यथा तमाम देशों में यह सरकारों का ही काम होता है कि वह जनता के पोषण, स्वास्थ्य, शिक्षा, सैनिटेशन और रोजगार व जीवनयापन जैसी स्थितियों को सुगम बनाएं। जैसा कि पिछले साल के बजट विश्लेषण में प्रोफेसर जयति घोष ने कहा था कि हम इन्हें 'योजनाओं' के तौर पर देखने के आदी हो गए हैं, इसलिए थोड़ी बहुत बढ़ोत्तरी होने मात्र से हम खुश हो जाते हैं, इसी बात पर कृतज्ञ रहते हैं कि कम से कम सरकार ने खर्चा बढ़ाया तो नहीं है।'

इस रोशनी में अगर हम वित्तमंत्री पी चिदम्बरम द्वारा प्रस्तुत आठवें बजट को देखें, जिसे मीडिया के एक हिस्से द्वारा समावेशी बजट की संज्ञा दी जा रही है, तो कुछ बातें समझ में आती हैं। जैसे इसे कहीं न कहीं अगले साल होने वाले आम चुनावों के मद्देनजर बनाया गया है, जिसमें हर सेक्टर को कुछ न कुछ रियायत देने की बात की गयी है और महिलाओं का खास ध्यान रखने की भी कोशिश की गई है। अगर समावेशी बढ़ोत्तरी के लिए कई योजनाओं का ऐलान

किया गया है, जिसमें फोकस महिलाओं समेत सामाजिक क्षेत्र एवं ग्रामीण भारत दिखता है तो वहीं कारपोरेट क्षेत्र को भी खुश रखने की कवायद की गयी है। लेकिन बड़ा प्रश्न यह उठता है कि मसलों की व्यापकता को देखते हुए विभिन्न क्षेत्रों में आवंटित रकम काफी है या नहीं।

जैसे स्वास्थ्य को ही देखें जिसका सम्बन्ध समूची आबादी से है, का खर्चा पिछले साल 30,702 करोड़ रुपए था और इस साल 37,330 करोड़ हो गया है। अगर भारत के सकल घरेलू उत्पाद को देखें तो इसका यह 0.35 फीसद ही बैठता है। मालूम हो कि सबसहारन अफ्रीका के तमाम गरीब देशों में भी यह प्रतिशत हमसे कई गुना ज्यादा है। जब लगता है कि मानवीय विकास सूचकांक एवं जीवन की परिस्थितियों के मामले में हम अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर कितने पिछड़े हैं। महिला और बाल स्वास्थ्य की बात करें तो हमारे देश में मातृ शिशु मृत्यु दर का चिन्ताजनक होना दशकों से एक बड़ा सवाल बना हुआ है।

बजट में महिला एवं बाल विकास मन्त्रालय द्वारा संचालित आईसीडीएस (समेकित बाल विकास सेवा) योजना के लिए 17,7,00 करोड़ रुपयों का आवंटन किया गया है, जो पिछले साल की तुलना में 11.7 फीसद ज्यादा है। मगर क्या इस बढ़ोत्तरी से हम खुश हो सकते हैं। निश्चित ही नहीं। इसकी कई वजहें हैं। अभावग्रस्त बच्चों की शुरुआती देखभाल एवं शिक्षा के लिए चलायी जा रही प्रस्तुत योजना के लिए किए गए इस बार के आवंटन को देखें तो यह उम्मीद से कम है। पिछले साल भी इस राशि में बढ़ोत्तरी की गयी थी लेकिन तब भी सवाल उठा था कि एक तो इसका अधिकतर हिस्सा आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं एवं सहायकों के मानदेय में खर्च हो जाता है, दूसरा सुप्रीम कोर्ट द्वारा बार-बार की गयी आलोचना के बावजूद अब भी हम इस योजना को सार्विक या युनिवर्सल नहीं बना सके हैं। आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को अब भी कानूनी तौर पर तय न्यूनतम राशि नहीं दी जा रही है। स्पष्ट है कि यदि सरकार अभावग्रस्त बच्चों के कल्याण के लिए गंभीर है तो उसे इस राशि को अधिक बढ़ाना चाहिए था। इसका सीधा सम्बन्ध महिलाओं की अर्जन क्षमता बढ़ाने से भी है क्योंकि बच्चों के पालन-पोषण की अत्यधिक जिम्मेदारी के कारण उन्हें सार्वजनिक दायरे की नौकरियों से अक्सर हाथ धोना पड़ता है।

अन्त में, महिला सशक्तिकरण व कल्याण के लिए किये गये प्रावधानों का स्वागत होना चाहिए लेकिन यह सावधानी बरतनी जरूरी है कि नयी योजनाएं शुरू करने के क्रम में पुरानी चल रही योजनाओं को चुपचाप बन्द न कर दिया जाए। याद रहे कि 12 वीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनी 'स्टीयरिंग कमेटी ऑन वुमेन्स एजेंसी एंड एम्पॉवरमेंट' के सुझावों के विपरीत महिलाओं के लिए पहले से चली आ रही योजनाओं के लिए भी आवंटन कम था। 11वीं योजना में महिला सशक्तिकरण के मुख्य माध्यम के तौर पर प्रस्तुत की गयी 'स्वयंसिद्धा' योजना के लिए तो कोई फंड आवंटित ही नहीं किए गए, जबकि स्टीयरिंग कमेटी ने प्रस्ताव रखा था कि इस योजना को देश के हर ब्लॉक स्तर तक फैलाया जाए और 12 वीं योजना में उसके लिए कम से कम 1700 करोड़ रुपए का आवंटन हो। कहने का आशय सिर्फ इतना है कि लोक-लुभावन और समावेशी योजनाओं की सार्थकता तभी है जब व्यावहारिक तौर पर उनका क्रियान्वयन ठीक तरीके से हो। महिला सशक्तिकरण की दिशा में उठाये गये प्रयासों के प्रति सरकार गंभीर होगी, तभी बात बनेगी।

राष्ट्रीय सहारा 23.2.2013

आर्थिक आजादी की दिशा में बढ़ें कदम

मनीषा सिंह

आज की तारीख में दुनिया में सिर्फ सऊदी अरब ऐसा मुल्क है जहां पूरी तरह महिलाओं द्वारा संचालित एक बैंक (ऑल वूमेन) काम कर रहा है। इधर जब वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने बजट पेश करने के दौरान देश में नवम्बर तक इसी तरह का पहला ऑल वूमेन बैंक खोलने और इसके लिए आरंभ में एक हजार करोड़ रुपयों की व्यवस्था सरकार की ओर से करने की घोषणा की, तो एक उम्मीद बंधी कि आखिरकार सरकार का ध्यान महिलाओं से जुड़े उस पहलू की तरफ गया है जिसकी वजह से उनकी स्थिति सदियों से देश के पितृसत्तात्मक समाज में दीन-हीन याचक जैसी बनी हुई है। लेकिन सौ टके का सवाल जहां का तहां है कि क्या इसे वाकई एक गंभीर प्रयास माना जाए और क्या इससे वास्तव में महिलाओं की आर्थिक हैसियत में कोई बदलाव आएगा? साथ ही यह भी कि पूरी तरह महिला हितों का चिंता करने वाले इस बैंक का स्वरूप कैसा होगा?

इन सवालों के उत्तर तो आने वाले समय में मिल ही जाएंगे लेकिन इस पहल के परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की आत्मनिर्भरता का प्रश्न एक बार फिर जेहन में घूम रहा है। इस तथ्य से हर कोई भलीभांति परिचित है कि आर्थिक आजादी का अर्थ है- अन्य सभी तरह की आजादियों को हासिल करना। यूं तो यह तथ्य या परिभाषा स्त्री और पुरुष, दोनों पर समान रूप से लागू होती है, पर तमाम अर्थों में महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता का प्रश्न कहीं ज्यादा मायने रखता है और उस पर जब-तब जरूरी बहस भी होती रहती है। देश में महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक उत्थान के लिए काम करने वाली संस्था- सेल्फ एम्प्लायड वूमेंस एसोसिएशन (सेवा) की संस्थापक और मैगसेसे अवार्ड विजेता इला बेन भट्ट ने पिछले दिनों एक मौके पर कहा था कि बैंक की पासबुक के बिना स्त्री की आजादी मुमकिन नहीं है। उनका यह कथन भी गौरतलब है कि हमारे देश में कुछ महिलाओं को जब से पासबुक की ताकत हासिल हुई है, उन्होंने दिखा दिया है कि बचत, ईमानदारी और आर्थिक प्रबंधन में उनका कोई सानी नहीं है। उल्लेखनीय है कि हमारे देश में सेवा बैंक के माध्यम से लाखों महिलाओं ने महज पांच या दस रुपये रोज बचाकर वह आत्मनिर्भरता हासिल कर ली है, जो उन्हें अनुनय-विनय या याचना से कदापि नहीं मिल सकती थी। इस प्रसंग में एक और तथ्य का उल्लेख जरूरी है कि जहां देश में अनेक लोग हेराफेरी कर कर्ज के रूप में ली गई बैंक की रकम डकार जाते हैं, वहीं बैंक से कर्ज लेने वाली निर्धन तबके की 95 फीसद तक महिलाएं ईमानदारी से कर्ज चुकाती आई हैं।

महिला बैंक के सवाल के मद्देनजर भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की आर्थिक आजादी पर चिंतन करते वक्त कुछ वास्तविकताओं पर गौर करना जरूरी है। यह एक सच्चाई है कि हमारे पुरुष-प्रधान और पोंगापंथी समाज में कभी भी स्त्री की किसी भी प्रकार की स्वाधीनता के बारे में गंभीरता से नहीं सोचा गया। आर्थिक मामलों से स्त्री को दूर रखने की एहतियात तो आज का तथाकथित आधुनिक पुरुष वर्ग तक बरतता दिखता है। ऐसे में, घरों में कैद रहने वाली या आसपास के घरों अथवा खेतों में काम करने वाली देश की 94 फीसद महिलाएं भला कैसे अपने जीवन में किसी सुधार की अपेक्षा कर सकती हैं।

विडम्बना यह है कि बीड़ी बनाने, रंगाई, सिलाई-कढ़ाई करने, टोकरी बुनने और गली-गली फेरी लगाकर सामान बेचने या खेतों में काम करने वाली कामगार महिलाओं की थोड़ी-बहुत आय पर भी ज्यादातर मामलों में उनके घर के पुरुषों का कब्जा रहता है। महिलाएं भी अपनी कमाई पति के हवाले कर इस भाव के साथ संतुष्ट और निश्चिंत रहती हैं कि आखिर तो उनका पैसा घर-गृहस्थी पर ही खर्च हो रहा है। यहां तक तो ठीक है कि स्त्री द्वारा कमाया गया पैसा घर चलाने और बच्चों के लालन-पालन पर खर्च हो जाए पर यह दृश्य देश के पहाड़ी अंचलों से लेकर सुदूर दक्षिण और गुजरात से लेकर पूर्वोत्तर के राज्यों तक बेहद आम है कि तमाम पुरुष घर की स्त्रियों की मेहनत मशक्कत से कमाई आय को शराब, जुए या नशे में उड़ा देते हैं।

ऐसी स्थिति में महिलाओं की आर्थिक आजादी का सवाल उठना लाजिमी है। यही नहीं, कई अन्य कारणों से भी यह सवाल जरूरी है। जैसे विज्ञान संबंधी तथ्य गौरतलब है कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं का जीवनकाल अधिक होता है। यानी कई मौकों पर पति की मृत्यु हो जाने पर महिलाओं को शेष जीवन बच्चों के ऊपर निर्भर रहते हुए बिताना पड़ता है। निर्धन समाज में तो हालात और भी भयावह हैं। वृंदावन के आश्रमों में रहने वाली हजारों विधवाओं की नारकीय स्थिति बताती है कि विधवा के रूप में महिलाओं को अत्यधिक तिरस्कृत जीवन इसी कारण जीना पड़ता है, क्योंकि उनके हाथ में थोड़ी भी जमापूंजी नहीं होती। यही नहीं, तलाक और अलगाव के मामलों में भी देखने में आया है कि गुजारा भत्ता न मिल पाने की दशा में महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है। कामकाजी महिलाएं जानती हैं कि वेतन के रूप में मिलने वाली धनराशि उनके जीवन में कितनी आजादी, कितना सुकून और कितनी आत्मनिर्भरता लाती है। खास तौर से वे महिलाएं अपने जीवन और भविष्य को लेकर और ज्यादा निश्चिंतता महसूस करती हैं, जिनके बैंक खाते में ठीक-ठाक रकम जमा हो और जिसके मनचाहे उपयोग के लिए वे स्वतंत्र हों।

यह भी एक प्रमाणित तथ्य है कि महिलाएं अपने धन का बेहतर इस्तेमाल करती हैं। जो लोग मध्यवर्गी कामकाजी महिलाओं का यह कहकर उपहास करते हैं कि अपनी कमाई का ज्यादातर हिस्सा वे अपने कपड़ों और प्रसाधन पर खर्च कर देती हैं, वह भी उन्हें हल्के में ही आंकते हैं। उन्हें शायद यह नहीं मालूम कि देश की हजारों कामकाजी महिलाएं अपनी पूरी गृहस्थी का खर्च अकेले बूते पर चला रही हैं। हालांकि इस ट्रेंड में एक नुक्स यह है कि अपनी सारी कमाई घर-गृहस्थी के नाम खर्च कर देने की स्थिति में वे स्वयं क्वालिटी लाइफ नहीं जी पाती हैं और अपने बुढ़ापे के लिए भी पर्याप्त बचत नहीं कर पाती हैं। परिणामस्वरूप अक्सर बच्चों द्वारा उपेक्षित कर दिए जाने के चलते उनके लिए जीवन यापन मुश्किल हो जाता है। इसलिए अगर वे स्वास्थ्य या चिकित्सा बीमा जैसी योजनाओं में अपना कुछ धन लगाएं, तो निश्चय ही आने वाला दौर उनकी स्थिति में गुणात्मक सुधार लाने वाला हो सकता है। इन स्थितियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि ऑल वूमेन बैंक महिलाओं की आर्थिक ही नहीं, सामाजिक हैसियत सुधारने में भी काफी मददगार साबित हो सकता है। लेकिन इसकी सार्थकता तभी है जब यह व्यवहार में महिलाओं का हित चिंतन करे।

राष्ट्रीय सहारा 23.2.2013

एक जनवरी से शुरू होगी महिला हेल्पलाइन

इंदिरापुरम (एसएनबी)। महिलाओं की सुरक्षा के लिए पुलिस एक जनवरी से महिला हेल्पलाइन नंबर-1090 जारी करेगी। महिला हेल्पलाइन सीधे लखनऊ हेड क्वार्टर से जुड़ी होगी, जिसमें पीड़ित महिला का नाम-पता गुप्त रखा जाएगा। पीड़िता की शिकायत 24 घंटे में दर्ज कर एक सप्ताह बाद जानकारी दी जाएगी कि उस पर क्या कार्रवाई हुई। एक माह बाद पीड़िता से पूछा जाएगा कि वह पुलिस कार्रवाई से संतुष्ट है या नहीं।

यह जानकारी एसएसपी प्रशांत कुमार ने मंगलवार को इंदिरापुरम के विंडसर क्लब में महिला सुरक्षा पर आयोजित बैठक में दी। उन्होंने कहा कि महिलाओं को अक्सर शिकायत होती है कि पुलिस चौकी में उनकी रिपोर्ट दर्ज नहीं होती। उनके लिए हर मामले में शिकायत करने के लिए थाने जाना संभव नहीं होता है। एसएसपी ने कहा कि अब पुलिस चौकी में एक महिला कांस्टेबल तैनात रहेगी, जो पीड़ित महिला की शिकायत करने पर रसीद के रूप में एक पीली पर्ची देगी। महिला कांस्टेबल शिकायत की रिपोर्ट थाने में दर्ज कराएगी। उसके बाद पीड़ित महिला पुलिस चौकी से रिपोर्ट ले सकेगी।

बैठक में महिलाओं ने अनेक स्थानों पर छेड़छाड़ करने की शिकायत की, जिस पर एसएसपी ने आश्वासन दिया कि छेड़छाड़ करने वाले स्थानों का जिले भर में एक मैप तैयार कराया जाएगा। इसके बाद उन स्थानों पर महिला या पुरुष कांस्टेबल तैनात कर समस्या का समाधान किया जाएगा। महिलाए अश्लील एसएमएस और ई-मेल पर अश्लील फोटो भेजने वालों की शिकायत भी महिला हेल्पलाइन नंबर-1090 पर कर सकेगी।

बैठक में महिलाओं ने आपत्ति उठाई कि खाने-पीने की तमाम दुकानों के सामने लोग शराब पीते हैं, जिससे महिलाओं का बाजार में आना-जाना मुश्किल हो जाता है। एसएसपी का कहना था कि वह इस संबंध में खाने पीने का सामान बेचने वालों को नौटिस जारी करेंगे जिसमें खाने का सामान बाहर सर्व नहीं किया जाएगा। एसएसपी ने कहा कि महिला से छेड़छाड़ करने वाले मामलों में कार्रवाई नहीं होने पर संबंधित अफसरों के खिलाफ भी कार्रवाई की जाएगी।

गृहणियों को बेचारी कहने पर एसएसपी को घेरा

इंदिरापुरम (एसएनबी)। एसएसपी का महिला सुरक्षा पर आयोजित बैठक में गृहणियों को बेचारी कहना महंगा पड़ गया। उन्होंने जैसे ही बातचीत के दौरान गृहणियों को बेचारी कहा, वहां मौजूद महिला जोर-जोर से हंसने लगी, बल्कि उनके इस वक्तव्य पर आपत्ति उठाई। जवाब में एसएसपी को कहना पड़ा कि वह सिर्फ इंदिरापुरम की महिलाओं की बात नहीं कर रहे हैं वह अन्य थाना क्षेत्र की महिलाओं के संबंध में भी बात कर रहे हैं।

महिलाओं का हो शोषण तो डायल करें 1091

- डीजीपी ने पंचकूला में किया शुभारंभ

भास्कर न्यूज | पंचकूला

महिलाओं के साथ दुराचार हो चुका हो या होने की आशंका हो, कोई भी-कभी भी हेल्पलाइन नंबर 1091 डायल कर जानकारी दे सकता है। पुलिस तुरंत घटनास्थल पर पहुंचेगी। हरियाणा के सभी जिलों में यह सुविधा शुरू हो चुकी है। कॉल संबंधित जिले के पुलिस कंट्रोल रूप में रिसीव होगी। हरियाणा के डीजीपी रजीव सिंह दलाल ने पंचकूला स्थित पुलिस लाइन में इस सुविधा का सोमवार को शुभारंभ किया। दलाल ने कहा कि हेल्पलाइन पर किसी भी नेटवर्क से 24 घंटे कॉल की जा सकती है। कॉल रिसीव होते ही संबंधित थाने या चौकी में मैसेज फ्लैश हो जाएगा और फोन करने वाली महिला को सहायता दी जाएगी। दलाल ने कहा कि यदि किसी महिला या लड़की के साथ कोई छेड़छाड़ या दुराचार करने का प्रयास करता है या उनको किसी प्रकार से प्रताड़ित करता है, तो इस नंबर पर शिकायत की जा सकती है।

दिल्ली की तर्ज पर नंबर

बता दें कि दिल्ली में भी महिलाओं के लिए हेल्पलाइन का नंबर 1091 ही है। दलाल ने बताया कि 1091 नंबर पर ऐसा नहीं कि सिर्फ महिला ही अपने साथ हो रहे अत्याचार की जानकारी दे। बल्कि सड़क पर, आस-पड़ोस में महिला को भय की स्थिति या किसी परेशानी में देखे, कभी भी शिकायत कर सकता है।

आज से शुरू होंगी 23 रूटों पर बसों की नाइट सर्विस

भास्कर न्यूज | नई दिल्ली

दिल्ली के वसंत विहार में मेडिकल छात्रा से दुष्कर्म की सबक लेते हुए 'दिल्ली ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन (डीटीसी) गुरुवार से दिल्ली के प्रमुख 23 रूटों पर नाइट सर्विस प्रारंभ करने जा रही है। यह बसें रात 11 से सुबह 4 बजे तक चलेंगी। जिससे कामकाजी महिलाओं से लेकर अन्य राज्यों से ट्रेन, रेल और बसों से अन्य राज्यों से आने वाली महिला यात्रियों के साथ-साथ पुरुष यात्री भी सही सलामत घर पहुंच सकेंगे। इनके लिए डीटीसी महाराणा प्रताप (आईएसबीटी), पुरानी व नई दिल्ली रेलवे स्टेशन से पांच से दस मिनट के अंतराल पर विशेष सेवा के साथ दिल्ली एयरपोर्ट और आनंद विहार बस अड्डा से हर दस मिनट के अंतराल पर बसें उपलब्ध रहेंगी।

साथ ही दिल्ली के अन्य रूटों पर 37 से 50 मिनट के अंतराल पर बस चलाने का निर्णय लिया गया। डीटीसी के प्रवक्ता शरत कुमार ने बताया कि नाइट बस सर्विस के तहत 118 मयूर विहार से मोरी गेट, 205 न्यू सीमा पुरी से ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन, 261 गंद नगरी टर्मिनल से सराय काले खां, 405 बदरपुर बॉर्डर से मोरी गेट, 419 अंबेडकर नगर टर्मिनल से ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन, 502 महरौली से ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन, 604 छतरपुर गेट से नई दिल्ली रेलवे स्टेशन गेट

नंबर (2), 729 कापसहेड़ा बॉर्डर मोरी गेट टर्मिनल, 753 उत्तम नगर टर्मिनल से मोरी गेट, 901 मंगोलपुरी (बीएलके) नई दिल्ली रेलवे स्टेशन (2), 926 टिकरी बॉर्डर से ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन, जीएल-23 आनंद विहार अंतरराज्यीय बस अड्डा से आईएसबीटी महाराणा प्रताप बस अड्डा, 740 उत्तम नगर टर्मिनल से आनंद विहार आईएसबीटी, 94 नई दिल्ली रेलवे स्टेशन (गेट, 1) से सुल्तानपुरी, 920 ओल्ड रेलवे स्टेशन से मुबारकपुर डबास, 12 आईएसबीटी महाराणा प्रताप बस अड्डा से बवाना जे-जे कालोनी, 44 आईएसबीटी महाराणा प्रताप बस अड्डा से ओखला एफ एकलेव, 72आईएसबीटी महाराणा प्रताप बस अड्डा से नजफगढ़ लगभग दिल्ली की अधिकतर कालोनियों तक यात्रा के लिए उपलब्ध रहेंगी।

पांच फास्ट ट्रैक कोर्ट को मंजूरी दी

नई दिल्ली। हाईकोर्ट ने दुष्कर्म के मामलों के जल्द निपटारे के लिए राजधानी में पांच फास्ट ट्रैक कोर्ट की मंजूरी प्रदान कर दी है। वहीं, हाईकोर्ट ने वसंत विहार गैंगरेप के मामले की स्वयं निगरानी करने का निर्णय किया है। अदालत ने स्पष्ट किया कि मामले की अंतिम जांच रिपोर्ट उन्हें दिखाने से पहले निचली अदालत में आरोपपत्र दाखिल न किया जाए।

मुख्य न्यायाधीश डी मुरुगेशन ने मामले की सुनवाई के दौरान कहा कि मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने पत्र लिखकर पांच फास्ट ट्रैक कोर्ट के गठन का आग्रह किया था। यह अदालतें जल्द काम शुरू कर देंगी लेकिन उन्होंने कहा कि यह अदालतें तब तक कुछ नहीं कर सकती जब तक जांच ठीक ढंग से न हो और गवाहों को अदालत में पेश न किया जाए। हम इस इसका स्थायी समाधान करना चाहते हैं।

मुख्य न्यायाधीश डी. मुरुगेशन व न्यायमूर्ति राजीव सहाय एंडलो की खंडपीठ के समक्ष दिल्ली पुलिस की ओर से पेश स्थायी अधिवक्ता पवन शर्मा ने बताया कि जांच जल्द से जल्द पूरी करके एक माह में आरोपपत्र दाखिल कर दिया जाएगा। खंडपीठ ने कहा कि हम पूरे मामले की निगरानी करेंगे और समय-समय पर उचित दिशा-निर्देश भी देंगे। खंडपीठ ने पुलिस को निर्देश दिया कि आरोपपत्र दाखिल करने से पूर्व उन्हें अंतिम रिपोर्ट दिखाई जाए और मंजूरी मिलने के बाद ही आरोपपत्र दाखिल किया जाएगा।

अब महिला हेल्पलाइन नंबर 181

जनसत्ता संवाददाता

नई दिल्ली, 24 दिसंबर। सामूहिक बलात्कार की भयानक घटना पर देश भर में हो रहे विरोध के बीच दूरसंचार मंत्रालय ने सोमवार को तीन अंकों वाले महिला हेल्प लाइन नंबर '167' की घोषणा के कुछ ही घंटे बाद बदल कर '181' कर दिया। दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने परेशानी में महिलाओं की मदद करने के लिए दूरसंचार मंत्री कपिल सिब्बल से तीन अंकों वाले फोन नंबर आवंटित करने की मांग की थी।

दूरसंचार विभाग की ओर से जारी एक बयान में कहा गया है कि अनेक वर्ग की ओर से एक ऐसे नंबर की मांग की गई थी जो याद रखे जाने में आसान हो। इसे देखते हुए महिला हेल्प लाइन नंबर को बदल कर '181' कर दिया गया है। इससे पहले, दूरसंचार विभाग ने कहा था कि उनके पास तीन अंकों वाले नंबर के संबंध में संसाधन सीमित हैं लेकिन इस मांग के दो घंटे के भीतर हेल्प लाइन नंबर आवंटित किया गया।

पिछले दो साल में यह पहला मौका है जब तीन अंकों का नंबर जारी किया गया है।

सख्त कानून पर विचार को कांग्रेस ने बनाई कमेटी

बलात्कार के खिलाफ सजा के मामले में 15 सदस्यों की कमेटी देगी राय, सर्वदलीय बैठक बुलाएगी सरकार

अमित मिश्रा | नई दिल्ली

केंद्र सरकार ने बलात्कार के दोषियों के खिलाफ सख्त कानून बनाने की पूरी तैयारी कर ली है। बलात्कार के दोषियों के लिए सख्त सजा दिए जाने के प्रावधान को लेकर गठित जस्टिस वर्मा कमेटी की रिपोर्ट 27 जनवरी,2013 तक सरकार के पास आ जाएगी। सख्त कानून बनाने के मुद्दे पर सरकार ने जस्टिस वर्मा कमेटी को 30 दिन के अंदर रिपोर्ट देने को कहा है। कांग्रेस ने इस मुद्दे पर अपनी राय रखने के लिए एक 15 सदस्यीय समिति गठित की है।

सूत्रों ने 'भास्कर' को बताया है कि कमेटी की रिपोर्ट और इस मामले में दोषियों को क्या सजा दी जाए, इसकी अनुशंसा पर अध्ययन के तुरंत बाद सरकार सर्वदलीय बैठक बुलाएगी। यह बैठक

28 या 29 जनवरी,2013 को हो सकती है। सूत्रों ने यह भी बताया है कि बलात्कार के दोषियों को कैसी सजा दी जाए, जस्टिस वर्मा कमेटी के पास देशभर से इसके लिए पत्र आ रहे हैं। यही नहीं, सांसदों के पत्रों पर लोगों द्वारा इस संबंध में भेजे जाने वाले संदेशों को भी एकत्रित कर जस्टिस वर्मा कमेटी को भेजा जा रहा है। कांग्रेस ने भी पार्टी की तरफ से राय रखने के लिए एक 15 सदस्यीय समिति बनाई है, जिसमें वित्तमंत्री पी.चिदंबरम के अलावा कपिल सिब्बल, सलमान खुर्शीद, जयराम रमेश, एके एंटनी, जयंती नटराजन, अश्विनी कुमार, अभिषेक मनु सिंघवी, मनीष तिवारी, कृष्णा तीरथ के अलावा कई और बड़े नेता शामिल हैं।

इसके साथ ही यूपीए के विभिन्न घटक दलों की ओर से भी अलग-अलग कमेटियां बनाई गई हैं, जो अपने सुझाव और सिफारिशें वर्मा कमेटी को देंगी। कांग्रेस की ओर से दिए जाने वाले सुझावों को एकत्रित कर महिला एवं बाल विकास मंत्री कृष्णा तीरथ को दिया जाएगा। वे फिर इसे प्रधानमंत्री के समक्ष रखेंगी, जिस पर कोर ग्रुप में विचार-विमर्श किया जाएगा। जस्टिस वर्मा कमेटी की रिपोर्ट पर सर्वदलीय बैठक के पहले यूपीए के घटक दलों से भी सलाह-मशविरा होगा। इस रिपोर्ट पर विस्तार से चर्चा करने के बाद दूसरे दलों से राय ली जाएगी। सरकार ने तमाम राजनीतिक दलों से इस बारे में अपनी राय देने के लिए अपील भी की है। इस समिति से जुड़े कांग्रेस के कई नेता, जो वकालत के पेशे से भी जुड़े हैं, इसकी बारीकियों पर अध्ययन करेंगे ताकि पार्टी और सरकार की तरफ से लिए गए फैसले पर कोई आलोचना न हो और उनकी राय, संयुक्त राय के रूप में सामने आए। पार्टी चाहती है कि बलात्कार के खिलाफ सरकार सख्त से सख्त कानून लाए। इसके अलावा सरकार महिला यौन उत्पीड़न (छेड़छाड़) पर भी रोक लगाने के लिए सख्त कानून की हिमायती है। वे समिति इन दोनों मामलों पर अपनी राय पार्टी की ओर से जस्टिस वर्मा कमेटी को देगी।

रात को डीटीसी की बसों में तैनात होंगे होमगार्ड

वसंत विहार गैंगरेप हादसे के बाद मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने शर्म से रात भर डीटीसी की बसों में होमगार्ड को तैनात करने का घोषणा की है। सचिवालय में मुख्यमंत्री के साथ परिवहन मंत्री रमाकांत गोस्वामी, मुख्य सचिव पीके त्रिपाठी, परिवहन आयुक्त राजेन्द्र कुमार और परिवहन विभाग के अधिकारियों की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि काले शीशों वाली बसों पर कार्रवाई के लिए रातायात पुलिस को पत्र लिखने के साथ-ग्रामीण सेवा वाहनों और ऑटो रिक्शा को अनुबन्धन में लाया जाए। इसके लिए प्रवर्तन शाखा को मजबूत बनाने का निर्णय लिया गया। परिवहन मंत्री ने कहा कि डीटीसी अब रात्रि में 42 की बजाए 85 बसें चलाएगी। मुख्यमंत्री ने कहा कि बड़ी संख्या में शिकायतें मिल रही हैं। इनसे पता चलता है कि ग्रामीण सेवा और ऑटो जरूरत से ज्यादा सवारी उठा रहे हैं, अधिक रकम ले रहे हैं, गति सीमा का उल्लंघन कर रहे हैं और यात्रियों द्वारा बताए स्थान पर जाने से मना करते हैं और रूट का उल्लंघन कर रहे हैं।

योजना पर डीटीसी और दिल्ली पुलिस की केंद्रीय गृह मंत्रालय के साथ बैठक जल्द

सावधान! बस में की छेड़छाड़ तो पकड़े जाओगे

सीमा शर्मा

- डीटीसी की बसों में लगाए जाएंगे सीसीटीवी
- महिलाओं से छेड़छाड़ पर लगेगी लगाम

नई दिल्ली। डीटीसी की बसों में महिलाओं से छेड़छाड़ करने वाले मनचले अब पुलिस की पकड़ से बच नहीं पाएंगे। महिलाओं से होने वाली छेड़छाड़ को रोकने और अराजक तत्वों से निपटने के लिए बसों में सीसीटीवी कैमरे लगाए जाएंगे। योजना को अमली जामा पहनाने के लिए डीटीसी प्रबंधन दिल्ली पुलिस के साथ मिलकर प्रारूप तैयार कर रहा है।

दरअसल, महिलाओं के साथ बढ़ती छेड़छाड़ की घटनाओं को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट ने हाल ही में बसों में सीसीटीवी कैमरे लगाने और महिला पुलिस को तैनात करने के निर्देश दिए हैं। इस दिशा में दिल्ली सरकार अब अराजक तत्वों पर नकेल कसने की

तैयारियों में जुट गई है। परिवहन मंत्री रमाकांत गोस्वामी ने डीटीसी प्रबंधन को पत्र लिखकर ठोस कदम उठाने के निर्देश दिए हैं। इस बारे में डीटीसी प्रबंधन और दिल्ली पुलिस की एक बैठक हो चुकी है, जिसमें सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर चर्चा हुई है।

सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर

महिलाओं की सुरक्षा लिए बसों में सीसीटीवी और महिला पुलिस की तैनाती की योजना बनाई जा रही है। इस बारे में दिल्ली पुलिस के साथ बैठक हो चुकी है। दिल्ली पुलिस और डीटीसी प्रबंधन की बैठक जल्द ही केंद्रीय गृह मंत्रालय में होने वाली है जिसमें पूरी रूपरेखा बनाई जाएगी।

रमाकांत गोस्वामी, परिवहन मंत्री, दिल्ली सरकार

गृह मंत्रालय के साथ बैठक जल्द

सूत्रों के अनुसार, जल्द ही डीटीसी प्रबंधन और दिल्ली पुलिस की केंद्रीय गृह मंत्रालय के साथ बैठक की तैयारी चल रही है। इसमें बड़ा मुद्दा होगा कि सीसीटीवी से निगरानी डीटीसी या दिल्ली पुलिस में से कौन करेगा? इसके अलावा इस बात पर भी चर्चा होगी कि राजधानी की सड़कों में दौड़ने वाली पांच हजार से अधिक बसों में महिला पुलिस की तैनाती कैसे होगी? इतनी महिला पुलिस कहां से आएगी? इसके साथ ही डीटीसी की पुरानी लो-फ्लोर बसों में सीसीटीवी लगाने से लेकर नई बसों में कंपनी से ही कैमरा लगा कर भेजने की मांग रखी जाएगी।

एक हफ्ते चला था ट्रायल

डीटीसी के साथ मिलकर दिल्ली पुलिस ने कुछ महीने पहले मिलेनियम डिपो की लगभग दस से ज्यादा बसों में सीसीटीवी लगाकर मॉनिटरिंग ट्रायल लिया था। ये कैमरे दोनों दरवाजों के ऊपर लगाए गए थे, जिसमें बस की पूरी निगरानी हुई थी। सूत्रों के अनुसार एक हफ्ते चले ट्रायल की रिकॉर्डिंग पुलिस ने इकट्ठा की और उसकी रिपोर्ट बनाई थी। ट्रायल रिपोर्ट ओके हुई थी कि अगर सीसीटीवी कैमरे लगाए जाते हैं तो छेड़छाड़ के साथ अराजक तत्वों पर लगाम लग सकती है।

संकटग्रस्त मध्यम वर्गीय महिलाओं को मिलेगा आशियाना

अल्पकाल के लिए समस्याओं से पीड़ित महिलाएं आश्रय घरों में रह पाएंगी

संजय टुटेजा/एसएनबी

नई दिल्ली। राजधानी में घरेलू हिंसा, बलात्कार या फिर किसी अन्य संकट से जूझ रहीं मध्यम वर्गीय महिलाओं को सरकार अल्पकालिक आशियाना देगी। दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड तथा महिला एवं बाल विकास विभाग ने इस तरह के दो अत्याधुनिक आश्रय गृह बनाने की योजना को अंतिम रूप दे दिया है और अगले माह ही यह दोनों आश्रयगृह शुरू कर दिए जाएंगे। यह दोनों आश्रय गृह आधुनिक अतिथि गृह की तरह होंगे जहां अतिथियों को दी जाने वाली तमाम सुविधाओं के साथ-साथ भोजन की सुविधा भी होगी। दिल्ली में मध्यम वर्गीय महिलाओं के लिए सरकारी स्तर पर इस तरह का प्रयास पहली बार किया जा रहा है।

- ▶ एक माह में शुरू होंगे दो आधुनिक आश्रय गृह
- ▶ मध्यमवर्गीय महिलाओं के लिए दिल्ली में पहली बार बनेंगे इस तरह के गृह
- ▶ अतिथियों को मिलनेवाली सभी सुविधाएं महिलाओं को उपलब्ध होंगी

राजधानी में समाज कल्याण विभाग तथा महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा हालांकि बेघर महिलाओं के लिए कुछ शेल्टर होम चलाए जा रहे हैं लेकिन वह सभी होम निराश्रित, बेघर तथा बीमार महिलाओं के लिए हैं। घरेलू हिंसा तथा अन्य विपत्तियों का शिकार होने वाली मध्यम वर्गीय महिलाओं के लिए कोई ऐसा आश्रय गृह नहीं है जहां संकट के समय उन्हें सहारा तथा आशियाना मिल सके। मध्यम वर्गीय महिलाओं की इसी समस्या को देखते हुए ही दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड तथा महिला एवं बाल विकास विभाग ने कारपोरेट-सोशल रिस्पांसबिलिटी के तहत वैल्सपन कंपनी के साथ मिलकर ऐसी महिलाओं को कुछ समय के लिए आशियाना उपलब्ध कराने तथा सहारा देने का निर्णय लिया है।

महिला एवं बाल विकास मंत्री प्रो.किरण वालिया ने बताया कि यह दोनों आश्रय गृह अभी तक चलाए जा रहे अन्य आश्रय गृहों या होम से बिल्कुल अलग होंगे। उन्होंने बताया कि इनके लिए दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड ने दक्षिणी दिल्ली में सनलाइट कालोनी तथा मध्य दिल्ली में दीन दयाल उपाध्याय मार्ग स्थित माता सुंदरी कालेज के निकट जगह उपलब्ध करा दी है। उन्होंने बताया कि सनलाइट कालोनी में बनने वाले आश्रयगृह में लगभग 50 महिलाओं के रहने की व्यवस्था होगी जबकि माता सुंदरी कालेज में 20 महिलाएं रह सकेंगी। उन्होंने बताया कि दोनों आश्रय गृह का लेआउट प्लान को अंतिम रूप दिया जा रहा है। उन्होंने बताया कि दोनों ही स्थानों पर अभी हॉल बने हुए हैं जिनका पुनरुद्धार करने के साथ साथ कुछ कमरों, रसोईघर, स्नानगृह, शौचालय आदि का निर्माण किया जाएगा।

उन्होंने बताया कि यह आश्रय गृह केवल अल्पकाल के लिए होंगे ताकि किसी संकट के समय मध्यमवर्ग की महिलाओं को सहारा मिल सके। उन्होंने बताया कि यह आश्रयगृह पूरी तरह व्यावसायिक अतिथिगृह की तरह आधुनिक बनाए जाएंगे लेकिन यह व्यावसायिक नहीं होंगे। इन आश्रयगृहों में महिलाओं की जरूरत का सभी सामान उपलब्ध होने के अलावा फर्नीचर, पलंग, टीवी, अलमारी, शीशा, बिस्तर आदि सुविधाएं उपलब्ध रहेंगी। उन्होंने बताया कि 15 जुलाई तक इन दोनों आश्रयगृहों की शुरुआत कर दी जाएगी।

राष्ट्रीय सहारा 22.6.2013

पीड़ित महिलाओं के लिए बनाए जा सकते हैं वन स्टॉप क्राइसिस सेंटर

प्रियंवदा सहाय

- भारत ने देशभर में इन केंद्रों को तैयार करने के लिए अल सल्वाडोर से ली है प्रेरणा
- एक ही जगह पर इन महिलाओं के स्वास्थ्य देखभाल, प्रशिक्षण, कौशल विकास और पुनर्वास की हो सकेगी व्यवस्था

नई दिल्ली। दुष्कर्म पीड़ित और शोषण की शिकार महिलाओं को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए देश में वन स्टॉप क्राइसिस सेंटर को आकार दिया जा सकता है। ऐसे केंद्र को बनाने के लिए भारत ने एक छोटे से देश अल सल्वाडोर से प्रेरणा ली है। इसके तहत एक ही छत के नीचे इन महिलाओं के स्वास्थ्य देखभाल, प्रशिक्षण, कौशल विकास और पुनर्वास की व्यवस्था की हो सकेगी।

महिला एवं बाल विकास मंत्री कृष्णा तीरथ ने हाल में ही अल सल्वाडोर में इन केंद्रों का जायजा लिया और देश में भी ऐसे वन स्टॉप क्राइसिस सेंटर बनाने की इच्छा जाहिर की है। मंत्रालय के एक अधिकारी ने बताया कि तीरथ पीड़ित महिलाओं और वृद्धों की सहायता के लिए अल सल्वाडोर की तर्ज पर वन स्टॉप क्राइसिस सेंटर बनाने की इच्छुक हैं। उन्होंने बताया कि अल सल्वाडोर में बड़े पैमाने पर चल रहे ऐसे सेंटरों में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य देखभाल के लिए उचित व्यवस्था की गई है। यही नहीं सभी आयु वर्ग की महिलाओं को एक साथ रहने की व्यवस्था भी केंद्र के परिसर में ही होती है। इससे प्रभावित होकर तीरथ ने भारत में भी ऐसे ही सेंटर बनाने में दिलचस्पी दिखाई है।

मंत्रालय के अधिकारी ने कहा कि ऐसी व्यवस्था भारत में होने पर किसी भी तरह की समस्या से जूझ रही महिलाएं इन केंद्रों के जरिए अपना समाधान निकाल सकेंगी। फिलहाल देश में वन स्टॉप क्राइसिस सेंटर की व्यवस्था नहीं है। हालांकि दुष्कर्म पीड़ितों और शोषण की शिकार महिलाओं के लिए सरकारी अस्पतालों में क्राइसिस सेंटर तैयार करने का एक प्रस्ताव मंत्रालय ने जरूर तैयार किया था। यानी पीड़ितों के लिए सरकारी अस्पतालों में बिस्तर आरक्षित करने, एफआईआर दर्ज कराने के लिए पुलिसकर्मी, दवाई और एनजीओ के सदस्यों को रखने का प्रस्ताव तैयार किया गया था। लेकिन अभी तक इसे अंतिम रूप नहीं दिया जा सका है।

अमर उजाला 10.6.2013

दिल्ली पुलिस खोलेगी महिलाओं के लिए रिसेप्शन कम केयर सेंटर

नई दिल्ली(एसएनबी)। राजधानी में घरेलू हिंसा, मारपीट, बलात्कार तथा अन्य घटनाओं की पीड़ित महिलाओं को अब दिल्ली पुलिस भी कुछ समय के लिए आश्रय देगी। दिल्ली पुलिस आठ डीडीए फ्लैटों में महिलाओं के लिए रिसेप्शन कम केयर सेंटर चलाएगी, जिनका संचालन राष्ट्रीय महिला आयोग के सहयोग से किसी एनजीओ के माध्यम से किया जाएगा। उपराज्यपाल तेजेन्द्र खन्ना ने यह घोषणा शुक्रवार को महिला सुरक्षा को लेकर बुलाई गई तिमाही बैठक में की।

- ■ राष्ट्रीय महिला आयोग के सहयोग से एनजीओ करेंगे इन सेंटर का संचालन
- ■ थाना स्तर पर महिला सुरक्षा के लिए होंगी नियमित बैठकें

उपराज्यपाल तेजेन्द्र खन्ना की अध्यक्षता में आज विभिन्न महिला संगठनों तथा पुलिस अधिकारियों की तिमाही बैठक में महिला सुरक्षा से जुडे विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की गई। उपराज्यपाल कहा कि जिन 8 डीडीए फ्लैटों में यह सेंटर चलाए जाएंगे उन्हें डीडीए दिल्ली पुलिस को लीज पर देगा। घरेलू हिंसा या अन्य किसी वारदात की शिकार हुई महिलाओं को इन सेंटरों में कुछ समय के लिए आश्रय दिया जाएगा।

बैठक के दौरान महिला संगठनों की प्रतिनिधियों ने थाना स्तर पर महिलाओं की सुरक्षा को लेकर कोई समन्वय बैठकें न होने की शिकायत की। उन्होंने कहा कि यदि दिल्ली के सभी थानों में नियमित रूप से महिला संगठनों के साथ महिला सुरक्षा पर समन्वय बैठकें हों तो स्थिति में काफी सुधार होगा। महिला संगठनों की इस मांग पर उपराज्यपाल तेजेन्द्र खन्ना ने तत्काल ही दिल्ली पुलिस अधिकारियों को थाना स्तर पर बैठकें शुरू करने के निर्देश दिये। उपराज्यपाल ने महिला संगठनों को आश्वस्त किया कि दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा के जो भी सुझाव आएंगे उनके अनुरूप कदम उठाये जाएंगे। उन्होंने बताया कि दिल्ली पुलिस के स्पेशल कमिशनर ताज हसन अब प्रत्येक माह के अंतिम शुक्रवार को महिला संगठनों के साथ बैठक करेंगे।

राष्ट्रीय सहारा 22.6.2013

स्ट्रीट लाइटों की व्यवस्था करें राज्य

महिला सुरक्षा : शहरी विकास मंत्रालय ने राज्य सरकारों को लिखा पत्र

विनोद श्रीवास्तव/एसएनबी

नई दिल्ली। देश भर में अपराधों खासकर महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों को रोकने के लिए केंद्र सरकार ने राज्य सरकारों से स्ट्रीट लाइट की प्रभावी व्यवस्था करने को कहा है। केंद्र सरकार ने राज्य सरकारों को पत्र लिख कर कहा कि अपराधों की रोकथाम और महिलाओं की सुरक्षा के लिए गली-मोहल्लों और सड़कों पर स्ट्रीट लाइट की समुचित व्यवस्था की जाए। इस सुझाव पत्र में कहा गया है कि स्ट्रीट लाइट रोशन होने से अपराधी अपराध करने से डरेंगे। महिलाओं में सुरक्षा का भाव भी पैदा होगा। केंद्र सरकार का मानना है कि स्ट्रीट लाइट की समुचित व्यवस्था होने से महिलाओं में डर कम होगा। अपराध होने की स्थिति में आरोपी की पहचान आसान हो सकेगी।

इस आशय का सुझाव पत्र केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय के सचिव डॉ. सुधीर कृष्णा ने सभी राज्य सरकारों को लिखा है। उन्होंने राज्यों के शहरी विकास सचिवों को लिखे पत्र में सुप्रसिद्ध अमेरिकी जज लुईस ब्रेंडिस के कथन का हवाला दिया है कि जिस प्रकार सूरज की रोशनी कीटाणु को नष्ट करने के लिए होती है, उसी प्रकार बिजली की रोशनी अपराध को रोकने में सहायक होती है। साथ ही, उन्होंने दिल्ली में दिसम्बर में हुई सामूहिक बलात्कार की घटना और उस पर कानून में सुधार के लिए बनाई गई जस्टिस वर्मा कमेटी के उस उल्लेख का जिक्र किया है, जिसमें कहा गया है कि महिलाओं की सुरक्षा को लेकर स्ट्रीट लाइट बेहद जरूरी है। केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय के तत्वावधान में जनवरी माह में हुई राज्य सरकारों के सचिवों की बैठक में यह फैसला किया गया था कि सार्वजनिक स्थलों पर स्ट्रीट लाइट को बढ़ावा देना होगा ताकि रोशनी के डर से अपराधी अपराध करने से खौफ खाएं। केंद्र ने राज्य सरकारों को सुझाव दिया है कि स्थानीय निकायों से संबंधित सभी एजेंसियां समय-समय पर इसकी समीक्षा करें कि जहां-जहां स्ट्रीट लाइट जरूरी हो वहां-वहां उसकी समुचित व्यवस्था की जाए। राज्य सरकारों को सुझाव दिया गया है कि वे इस तरह की नई तकनीक वाली स्ट्रीट लाइटों की व्यवस्था करें, जिनमें ऊर्जा की बचत होती है, जिससे कि उन पर स्ट्रीट लाइट को लेकर ज्यादा बोझ न पड़े।

■ कहा-स्ट्रीट लाइट की समुचित व्यवस्था होने से महिलाओं के प्रति रुक सकेंगे अपराध

उन्होंने राज्यों को बताया है कि ऊर्जा मंत्रालय के ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशियेंसी ने नई तकनीक की स्ट्रीट लाइटों को लेकर एक दिशा-निर्देश भी तैयार किया है, जिसका लाभ लिया जा सकता है। उन्होंने उम्मीद जाहिर की है कि राज्य सरकारें महिलाओं की सुरक्षा को लेकर तमाम सुझावों को अमल लाएंगी और स्ट्रीट लाइट जैसी व्यवस्था को मजबूत करेंगी।

राष्ट्रीय सहारा 19.5.2013

जल्द लगेंगे डीटीसी बसों में सीसीटीवी कैमरे

- परिवहन मंत्री की अध्यक्षता में हुई बैठक में हुआ फैसला
- हर ऑटो रिक्शा पर जिला के आधार पर होगी कलर कोडिंग

भास्कर न्यूज़ · नई दिल्ली

महिलाओं के साथ छेड़छाड़, पॉकेटमारी, संवाहक द्वारा असभ्य बर्ताव को देखते हुए डीटीसी बसों में सीसीटीवी कैमरे लगाने का सरकार ने फैसला किया है। इस बारे में अधिकारियों को आदेश भी जारी कर दिए गए हैं। राजधानी की परिवहन व्यवस्था को विश्वस्तरीय बनाने व बेहतर सेवा उपलब्ध कराने के लिए दिल्ली सचिवालय में परिवहन मंत्री रमाकांत गोस्वामी की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय बैठक हुई। इसमें यात्रियों की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए बसों, ऑटो चालकों पर नकेल कसने के लिए कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। इस बैठक में गोस्वामी के अलावा दिल्ली पुलिस, डिम्ट्स तथा दिल्ली ट्रैफिक पुलिस के अधिकारी उपस्थित थे।

बैठक के बाद गोस्वामी ने बताया कि दिल्ली की सड़कों पर चलने वाले हर ऑटो का जिले के आधार पर कलर कोड होगा। परिवहन विभाग ऑटो रिक्शा के लिए 6 तरह का कलर कोड तैयार कर रहा है। ऑटो रिक्शा पर कलर कोड लगाने के बाद ऑटो चालकों की मनमानी में कमी आएगी। इस स्कीम के लागू होते ही ऑटो रिक्शा चालक दिन में कहीं पर भी जा सकते हैं परन्तु रात में जिस क्षेत्र में वे रहते हैं वहां के सवारी को मना नहीं कर पाएंगे। रात के समय जाने से मना करने वाले ऑटो चालकों की पहचान कलर कोड के आधार पर करते हुए उस पर कड़ी कार्रवाई की जाएगी। ऑटो चालकों द्वारा सवारी से मीटर से नहीं जाकर ज्यादा भाड़ा व बदसलूकी के संदर्भ में परिवहन विभाग को स्पष्ट निर्देश दिए गए है कि वह यातायात पुलिस, डिम्ट्स तथा पुलिस कंट्रोल रूम को मिलाकर एक साझा योजना बनाए। ऑटो पर हेल्पलाइन नंबर लिखने के साथ आपातकालीन पैनिक बटन के प्रयोग को और बेहतर बनाया जाए जिससे यात्रियों की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके। गोस्वामी ने कहा कि इस बटन के प्रयोग करते ही एक मैसेज डिम्ट्स के कंट्रोल रूम में पहुंचेगा और वहीं से यात्री के मुसीबत में होने की सूचना पुलिस कंट्रोल रूम को भेजने की व्यवस्था की जाएगी।

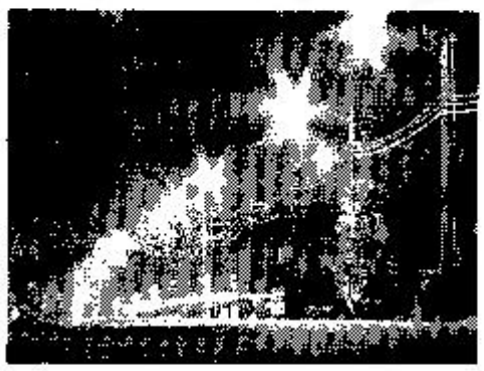

नहीं लग सकेगी किसी भी वाहन पर विज्ञापन सामग्री

अब दिल्ली में ऑटो, टैक्सी सहित किसी भी वाहनों पर प्रचार सामग्री नहीं लगाई जा सकेगी। सरकार ने इस आदेश का नोटिफिकेशन जारी करते हुए सभी सार्वजनिक परिवहन वाहनों के मालिकों से अपने वाहनों पर लगी किसी भी प्रकार की लगी प्रचार सामग्री को तुरंत हटाने का आदेश जारी किया है।

दैनिक भास्कर 11.6.2013

आगे भी जारी रहेगी लड़ाई

कुमुदिनी पति

विशाखा केस में सर्वोच्च न्यायालय के 1997 के निर्देशों के मद्देनजर कई संस्थाओं में पहले ही कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के विरुद्ध शिकायत समितियों का निर्माण हो गया था पर केंद्रीय कानून के अभाव में शिकायत समिति का निर्माण अनिवार्य नहीं था और न उत्पीड़ित महिला इस बाबत मालिकों या अधिकारियों को सजा दिलाने की मांग कर सकती थी। यदि संबंधित कानून बन जाता है तो सभी सरकारी गैर-सरकारी संस्थानों, संस्थाओं, सेवाओं व संगठित-असंगठित क्षेत्र की कर्मचारियों सहित वहां आने वाली महिलाओं के लिए भी शिकायत समितियों का निर्माण करना होगा। क्लाइंट हो या अस्पताल/नर्सिंग होम आने वाली रोगी महिला, छात्रा हो या घरेलू कामगार महिला, सब इसका प्रयोग कर सकेंगी। गौरतलब है कि घरों, ट्रस्टों व एनजीओ को भी कानून के दायरे में लाया गया है, जो बहुत जरूरी था क्योंकि घरेलू कामगारिनों पर जघन्यतम अत्याचारों के मामले सामने आए हैं। फिर अनेक विवादास्पद धर्मगुरुओं द्वारा महिलाओं के यौन शोषण के किस्से भी प्रकाश में आते रहे हैं। जहां तक एनजीओ की बात है तो आज यह खासकर महिलाओं के लिए विस्तृत रोजगार क्षेत्र है। अतः इन्हें कार्यस्थल की परिधि में लाना उचित कदम है।

दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है कि जहां दस से कम महिलाकर्मी हैं या मालिक पर यौन उत्पीड़न का आरोप है, वहां जिला स्तर का अधिकारी स्थानीय शिकायत समिति का निर्माण करेगा। काम के दौरान महिला जहां जाएगी, उस स्थान को कार्यस्थल माना जाएगा। जैसे, मरीज देखने या आंगनबाड़ी केंद्रों पर जाने अथवा सर्वे के लिए जाना आदि। जांच लिखित शिकायत को आधार बनाकर की जाएगी और इसे 90 दिनों के भीतर पूरा करना होगा। शिकायत समिति को निर्णय लागू करने हेतु अधिकतम 60 दिन का समय दिया जाएगा। समिति को सिविल कोर्ट का अधिकार प्राप्त होगा और फैसले से संतुष्ट न होने पर महिला आगे न्यायालय जा सकेगी।

महिला आंदोलनकारियों के दबाव के कारण घरेलू कामगार औरतों को इस कानून के दायरे में लाया गया है। पर आश्चर्य है कि कृषि क्षेत्र में जहां दस से अधिक औरतें मजदूरी कर रही हों, उन्हें इससे राहत नहीं मिलेगी। हैरानी की बात है कि असंगठित क्षेत्र का यह सबसे विस्तृत दायरा कानून से बाहर रह गया। आंकड़े बताते हैं कि 89.5 प्रतिशत महिला श्रमिक कृषि व उससे संबंधित व्यवसायों में कार्यरत हैं। इस पर विशेष धारा जोड़ने के लिए सीपीएम सांसद सुस्मिता बाउरी ने प्रयास किया था पर कोयला आवंटन पर मचे कोहराम के बीच उनकी आवाज दब गई और विधेयक जस-का-तस पारित कर दिया गया। और भी कुछ मामले हैं, जिन पर कानून की आलोचना की जा रही है-पहला शिकायत समिति के सदस्यों की लोकतांत्रिक प्रक्रिया के तहत चुनने की जगह मनोनीत करना। महिला संगठनों का कहना है कि जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय में चुने हुए सदस्यों को समिति में लेने की परंपरा रही है तो इस परिपाटी को सब जगह चलाने में क्या बाधा है? दिल्ली के एक एनजीओ के निदेशक ने शिकायत समिति अपनी पसंद के लोगों को मनोनीत कर बना ली जिस पर प्रतिक्रिया थी कि शिकायत समिति के प्रश्नों से जाहिर हो जाता था कि वे उत्पीड़क के पक्ष में थे। जिला शिकायत अधिकारी व एनजीओ निदेशक खास अभिजात्य तबके से आते हों तो क्या उनके बीच खास तरह का एका बन जाने की संभावना से इनकार किया जा सकता है? यह अवश्य अच्छा कदम है कि कानून सही तरीके से लागू न करने पर संस्था या संगठन के मुखिया को जुर्माना भरना होगा, जो 50,000 रुपये तक हो सकता है और उत्पीड़ित महिला को शिकायत के बदले किसी प्रकार की असुविधा, बदनामी, काम के स्वरूप में बदलाव या अन्य प्रताड़ना नहीं सहनी होगी। पर धारा 14.1 परेशानी पैदा कर सकती है। झूठी या बदले की भावना से प्रेरित होकर शिकायत दर्ज करने अथवा झूठे गवाह पेश करने की स्थिति में सेवा नियमों के तहत शिकायतकर्ता पर कार्रवाई हो सकती है। धारा 10.1 यह भी कहती है कि शिकायत समिति शोषित महिला और आरोपित के बीच, महिला के कहने पर समझौता करवा सकती है। ऐसे में शिकायत पर आगे की कार्रवाई खत्म हो जाएगी।

कानूनविद् कहते हैं कि यह गलत प्रक्रिया है क्योंकि उत्पीड़क की पुरुष या मालिक होने के नाते सामाजिक हैसियत उसे उच्च पायदान पर रखती है और ज्यादातर मामलों में महिला दबाव में ही समझौते के लिए राजी होती है। ऐसा दबाव बनाया जाना आसान भी होता है; धमकी, अपनी या परिवार की बदनामी के खतरे, पदोन्नति या आर्थिक लाभ का लालच आदि का इस्तेमाल कर महिला को समझौते के लिए मजबूर किया जा सकता है। इलाहाबाद में अस्सी के दशक में एनसीजेडसीसी की एक कर्मचारी को मकान और पदोन्नति का लालच देकर पुलिस केस वापस कराने की कोशिश हुई थी। कई बार उत्पीड़क बलात्कार की शिकार महिला के समक्ष विवाह का प्रस्ताव तक रख देता है। ऐसा प्रस्ताव दिल्ली के एक प्राइवेट अस्पताल के कर्मचारी ने बलात्कार की शिकार नर्स के समक्ष रखा था और न्यायालय तक ने इस पर विचार का समय दिया तो महिला आंदोलनकारियों की ओर से तीखा प्रतिरोध हुआ। यह भी सच है कि किन्हीं महिलाओं की ओर से फर्जी केस बनाया जा सकता है पर क्या यह साबित होने की स्थिति में सजा की जगह शिकायत को रद्द कर देना ही काफी नहीं? एक प्रावधान यह भी है कि यौन उत्पीड़न की शिकार महिला की शिकायत संबंधी किसी बात का खुलासा नहीं किया जाएगा, न मीडिया के समक्ष लाया जाएगा। पर सीजीएचएस के एक केस में आरोपी डॉक्टर ने अपनी यूनियन में मामला उठा दिया और इस तरह केस तमाम कर्मचारियों के बीच प्रचारित ही नहीं हुआ बल्कि घटिया किस्म के चरित्र हनन तक पहुंच गया। उप निदेशक ने इस पर कोई कार्रवाई नहीं की और महिला ने भी प्रतिक्रिया में मीडिया से बात करनी शुरू की। विभाग रोकने में अक्षम हो तो कानून क्या करेगा ताकि महिला के दर्द का मखौल न बने, इस पर किसी सजा का प्रावधान नहीं है।

सबसे बड़ा मुद्दा औरतों को जागरूक करने का है कि उनके पास एक कानूनी हथियार है। इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च ने पुणे में छात्राओं के बीच सर्वे किया तो पता चला कि 66.5 प्रतिशत लड़कियों को पता ही नहीं था कि यौन उत्पीड़न के अंतर्गत आता क्या है? यौन उत्पीड़न के तहत किसी महिला पर फब्तियां कसने से लेकर उसके रूप, शरीर व पोशाक संबंधी कमेंट, यौन संबंधों के लिए आमंत्रण और अश्लील चित्र दिखाना या छूना आदि शामिल हैं। प्रख्यात नारीवादी चिंतक नाओमी वुल्फ ने अपनी पुस्तक 'वजाइना' में लिखा है कि महिलाओं के दिमाग में यदि यौन उत्पीड़न का भय पैदा किया जाए तो उसका सीधा असर उसके यौन अंग पर पड़ता है क्योंकि शरीर में कोर्टिसोल की मात्रा बढ़ जाती है। लम्बे समय तक ऐसा होने पर महिला की सेक्सुअल ऐक्टिविटी व अन्य बातों का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। क्या ऐसे माहौल में महिलाएं खुद को सुरक्षित महसूस कर सकती हैं; क्या उनकी कार्यक्षमता प्रभावित नहीं होगी? सोनी सोरी को कारावास में जिस तरह यौन हिंसा का शिकार बनाया जा रहा है, उसकी शिकायत कौन दर्ज करेगा? स्कूल-कॉलेज में लड़कियों को क्या सुकून से पढ़ने और अपनी कुशलता प्रदर्शित करने का मौका मिलेगा यदि वे पुरुष अध्यापकों की गलत हरकतों से डरी-सहमी व तनावग्रस्त रहेंगी? कानून इन स्थितियों से निपटने का एक तरीका है पर हमने देखा है कि दहेज व घरेलू हिंसा कानून के बनने के बाद भी उन्हें सही तरीके से लागू करना दिक्कत भरा रहा है। शायद और जद्दोजहद की जरूरत है, कानून को महिलाओं के पक्ष में इस्तेमाल के लिए।

महिलाओं के प्रति सम्मान व बराबरी का माहौल बनाने के लिए सिर्फ सरकार नहीं बल्कि समाज का प्रगतिशील हलका-शिक्षाविद्, संस्कृतिकर्मी, मीडिया जगत के लोग व न्यायविद् काम करें तभी यौन उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष सफल होगा। पुरुषों का एक हिस्सा जो कानून की धार कुंद करने के लिए उसे 'जेन्डर न्यूट्रल' बनाना चाहता है, दरअसल एक पुरुष सत्तात्मक प्रतिक्रिया के अलावा कुछ नहीं है। अतः श्रीमती कृष्णा तीरथ का कहना कि पुरुषों के साथ यौन उत्पीड़न के मामले का भी अध्ययन करना होगा, गैरजरूरी लगता है। महिलाओं को जब संविधान से बराबरी का हक मिला है तो कार्यस्थल पर उनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार क्यों हो?

- महिलाओं के प्रति सम्मान और बराबरी का माहौल बनाने के लिए सिर्फ सरकार नहीं बल्कि समाज का सम्पूर्ण प्रगतिशील हलका-शिक्षाविद्, संस्कृतिकर्मी, मीडिया जगत के लोग व न्यायविद् काम करें। तभी यौन उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष सफल होगा। पुरुषों का एक हिस्सा जो कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के विरुद्ध कानून की धार को कुंद करने के लिए उसे 'जेन्डर न्यूट्रल' बनाना चाहता है, दरअसल एक पुरुष सत्तात्मक प्रतिक्रिया के अलावा कुछ नहीं है
- महिलाओं को जब संविधान के तहत बराबरी का हक मिला है तो कार्यस्थल पर उनके साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार क्यों हो

आधी आबादी को मिले आगे बढ़ने का मौका

कार्यस्थल पर होने वाले यौन शोषण पर आने वाले बिल की चर्चा से घबराये पुरुषों ने अपना पक्ष रखने के लिए अनाप-शनाप बोलना चालू कर दिया है। इनमें से कइयों की दलील है कि कुछ सयानी टाइप की कर्मचारी अपने स्त्रीत्व का लाभ लेने को भी लालायित रहती हैं

कुछ पुरुष अधिकारी स्वयं को रसिया टाइप का बता कर शेखी बघारते हैं और इसकी आड़ में लैंगिक विभेद वाली टिप्पणियां व कटाक्ष करने को अपनी आदत बता कर बच लेते हैं। खासकर, जो बड़ी मीटिंगें करते हैं, समूह में कर्मचारियों या अधीनस्थों को संबोधित करते हैं, ऐसे सत्ताधारियों को इस तरह की छूट कतई नहीं दी जानी चाहिए

अलका आर्य

'मैं कितनी आजाद हूं? कब घर लौट सकती हूं? मेरी वेश-भूषा कैसी हो? नौकरी कर सकती हूं या नहीं? पति मेरी पसंद का हो या नहीं आदि सवालों का जवाब देना इतना सरल नहीं है। हां, हमारे देश को आजाद हुए 65 साल हो गए हैं और इस बीच महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए कई कानून भी बनाए गए हैं, मगर हम पूरी तरह से खुद को आजाद महसूस नहीं करती हैं। रोजाना की जिंदगी यह तल्ख अहसास कराती रहती है।' ये विचार दिल्ली के एक कॉलेज में पढ़ने वाली कुछेक लड़कियों के हैं। कामकाजी महिलाओं से बात की तो वे बोलीं 'आजादी का मतलब है गुलामी का खत्म होना। अंग्रेजी शासन तो खत्म हो गया, सरकार हमारी है पर सरकार किसी भी पार्टी की हो, उसके एजेंडे में महिलाओं को कितनी प्राथमिकता दी जाती है, यह समझना बहुत ही महत्वपूर्ण है।'

इसी बात को आगे तक ले जाने की जरूरत है। यह तय है कि कोई भी देश महिलाओं के विकास, सशक्तिकरण को नजर अंदाज कर आगे नहीं बढ़ सकता है। ऐसा करने की कीमत उसे देर-सबेर चुकानी ही पड़ती है। अपने देश में बीते दिनों असम राज्य की राजधानी गुवाहटी में रात के 9.30 बजे चलती सड़क पर कुछ आवारा लड़कों ने एक युवती के साथ जो अश्लील व्यवहार किया, उससे सारे देश में महिलाओं की सुरक्षा के मुद्दे पर बड़ी बहस छिड़ गई।

एक युवती ने बताया कि दिल्ली में आवागमन के लिए मेट्रो रेल-सेवा शुरू होने पर उसे लगा था कि वह अब बेहिचक कहीं भी आ-जा सकेगी। घर से दफ्तर और मनपसंद थियेटर, सिनेमा या दोस्तों के साथ घूमने-फिरने के लिए आने-जाने के लिए अब उसे उन सार्वजनिक बसों से छुटकारा मिल जाएगा, जहां अक्सर सफर के दौरान मनचले बदतमीजी करते रहते हैं लेकिन कई महीनों के बाद जब मेट्रो में भी उसे ऐसी ही घटनाओं का सामना करना पड़ा तो अंततः कार खरीदना ही उसे इस समस्या का समाधान लगा।' प्रसंगवश बता दिया जाए कि उस समय मेट्रो में महिला कोच का प्रावधान नहीं किया गया था और मेट्रो में महिलाओं के साथ इस तरह की घटनाओं में वृद्धि के मद्देनजर ही महिला संगठनों ने मेट्रो में महिला कोच आरक्षित करने की मांग की थी। शुक्र है कि संगठनों की मांग पर सुनवाई हुई और अब हर मेट्रो में एक महिला कोच है।

सच यह है कि अपने यहां आजादी के बाद महिलाओं की सुरक्षा को लेकर बुनियादी ढांचे में जो बदलाव होने चाहिए थे, उन पर गौर नहीं किया गया। महिला सशक्तिकरण के नाम पर आज जो कुछ नजर आता है, उसके लिए महिला संगठनों ने काफी संघर्ष किया है। इसमें दो राय नहीं कि आजादी के साथ ही महिलाओं को वोट देने का अधिकार मिल गया और बीते एक दशक में संसदीय चुनाव व विधानसभा चुनावों में महिला मतदाताओं की संख्या का प्रतिशत बढ़ा है और यह उल्लेखनीय है। पर जहां तक लोकसभा व विधानसभा में महिलाओं को तैंतीस

फीसद आरक्षण देने का सवाल है तो वह बिल पिछले पंद्रह सालों से लटका हुआ है। उस पर आम सहमति वाले मुद्दे को उठाकर पीछे सरका दिया जाता है।

बहरहाल, अब वक्त आ गया है कि सरकार अपने मुल्क की आधी आबादी को यह भरोसा दिलाए कि वह उसके लिए जो योजनाएं बनाएगी, वे महज कागजों पर ही नहीं होंगी बल्कि उनके अमल पर भी पर्याप्त निगरानी रखेगी। वह महिलाओं को बराबरी का हक दिलाकर रहेगी। उनके खिलाफ अपराध करने वालों को कड़ी से कड़ी सजा मिलेगी। इंसाफ मिलने में अधिक देरी नहीं होगी और अधिक से अधिक अपराधियों को सजा मिलेगी। यह भी एक सच है कि महिलाओं के खिलाफ अपराध करने वाले अदालत में बहुत कम दोषी साबित होते हैं। इससे अपराध करने वालों को शह मिलती है। देश में उच्च शिक्षा की पढ़ाई करने वाली लड़कियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। आईआईएम बेंगलुरु में 26 प्रतिशत लड़कियां हैं जबकि आईआईएम रांची में 39 प्रतिशत लड़कियां हैं। आईआईएम कोझिकोड में यह आंकड़ा 36 प्रतिशत का है। इंजीनियरिंग में बीते एक दशक में लड़कियों की संख्या 122 प्रतिशत तक बढ़ी है। 68 प्रतिशत संख्या कॉमर्स व मैनेजमेंट में बढ़ी है। लेकिन उच्च पदों पर बहुत ही कम महिलाएं पहुंच पाती हैं।

अपने देश भारत में शीर्ष प्रबंधन के स्तर पर महज तीन प्रतिशत महिलाएं ही पहुंच पा रही हैं। मैकेंजी एंड कंपनी की ताजा रिपोर्ट के अनुसार देश में निचले स्तर पर भी महिलाओं की मौजूदगी दुनिया में सबसे कम 35 फीसद है जबकि चीन में निचले स्तर पर 76 प्रतिशत से अधिक महिलाएं काम कर रही हैं जो दुनिया में सबसे अधिक है। ऐसे में अपनी सरकार को महिलाओं को नौकरी करने के लिए प्रोत्साहित करने वाले सकारात्मक कदम उठाने चाहिए। अपने यहां मातृत्व अवकाश का लाभ देने वाली सरकारी नीति है और इसी तरह और भी कुछ सुविधाएं हैं पर अब कामकाजी महिलाओं की संख्या बढ़ाने पर गंभीर विचार करना होगा क्योंकि वे भी देश की तरक्की और विकास में अमूल्य योगदान दे सकती हैं। शिक्षा हो या खेल का मैदान, लड़कियों ने हर जगह अपना लोहा मनवा दिया है। लंदन ओलंपिक में सायना नेहवाल ने देश के लिए महिला बैडमिंटन एकल मुकाबले में कांस्य पदक जीतकर देश का नाम रोशन किया है और वह ओलंपिक में पदक हासिल करने वाली भारत की पहली बैडमिंटन खिलाड़ी बन गई है। इसी तरह पांच बार की वर्ल्ड चैंपियन मैरी कॉम ने लंदन ओलंपिक में देश के लिए कांस्य पदक जीता।

महिलाएं इस देश की मजबूत रीढ़ हैं और उस रीढ़ को उत्तरोत्तर मजबूत करने की जरूरत है। उन्हें बराबरी के मौके प्रदान करना और सुरक्षा का माहौल देना सरकार का दायित्व है। फिलहाल तो यही कहा जा सकता है कि आजादी के 65 सालों में महिलाओं को जितना हासिल होना चाहिए था, उतना हासिल नहीं हुआ। समाज का कट्टरपंथी वर्ग कभी उन्हें पहनावे के नाम पर धमकाता है तो कभी पुरुष मित्रों से नहीं मिलने के फरमान जारी कर देता है। हाल में झारखंड के रांची व जम्मू-कश्मीर के सोपियां में दीवारों पर पोस्टर चिपकाए गए जिनमें लड़कियों को जींस, उकसाने वाले वस्त्र आदि पहनने पर आपत्ति जताई गई और चेतावनी दी गई कि यह आदेश नहीं मानने वाली लड़कियों/महिलाओं को सबक सिखाया जाएगा। दुर्भाग्यवश ऐसी खबरें देश के हर कोने से पढ़ने-सुनने को मिलती ही रहती हैं।

पति की जोर-जबर्दस्ती भी हो कानूनी दायरे में

यौन उत्पीड़न

भारत डोगरा

हाल के समय में यौन हिंसा के विरुद्ध व्यापक स्तर पर जो माहौल बना और उस निमित्त कड़े कानून बनाने की जो बात उठी, उसमें अनेक महिला संगठनों ने यह मांग भी रखी कि वैवाहिक संबंधों के दायरे में होने वाले यौन उत्पीड़न को भी कानून के दायरे में लाया जाना चाहिए। महिला संगठनों की अनेक मांगों को सरकार ने स्वीकार किया है, लेकिन इस पर बात नहीं की। ऐसे में सरकार के दृष्टिकोण की आलोचना होने पर इतना अवश्य कहा गया कि सरकार इस मामले में पुनर्विचार कर सकती है और उसने विकल्प खुले रखे हैं।

बहरहाल, इस मुद्दे की बहुत समय तक उपेक्षा होने के बावजूद इस सवाल को उठाना जरूरी है कि आखिर वैवाहिक संबंधों में यौन उत्पीड़न रोकने के लिए या इसकी संभावना न्यूनतम करने के लिए कानून की सहायता क्यों न ली जाए? इस बात को तो सभी स्वीकार करेंगे कि यौन संबंधों में किसी भी तरह की जोर-जबरदस्ती हर स्थिति में अनुचित है। यदि यह नैतिक दृष्टि से अनुचित है, मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुचित है व महिला अधिकारों की दृष्टि से अनुचित है तो आगे यह कहना जरूरी हो जाता है कि केवल वैवाहिक रिश्तों का आवरण मिल जाने से ही अनुचित मांग उचित नहीं हो सकती है। अतः इस बारे में कोई संदेह नहीं होना चाहिए कि वैवाहिक संबंधों के दायरे में यदि यौन संबंधों में जोर-जबरदस्ती होती है तो इसे पूरी तरह अनुचित माना जाए। इससे आगे यह जानना आवश्यक है कि वैवाहिक संबंधों के दायरे में यौन संबंधों के मामले में वास्तव में कितनी जोर-जबरदस्ती होती है। देखा जाए तो इस तरह की जोर-जबर्दस्ती काफी व्यापक स्तर पर होती है और कुछ विशेष कारणों से बढ़ती जा रही है। इस मामले में कुछ प्रवृत्तियां पहले से चली आ रही हैं जबकि कुछ हाल के समय में बढ़ी हैं। मूल प्रवृत्ति तो पुरुष सत्तात्मक समाज के कारण है जो आदिकाल से लेकर आज तक हावी है। पुरुष सत्तात्मक प्रवृत्तियों के कारण यौन संबंध स्थापित करना पति का हक समझा जाता है और इसके लिए पत्नी की सहमति प्राप्त करने की भी आवश्यकता महसूस नहीं की जाती है।

दूसरी प्रवृत्ति बाल विवाह के कारण है। परंपरागत समाज में बाल विवाह की प्रथा तो थी

- इस बात को तो सभी स्वीकार करेंगे कि यौन संबंधों में किसी तरह की जोर-जबरदस्ती अनुचित है। यदि यह नैतिक दृष्टि से अनुचित है, मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुचित है व महिला अधिकारों की दृष्टि से अनुचित है तो कहना जरूरी हो जाता है कि केवल वैवाहिक रिश्ते का आवरण मिल जाने से ही अनुचित मांग उचित नहीं हो सकती
- अतः इस बारे में कोई संदेह नहीं होना चाहिए कि यदि वैवाहिक संबंधों के दायरे में यौन संबंधों में जोर-जबर्दस्ती होती है तो इसे पूरी तरह अनुचित माना जाए

पर साथ में कुछ सावधानियां भी बरती जाती थीं कि उचित आयु से पहले यौन संबंध स्थापित न हों। पर इन सावधानियों को सदा नहीं अपनाया जाता। इस कारण कच्ची उम्र में यौन संबंध स्थापित होने की स्थितियां अक्सर स्त्री के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती हैं। हमारे समाज में बेमेल विवाह की समस्या व्यापक स्तर पर मौजूद है जो प्रायः कन्या पक्ष की मजबूरियों से जुड़ी होती है। इस कारण भी वैवाहिक जीवन में यौन संबंधों को लेकर जोर-जबर्दस्ती की संभावना बनी रहती है।

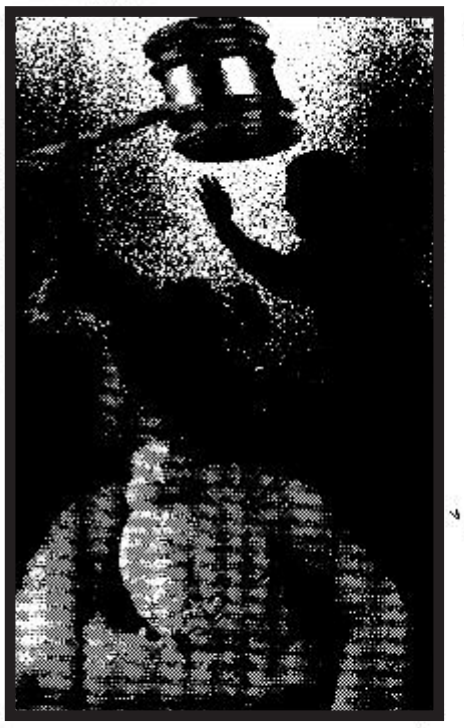

परिवार नियोजन की दृष्टि से या किसी संक्रामक रोग की आशंका के चलते उससे बचने के लिए कई बार पत्नी चाहती है कि पति की ओर विशेषकर कंडोम जैसे गर्भ-निरोधक या कंट्रासैप्टिव का उपयोग हो, जबकि पति को यह स्वीकार्य नहीं होता है। इस कारण भी यौन संबंधों में जोर-जबरदस्ती की स्थिति आ सकती है।

इन सब स्थितियों के अतिरिक्त हाल के वर्षों में वैवाहिक संबंधों में यौन उत्पीड़न बढ़ने का जो नया कारण बहुत तेजी से पनपा है वह है विभिन्न प्रचार माध्यमों द्वारा अश्लील सामग्री का प्रसार। इंटरनेट ने इसमें सबसे नकारात्मक भूमिका निभायी है। वहां यौन संबंधी तमाम विकृतियों की भरमार है। सिनेमा-टीवी व आइटम नंबर से भी नई तरह की सैक्स संबंधी सोच बन रही है। इन सबसे प्रभावित होकर कई बार पति पत्नी से इस तरह के यौन संबंधों की मांग कर बैठता है जो पत्नी को कतई रुचिकर नहीं लगता। ऐसी स्थिति में कभी-कभी अपनी पुरुष प्रधान सोच के आधार पर पति मनमर्जी के यौन संबंधों के लिए जोर-जबरदस्ती करता है। इस तरह की अनचाही मांग के कारण पत्नी यौन संबंधों के प्रति विमुख हो सकती है और भविष्य में जोर जबरदस्ती की संभावना और बढ़ सकती है। ऐसी स्थितियां बहुत कष्टदायक हो सकती हैं। यह प्रवृत्ति किस हद तक जा सकती है, इसकी जानकारी महिला हिंसा के एक अध्ययन के दौरान मिली जिसमें पति ने पहले पत्नी को बुरी तरह मार-पीट कर घायल किया और कुछ दिन बाद घायल स्थिति में ही उसके साथ जबरदस्ती यौन संबंध स्थापित किया। इन स्थितियों को देखते हुए स्वीकार करना होगा कि पति-पत्नी के रिश्तों में होने वाली यौन संबंधी जोर-जबरदस्ती शारीरिक और मानसिक कष्ट का कारण बन सकती है। यही वजह है कि वैवाहिक संबंधों के दायरे में होने वाले यौन उत्पीड़न को भी यौन हिंसा विरोधी कानूनों के दायरे में लाये जाने की पैरवी की जाती रही है।

देखा जाए तो यह नई सोच नहीं है। विश्व के अनेक देशों में पहले से ऐसी कानूनी व्यवस्था मौजूद है। विश्व स्तर पर कानून की स्थिति क्या है, इसके बारे में विधि विशेषज्ञ अरविंद जैन बताते हैं, 'दुनिया के 76 देशों में वैवाहिक बलात्कार दंडनीय अपराध है जबकि भारत सहित पांच देशों में इसको अपराध केवल तब माना जाता है जब पति-पत्नी कानूनी तौर पर एक-दूसरे से अलग रह रहे हों।' वह आगे कहते हैं, '1991 में आर बनाम आर मामले में हाउस ऑफ लार्ड्स की राय के मुताबिक कोई भी पति अपनी पत्नी के साथ बिना सहमति के यौन संबंध बनाने पर अपराधी हो सकता है क्योंकि इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता कि शादी के बाद सभी परिस्थितियों में पत्नी यौन संबंध बनाने के लिए खुद को पेश करेगी। पीपुल्स बनाम लिब्रेटा मामले में न्यूयार्क की अपील कोर्ट ने कहा कि बलात्कार और वैवाहिक जीवन में बलात्कार के बीच अंतर करने का कोई औचित्य नहीं है। कोर्ट ने न्यूयार्क के उस कानून को असंवैधानिक करार दिया, जिसने वैवाहिक बलात्कार को अपराध न मानने की छूट दे रखी थी। नेपाल के सुप्रीम कोर्ट ने घोषित किया कि पत्नी की सहमति के बिना वैवाहिक सेक्स बलात्कार की श्रेणी में आएगा।'

वैश्विक स्तर के इस मूल्यांकन से पता चलता है कि इस संबंध में कानून का झुकाव भी वैवाहिक संबंधों में यौन उत्पीड़न को गैर-कानूनी मानने के पक्ष में है और इस बारे में कानून बनाने से परहेज नहीं होना चाहिए। गौर से विचार करें तो बहुचर्चित वर्मा समिति की रिपोर्ट का झुकाव भी इस ओर दिखता है। संसदीय समिति के दो सदस्यों प्रशांत चटर्जी व डी. राजा ने भी वर्मा समिति की सिफारिशों का समर्थन किया।

यह धारणा अनुचित है कि ऐसा कानून बनने से परिवार टूटेंगे। इस तरह की शिकायतें परिवार से बाहर बहुत कम की जाती हैं, पर कानून बनने व प्रचारित होने से अनुचित जोर-जबरदस्ती के प्रति डर जरूर पैदा हो जाता है।

वैवाहिक संबंधों में यौन उत्पीड़न के विरुद्ध कानून का उद्देश्य भी यही होगा कि इस जोर-जबरदस्ती की प्रवृत्ति को कम से कम किया जाए। इस तरह एक बुराई व अन्याय की संभावना को पहले की अपेक्षा कम किया जा सकता है पर स्थिति को बेहतर करने का एकमात्र उपाय कानून नहीं है। उसके साथ पति-पत्नी के संबंधो को बेहतर करने और उनमें अधिक कोमलता लाने के अन्य प्रयास साथ में होने चाहिए। अंतिम उद्देश्य तो परिवार को बचाना और मजबूत करना ही है। यदि यौन संबंधों में जोर-जबरदस्ती न हो तो इससे वैवाहिक जीवन सुखद होगा और परिवार की खुशहाली बढ़ेगी।

(आलेख में व्यक्त विचार लेखक के निजी हैं)

राष्ट्रीय सहारा 22.3.2013

परिवार व विवाह बचाने का तर्क

नरेश गोस्वामी

लेखक टिप्पणीकार हैं।

संबंधों में दमन और उत्पीड़न की असामान्य घटनाएं अक्सर यह इशारा भी करती हैं कि जिन संस्थाओं को हम प्रश्नों और संदेह से परे मानकर निश्चिंत हो बैठते हैं उनमें सब कुछ सही नहीं होता। अंततः समाज की सारी संस्थाएं दैवीय आदर्शों की रक्षा के लिए नहीं बल्कि मनुष्य के लिए बनाई जाती हैं।

महिलाओं के विरुद्ध यौन अपराध से संबंधित अध्यादेश पर गठित संसदीय समिति ने पिछले दिनों साफ कर दिया कि वैवाहिक संबंध में बलात्कार की घटना को यौन अपराध की श्रेणी में नहीं रखा जाएगा। समिति के अधिकांश सदस्यों का मानना था कि अगर इस प्रस्ताव को स्वीकार किया गया तो यह विवाह की संस्था के लिए विनाशकारी साबित होगा। समिति के सदस्य वेंकैया नायडू के अनुसार ऐसे मामले आमतौर पर परिवार द्वारा निपटा लिए जाते हैं इसलिए इसके लिए अलग से कोई कानून बनाना वांछनीय नहीं होगा। बहुमत की राय में इस बात का हवाला दिया गया कि वैवाहिक संबंधों में क्रूरता और हिंसा के उपबंध पहले से ही हैं, जिनके आधार पर स्त्री अत्याचारी साथी के खिलाफ अदालत में जा सकती है।

गौरतलब है कि मसले पर कई सदस्यों ने अलग राय भी रखी थी। उनका कहना था कि विवाह में यौन संबंधों के प्रति सहमति कोई शाश्वत या स्थायी स्थिति नहीं होती। इसलिए स्त्री पक्ष के पास इस हिंसा से बचने की गुंजाइश होनी चाहिए। पर अंततः उनके तर्कों को आम राय में शामिल नहीं किया गया।

कहना न होगा कि समिति ने इस मामले में व्यक्ति से पहले परिवार और विवाह की संस्थाओं को प्रधानता देकर एक तरह से रूढ़िवादी सोच का साथ दिया है। इस बात पर वितंडा खड़ा करना सरासर बदमजगी ही होगी कि विवाह और परिवार मनुष्य के सबसे अहम भावनात्मक और आर्थिक संबल होते हैं। लेकिन सरकार के सामने मूल मुद्दा यह नहीं था कि इन संस्थाओं की निरंतरता को कैसे बरकरार रखा जाए। सवाल असल में यह था कि जब विवाह और परिवार संबल और सुरक्षा के बजाए यातना व दमन के कारण बनने लगें तो ऐसे में इन संस्थाओं का क्या किया जाए। यह ठीक है कि कुछ नकारात्मक उदाहरणों के आधार पर पूरे समाज के लिए सर्वमान्य सिद्धांत नहीं बनाया जा सकता। लेकिन यह बात भी उतनी ही सटीक है कि संबंधों में दमन और उत्पीड़न की असामान्य घटनाएं अक्सर यह इशारा भी करती हैं कि जिन संस्थाओं को हम प्रश्नों और संदेह से परे मानकर निश्चिंत हो बैठते हैं उनमें सब कुछ सही नहीं होता। अंततः समाज की सारी संस्थाएं दैवीय आदर्शों की रक्षा के लिए नहीं बल्कि मनुष्य के लिए बनाई जाती हैं।

अगर समिति वैवाहिक बलात्कार को इसलिए मान्यता नहीं देना चाहती क्योंकि इससे परिवार और विवाह की संस्थाएं बिखर जाएंगी तो उसे पारंपरिक विवाह की मौजूदा संस्कृति पर भी नजर डालनी चाहिए। उसे यह भी जानना चाहिए कि हमारे समाज में विवाह के अनुष्ठान को चाहे पवित्रता का कैसा ही आभामंडल दिया जाता हो लेकिन उसकी सज-धज, खर्च और आडंबर का संबंधों की ऊष्मा से कोई नाता नहीं होता। अक्सर तो ऐसे संबंध बहुत जल्द आपसी कलह, पारिवारिक तनावों, कानूनी दांवपेंचों, अत्याचार, घुटन और बेगानगी में जा फंसते हैं। इसलिए, पिछले वर्षों में अर्थव्यवस्था ने सामाजिक जीवन को जिस तरह बदला है उसमें विवाह की संस्था अपने पूर्व और परिचित रूप में जिंदा नहीं रह सकती। संचार और तकनीकी के साधनों और आत्मनिर्भरता ने स्त्री को जैसा स्पेस दिया है उसके बाद पारंपरिक विवाह कई बार उसके लिए एक थोपा हुआ फैसला भी हो जाता है। समिति अगर इन संस्थाओं को बचाने पर तुली है तो उसे कम से कम विवाह के मौजूदा स्वरूप को देखने की हिम्मत भी जुटानी चाहिए थी।

गौर करें कि जिस तरह संसदीय समिति के बहुमत ने विवाह को बचाने के लिए वैवाहिक बलात्कार का संज्ञान लेने से मना किया है उसी तरह से हमारे समाज का मुखर बहुमत भी विवाह और परिवार के प्रशस्ति गान में सीधे वैदिक काल में छलांग लगाने का आदी रहा है। उसके आगे जब भी स्त्री की कमतर और कमजोर स्थिति का जिक्र किया जाता है तो वह वेद और उपनिषदों में वर्णित विदुषियों की फेहरिस्त दिखाने लगता है। लेकिन स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व और उसकी पसंद-नापसंद के बारे में वह कभी बात नहीं करता।

जाहिर है कि समिति और सरकार विवाह और परिवार को एक ठहरे हुए फ्रेम में देखना चाहती है। उसके अनुसार अगर परिवार वैवाहिक जीवन में हिंसा और अत्याचार की घटनाओं से खुद निपट सकता है तो यही कहा जाएगा कि उसकी राय और निष्कर्ष मौजूदा परिस्थितियों के आकलन से निर्धारित न होकर जड़ीभूत विचारों और आग्रहों से निकले हैं। उसने शायद इस तरफ ध्यान भी नहीं दिया है कि मौजूदा समय में स्त्री पुरुष के साथ रहने के लिए विवाह ही एकमात्र आधार नहीं रह गया है। पिछले वर्षों में महानगरों में सहजीवन के उदाहरण बढ़ते जा रहे हैं। सहजीवन की अपनी चाहे जितनी जटिलताएं हों लेकिन पारंपरिक विवाह के मुकाबले वह निश्चित ही एक अग्रगामी स्थिति है क्योंकि उसमें साहचर्य का आधार उनका निजी फैसला होता है।

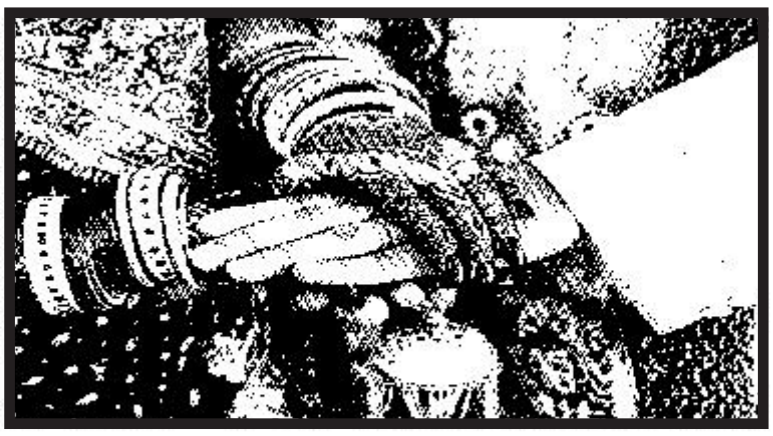

महिला संगठनों और स्त्री मुक्ति के विमर्श में यह दलील लंबे समय से अपनी जगह पर कायम है कि स्त्री का अपनी देह पर अधिकार होना चाहिए। लेकिन परंपरा की दुहाई देने वाले वर्ग को यह विचार पश्चिम से आया प्रदूषण लगता है। हमारा यह नव रूढ़िवादी मध्यवर्ग अमेरिका और यूरोप की भौतिक सुविधाएं तो चाहता है लेकिन उस संस्कृति के मानवीय और प्रगतिशील तत्वों से परहेज करता है। इस तरह वह पश्चिम के कथित खुलेपन को तो अपनी यौन इच्छाओं और फंतासियों के लिए इस्तेमाल करना चाहता है लेकिन उसकी तरह यौन संबंधों की आचार संहिता का सम्मान नहीं करता। आखिर क्या वजह है कि दुनिया के सौ देशों में वैवाहिक बलात्कार को यौन अपराध मान लिया गया है जबकि हमारे यहां नैतिकता के हिमायतियों को घर-परिवार उजड़ने के दुःस्वप्न आने लगे।

यह सही है कि विवाह की विफलता और तलाक आदि के मामलों में कई बार कानूनी प्रावधानों का दुरुपयोग होता है और निर्दोष लोगों को भी झूठे मुकदमों में फंसा दिया जाता है लेकिन यह स्त्री की स्वायत्तता के खिलाफ तर्क नहीं हो सकता। क्योंकि आरोप जायज है या झूठ यह तय करना कानून की मशीनरी का काम है। इसके आधार पर स्त्री की बुनियादी आजादी का प्रश्न खारिज नहीं किया जा सकता। लिहाजा परिवार और विवाह की संस्थाओं को बचाने की कवायद में समिति ने दो अहम सवालों से पलायन किया है कि स्त्री की देह पुरुष का उपनिवेश क्यों बनी रहे और दूसरा यह कि परिवार व विवाह बचाने की जिम्मेदारी उसी के हिस्से में क्यों आए।

यह सही है कि विवाह की विफलता और तलाक आदि के मामलों में कई बार कानूनी प्रावधानों का दुरुपयोग होता है और निर्दोष लोगों को भी झूठे मुकदमों में फंसा दिया जाता है लेकिन यह स्त्री की स्वायत्तता के खिलाफ तर्क नहीं हो सकता।

naresh.goswami@gmail.com

दैनिक भास्कर 6.3.2013

रेप विरोधी कानून में जो नया जुड़ा

केंद्र सरकार ने बजट सत्र का इंतजार किए बिना ही रेप मामले में जस्टिस जेएस वर्मा समिति की सिफारिशों के मद्देनजर एक अध्यादेश को मंजूरी दे दी। अध्यादेश पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होते ही रेप कानून में महत्वपूर्ण बदलाव हो जाएंगे। हां, इस पर छह महीने के भीतर संसद की मुहर लगनी जरूरी होगी-

- रेपिस्ट को मौत की सजा, अगर हादसे की वजह से पीड़ित वेजीटेटिव अवस्था (निष्क्रिय अवस्था या क्रियाहीन अवस्था) में चला जाए। अरुणा शानबाग जैसा मामला इसके तहत आ सकता है। अरुणा शानबाग वह नर्स है जिसका कई वर्ष पहले रेप किया गया था। वह तब से ही वेजीटेटिव अवस्था में है।
- रेप के बाद अगर पीड़ित की मौत हो जाती है तो अभियुक्त के ऊपर रेप और हत्या का मुकदमा चलेगा। इसमें दुर्लभ से दुर्लभतम मामले में सजा-ए-मौत का प्रावधान किया गया है। दिल्ली गैंगरेप के बाद इस तरह के प्रावधान की बहस चली थी।
- नृशंस रेप या गैंगरेप मामले में जिसमें पीड़ित की मौत नहीं हो रेपिस्ट को 20 साल से लेकर उम्रकैद तक की सजा का प्रावधान किया गया है।
- कानून की किताब में अब ' रेप' की जगह ' सेक्सुअल असाल्ट' यानी 'यौन हमला' शब्द का इस्तेमाल होगा और इसकी परिभाषा को और व्यापक बनाया गया है। इसमें लिंगभेद नहीं होगा।
- तेजाब से हमले की शिकार अगर अपनी आत्मरक्षा में हमलावर पर हमला बोलती है और इसमें तेजाब से हमला करने वाले की मौत हो जाती है तो महिला या लड़की को माफी दिए जाने का प्रावधान किया गया है।
- तेजाब हमले का दोषी पाए गए व्यक्ति को पीड़ित महिला या लड़की को 10 लाख रुपए हर्जाना देना तय किया गया है। इसमें दस साल की कैद का भी प्रावधान किया गया है।
- किसी महिला को उसकी अनुमति के बगैर छूना, उसके प्रति उत्तेजनापूर्ण शब्दों का इस्तेमाल, ई-मेल पर निगरानी रखना, उत्तेजनापूर्ण हरकत या इशारा और लोगों की मौजूदगी में उसके प्रति अपमानजनक प्रयास करने वाले को एक से पांच साल तक की कैद की सजा।
- किसी महिला का पीछा करना, उसे निर्वस्त्र करना, उसका ध्यान खींचने के लिए विशेष हरकतें करने पर कम से कम सात साल की सजा होगी।
- 18 वर्ष से कम आयु की पीड़ित को बयान दर्ज कराते समय आरोपी का सामना नहीं करना होगा।
- 18 वर्ष से कम, 65 वर्ष से अधिक आयु वाले और अपंग पीड़ित को थाने आने की जरूरत नहीं होगी।
- बचाव पक्ष का वकील पीड़ित के चरित्र पर न तो सवाल उठा पाएगा और न ही इससे जुड़े सवाल कर पाएगा।
- रेप के मामलों में पुलिस या सरकारी कर्मचारियों के शामिल होने पर गंभीर सजा का प्रावधान।

कुछ गंभीर मामले खारिज

- वैवाहिक दशा में रेप के मामले को अपराध की श्रेणी में नहीं रखा गया। इसमें एक-दूसरे से अलग रहने के दौरान जबरन यौन संबंध स्थापित करना भी शामिल है।
- सुरक्षा बलों द्वारा किए गए रेप मामलों की सुनवाई सामान्य अदालत में करने का प्रस्ताव नहीं माना। रेप मामलों में भी इनके खिलाफ कोर्ट मार्शल की कार्रवाई ही होगी।
- अपनी कमान में रह रहे सुरक्षा बलों द्वारा रेप मामलों को नहीं रोक पाने के लिए वरिष्ठ अधिकारी को जिम्मेदार ठहराने की बात भी कैबिनेट ने नहीं मानी।
- सहमति से यौन संबंध बनाने की आयुसीमा 18 से 16 वर्ष करने की बात भी सरकार ने नहीं मानी।

राष्ट्रीय सहारा 16.3.2013

सिर्फ कानून ही समाधान नहीं

प्रकाश सिंह

लेखक सीमा सुरक्षा बल के पूर्व महानिदेशक हैं

जस्टिस वर्मा ने महिलाओं के विरुद्ध अपराध के रोकने के लिए पुलिस और थानों को कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं। जैसे महिलाओं को थाने में शिकायत करने की सुविधा हो। हर थाने में वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध करवाए जाएं। इसी तरह हर क्षेत्र और जनपद के थानों में फोरेंसिक सपोर्ट सिस्टम होने चाहिए पुलिस को स्वायत्त होना चाहिए। उसकी जांच पर किसी भी प्रकार का राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।

भारत के पूर्व प्रधान न्यायाधीश जेएस वर्मा की अध्यक्षता वाली तीन सदस्यीय समिति की रिपोर्ट एक प्रशंसनीय रिपोर्ट है। थोड़े समय में उन्होंने महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की विस्तृत व्याख्या की है। इसके लिए तीनों सदस्यों (जेएस वर्मा, हिप्र की पूर्व मुख्य न्यायाधीश लीला सेठ और पूर्व सॉलिसिटर जनरल गोपाल सुब्रमण्यम) की तारीफ करनी होगी। इस रिपोर्ट को पढ़ते हुए हमें खासतौर पर यह ध्यान रखना होगा कि देश में महिलाओं की असुरक्षा का जो वातावरण है, उसका मुख्य कारण वर्मा समिति की रिपोर्ट के अनुसार प्रशासकीय विफलता है। उन्होंने विशेष जोर देकर कहा कि इस प्रशासकीय विफलता की वजह से पूरे देश में एक ऐसा माहौल बन गया है, जिसके कारण महिलाएं आज खुद को असुरक्षित महसूस कर रही हैं। रिपोर्ट में उन्होंने महिलाओं के खिलाफ अपराध को नए सिरे से परिभाषित करने की कोशिश की है। महिलाओं का पीछा करना, तेजाब फेंकना, कामुक निगाह से घूरना, उनकी मर्जी के खिलाफ उन्हें स्पर्श करना जैसी गतिविधियों को अपराध के दायरे में लाने की सिफारिश की गई है।

जस्टिस वर्मा की रिपोर्ट में अपराध की शिकार महिलाओं के मेडिकल ऑपरेशन के बारे में भी महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए हैं। उन्होंने कहा है कि यदि कोई महिला किसी तरह की हिंसा की शिकार होती है तो उसे तत्काल मेडिकल सुविधाएं मुहैया करवाई जानी चाहिए ताकि जल्दी से जल्दी पीड़ित महिला का इलाज हो सके। इसके अलावा पुलिस सुधार पर भी जस्टिस वर्मा की रिपोर्ट में एक पूरा अध्याय है। उन्होंने पुलिस सुधार के बारे में सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों का केंद्र और राज्य सरकार दोनों को अनुपालन करने का निर्देश दिया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि जब तक पुलिस व्यवस्था में आमूलचूल तब्दीली नहीं आएगी, तब तक महिलाएं पूरी तरह सुरक्षित नहीं होंगी। जस्टिस वर्मा ने महिलाओं के विरुद्ध अपराध को रोकने के लिए पुलिस और थानों को कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं। जैसे महिलाओं को थाने में शिकायत करने की सुविधा हो। हर थाने में वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध करवाए जाएं। इसी तरह हर क्षेत्र और जनपद के थानों में फोरेंसिक सपोर्ट सिस्टम होने चाहिए। फिर उन्होंने कहा कि पुलिस को स्वायत्त होना चाहिए। पुलिस और उसकी जांच पर किसी भी प्रकार का राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।

रिपोर्ट में एक और अच्छी बात कही गई है जो चुनाव प्रक्रिया में सुधार के लिए जरूरी है। जस्टिस वर्मा ने कहा है कि जनप्रतिनिधि कानून में बदलाव किया जाना चाहिए। और चुनाव प्रक्रिया से अपराधियों को बाहर किया जाना चाहिए। रिपोर्ट में स्पष्ट तौर पर कहा गया है कि चुनाव लड़ने के लिए नामांकन करने वाले उम्मीदवारों के हलफनामे की कैग द्वारा जांच करवाई जानी चाहिए और हाइकोर्ट के रजिस्ट्रार के प्रमाणन के बाद ही नेताओं को चुनाव लड़ने दिया जाना चाहिए। रिपोर्ट में उम्मीदवारों की संपत्ति के ब्योरे की भी जांच कराए जाने की सिफारिश की गई है।

कुल मिलाकर देखा जाए तो जस्टिस वर्मा की रिपोर्ट के कुछ बिंदुओं पर लोग बहस कर सकते हैं। जैसे बलात्कार के बाद जघन्य हत्या पर पापुलर मांग थी कि फांसी का प्रावधान होना चाहिए। लेकिन रिपोर्ट में इसे टाल दिया गया है। रिपोर्ट के इस पहलू को लेकर कुछ लोग नाराज हो सकते हैं। दूसरे कुछ लोग जुवेनाइल एज (18 साल) पर भी नाराजगी जता सकते हैं। क्योंकि कुछ लोगों की मांग थी कि इसे 18 साल से घटाकर 16 साल कर दिया जाए। कुछ लोग कह सकते हैं कि उम्र चाहे जो भी हो अपराधी को उसके अपराध की सजा मिलनी ही चाहिए।

जस्टिस वर्मा की रिपोर्ट के एक और बिंदु पर विवाद संभव है - कमांड रिसपांसिबिलिटी। यदि कोई कनिष्ठ कर्मचारी अपराध करता है तो उसके लिए वरिष्ठों को जिम्मेदार ठहराना तर्कसंगत नहीं है। यदि सीनियर अफसर की जानकारी में जूनियर अफसर किसी महिला के साथ दुर्व्यवहार कर रहा है, तब उसके सीनियर अफसर को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। लेकिन उसके संज्ञान के बिना यदि किसी जूनियर अफसर द्वारा कोई आपराधिक घटना को अंजाम दिया जाता है तो उसके लिए सीनियर अफसर को इस मामले में घसीटना मुझे न्यायसंगत नहीं लगता। इसी तरह, रिपोर्ट में उन पुलिस अधिकारियों के लिए कड़े दंड का प्रावधान करने की सिफारिश की गई है जो शिकायत के बाद भी बलात्कार या यौन उत्पीड़न का मामला दर्ज नहीं करते। दरअसल, थाने में आपराधिक मामलों के पंजीकरण का मामला सरल नहीं है। कई बार राजनीतिक हस्तक्षेप की वजह से मामले दर्ज नहीं हो पाते। वैसे मामले में पुलिस क्या करेगी, जब मायावती मुख्यमंत्री की कुर्सी से यह फरमान जारी करती हैं कि रातोंरात 75 प्रतिशत अपराध कम होने चाहिए।

जहां तक इस बहुप्रतीक्षित रिपोर्ट को कानूनी रूप देने का सवाल है इस पर सरकार को जल्द से जल्द कार्रवाई करनी पड़ेगी। इसे सरकार ठंडे बस्ते में नहीं डाल पाएगी; क्योंकि पिछले दिसंबर की घटना के बाद देशभर में फैले तीव्र जनाक्रोश के बाद सरकार ने इस कमेटी का गठन किया था। इस रिपोर्ट को अभी तक बहुत से लोगों ने पढ़ा नहीं है, अभी इस पर चर्चा होना बाकी है। लोग इसके विभिन्न बिंदुओं पर बहस करेंगे। इसलिए सरकार इस पर कितनी कार्रवाई करती है यह आने वाले समय में ही पता चलेगा। लेकिन सरकार को महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराध से संबंधित कानूनों में संशोधन लाना ही होगा।

दरअसल, महिलाओं के प्रति अपराध को रोकने के लिए आज एक कड़े कानून की जरूरत है लेकिन महिलाओं से संबंधित अपराध पर पुनर्विचार करने की भी जरूरत है। समाज में जो बदलाव हो रहा है, उसमें कुछ सकारात्मक और कुछ नकारात्मक चीजें भी हो रही हैं। हमें इसे फिर से देखने की जरूरत है: अपराध से निबटना एक बात है और अपराध क्यों हो रहे हैं उस पर चिंतन करना दूसरी बात। समाजशास्त्रियों को इस विषय पर सोचना चाहिए। मूल्यों में बदलाव, उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रचार प्रसार, शराब के इस्तेमाल में बढ़ोतरी आदि भी महिलाओं के विरुद्ध अपराध में वृद्धि के कारण हैं। इसी तरह समाज में पाश्चात्य मूल्यों का जो अंधानुकरण हो रहा है, उसमें औरतों को सिर्फ मांस का एक टुकड़ा समझा जा रहा है, इसलिए हमें कानून कड़े करने के साथ साथ ये अपराध क्यों हो रहे हैं, उन्हें भी सामाजिक स्तर पर देखना होगा। मैं, पाश्चात्य संस्कृति के विरुद्ध नहीं हूं लेकिन पाश्चात्य संस्कृति के कुछ मूल्य ऐसे हैं, जिनसे हमारे देश की महिलाओं के विरुद्ध अपराध बढ़े हैं। इसी तरह मीडिया की भूमिका को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

सिर्फ पुलिस व्यवस्था को जिम्मेदार ठहराकर बचा नहीं जा सकता। मीडिया को भी अपने गिरेबान में देखना चाहिए। देश में जो सामाजिक बदलाव हो रहे हैं, उनमें महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए हमें महिलाओं की सुरक्षा के बारे में समग्रता से सोचना पड़ेगा।

दैनिक भास्कर 25.1.2013

उचित प्रावधानों की अनुचित आलोचना

महिला सुरक्षा

कमलेश जैन

कई महिला संगठनों और महिला व बाल विकास मंत्री कृष्णा तीरथ की असहमति के बावजूद बृहस्पतिवार को कैबिनेट ने लड़कियों के लिए शारीरिक संबंधों वाले प्रावधान में सहमति की उम्र 18 वर्ष से घटाकर 16 वर्ष करने का निर्णय लिया है। इसके साथ संशोधित क्रिमिनल लॉ (एमेंडमेंट) बिल-2013 अब संसद के सामने होगा। इस विषय पर सारे देश में बहस जोरों पर है। खासकर इस बात पर कि प्रोटेक्शन फ्राम सेक्सुअल ऑफिंसेज एक्ट-2012 (अब से पोक्सो) में किशोर लड़कियों की यौन सहमति की उम्र को 18 वर्ष से घटाकर भारतीय दंड संहिता की धारा 375 (बलात्कार) में 16 वर्ष कर दिया गया है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 375 (6) में लड़कियों की यौन सहमति की उम्र सदा से ही 16 वर्ष रही है। वहां कोई बदलाव नहीं है। पोक्सो एक्ट में अवश्य सहमति की उम्र 18 वर्ष रही, जिसे अब 16 वर्ष मान लिया गया है। कहा जा रहा है कि दोनों कानूनों में यह फर्क क्यों? यहां समझना होगा कि 'पोक्सो' का उद्देश्य बच्चों को यौन आघात से सुरक्षित करना है। कोई घर में या बाहर उनके साथ छेड़छाड़ करता है, उन्हें यौनिक रूप से तंग करता है, जो बच्चे अकेले हैं और बड़ों के द्वारा प्रताड़ित हैं- उन्हें हर तरह की सुरक्षा देना है, विशेषकर शारीरिक यौन शोषण से। जबकि भारतीय दंड संहिता एक विशुद्ध अपराध कानून है, जहां धारा 375 में बलात्कार की ही बात की जाती है और उससे जनित अपराध तथा सजा की व्याख्या होती है। दोनों कानूनों का उद्देश्य अलग है, पर जहां तक स्वेच्छा से यौन संबंध बनाने तथा ऐसे संबंधों की सहमति देने की बात है तो वहां किशोरों को इस नैसर्गिक आकर्षण से वैसे ही नहीं रोका जा सकता है जैसे उन्हें खाना खाने या पानी पीने। यह इच्छा उम्र तथा समय के साथ स्वतः जागृत होती है- किसी शिक्षा को प्रदान करने या कानून के या समाज के रोक लगाने से नहीं। कुछ लोगों को उस उम्र में यौन संबंध सहमति से बनाने में रोका नहीं जा सकता।

आज के दौर में बच्चे खान-पान, जागरूकता, इंटरनेट, सिनेमा आदि की वजह से पहले की अपेक्षा जल्दी परिपक्व हो रहे हैं। 16 वर्ष की उम्र ऐसी ही उम्र है जिसमें किशोर वर्ष में ही परिपक्व होंगे और भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अंतर्गत आए बच्चे 16 वर्ष की उम्र में परिपक्व होंगे। दोनों ही जगह बच्चों का शारीरिक, मानसिक तथा यौनिक विकास एक-सा होगा।

कहा यह भी जा रहा है कि शहरों की अपेक्षा गांव के बच्चे 16 वर्ष में कम परिपक्व होंगे। यह आज की परिस्थिति में एक गलत

- महिलाओं के साथ बलात्कार और अन्य अपराधों के लिए कड़े दंड का प्रावधान करने वाले विधेयक को कैबिनेट की मंजूरी प्राप्त हो गई है। विधेयक में तेजाब से हमला, पीछा करना, घूरना और छिपकर ताकझांक करने को आपराधिक कृत्य माना गया है, जिसमें कड़ी सजाओं का प्रावधान है
- उद्देश्य केवल एक है। वह यह कि स्त्री कोई खिलौना नहीं है जिसे पुरुष जब चाहे, जहां चाहे खेले और रौंद दे। वह भी एक इंसान है। उसके सारे अधिकार-स्वाभिमान, अपने शरीर पर अपना संपूर्ण अधिकार- वैसे ही है, जैसे किसी पुरुष के हैं

बिना किसी अपराध भावना के करीब आ जाते हैं। ऐसे में 16 वर्ष की लड़की की सहमति से बनाए गए यौन संबंध में लड़की को छोड़ दिया जाए और लड़के को जेल भेजा जाए तो यह गलत होगा। हां, जहां तक जोर-जबरदस्ती की बात है तो वहां तो किसी भी उम्र की महिला के साथ किया गया कृत्य अपराध ही है। अतः इन दोनों कानूनों में आपसी सहमति से संबंध की उम्र 16 वर्ष सही है। ऐसा तो नहीं कहा जा सकता है कि 'पोक्सो' के तहत आए बच्चे 18 आकलन होगा। कारण, गांव में भी खान-पान, अनेक बच्चों का कच्ची उम्र में विवाह (बाल विवाह भी), टीवी और फिल्मों का प्रसार, समय व्यतीत करने की समस्या जैसी स्थितियां किशोरों को जल्द ही परिपक्व बना देती हैं। इस रूप में वे भी शहर के किशोरों की तरह यौन संबंध बनाने के लिए लालायित हो सकते हैं। ऐसे में दोनों जगहों पर कानून में उम्र का एक होना ठीक ही है।

एक बहस यह भी हो रही है कि शादी, ड्राइविंग, मतदान, शराब-सिगरेट पीने आदि की उम्र जब 18 वर्ष या इससे अधिक है तो सहमति से यौन संबंध बनाने की उम्र 16 वर्ष क्यों? ऐसी तुलना करना गलत होगा। शादी करने, शराब-सिगरेट पीने या वोट देने की उम्र 18 वर्ष तय करने या इसे 19-20-21 तय कर देने से कोई फर्क नहीं पड़ता। कोई चाहे तो अपने आपको इतनी उम्र तक इन कार्यों से अपने को रोके रख सकता है। यहां किसी काम को करना, किसी सुविधा को प्राप्त करना या न करना अपने हाथ में है, पर शारीरिक यौन परिपक्वता को रोक पाना अपने वश की बात नहीं है। यहां परिपक्वता आते ही ऐसी भूल होना स्वाभाविक है और इस भूल को अपराध बना देना ठीक नहीं है। जोर-जबरदस्ती की बात अलग है। कहा जा रहा है कि पोक्सो 2012 में ही बना तो इतनी जल्दी क्यों बदला जा रहा है। वास्तव में 2012 के एक्ट में ही खामियां थीं और उन्हें जितनी जल्दी सुधार लिया जाए, उतना अच्छा है। इसी तरह जो लोग यह कह रहे हैं कि शादी 18 में, तो 16 से 18 के बीच यौन संबंध को कानूनी स्वीकृति क्यों? यहां स्वीकृति किसी को नहीं है, फिर विवाह करना बहुत सारी जिम्मेदारियों से भरी बात है। जिसके लिए 16 वर्ष की उम्र सही नहीं होगी, पर सहमति के लिए 16 वर्ष की उम्र भूल की उम्र तो हो सकती है पर अपराध की कतई नहीं।

पिछले डेढ़ साल से मानव संसाधन मंत्रालय तथा गृह मंत्रालय में यही बहस चलती रही है कि क्यों नहीं हर जगह बच्चों की उम्र 18 वर्ष ही रखी जाए, पर यह सही नहीं है। मानव संसाधन विभाग की स्टैंडिंग कमेटी यह भी कह रही है कि पोक्सो से सहमति की उम्र के प्रावधान को बाहर ही कर दिया जाए। कारण यह यूएनसीआरसी 1989/1992 (यूनाइटेड नेशंस चाइल्ड राइट्स कंवेंशन) तथा जेजे (जुवेनाइल जस्टिस) एक्ट 2000/2006 के खिलाफ होगा, जहां किशोर की उम्र 18 वर्ष है। यहां यह कहना आवश्यक होगा कि यूएनसीआरसी 1989 काफी पुराना है और पिछले 24 वर्षों में हर देश में बच्चों के मानसिक, शारीरिक, यौनिक स्वास्थ्य में काफी बड़ा बदलाव आया है जिसके तहत बहुत से देशों में 16 से 18 वर्ष की उम्र में जघन्य अपराधों की संख्या में काफी बढ़ोतरी हुई है; अतः जेजे एक्ट में भी किशोर की उम्र भारत में 16 वर्ष ही होनी चाहिए, जैसे कि कई राष्ट्रों में की गई है। जेजे एक्ट में एक किशोर अपराधी की उम्र 22 अगस्त, 2006 से (एक्ट 33 ऑफ 2006 द्वारा) ही 16 वर्ष से 18 वर्ष कर दी गई, जो एक बड़ी भूल थी। यह बढ़ोतरी उस समय की गई जब बच्चे पहले से ज्यादा जल्दी युवावस्था प्राप्त करने लगे थे।

बिल में बलात्कार शब्द वापस लाया जा रहा है। बलात्कार, स्टाकिंग (यौन हमला करने की नीयत से पीछा करना, जो लड़की के मन में अपने शरीर पर आक्रमण का भय पैदा कर दे), वोयेरिज्म (सार्वजनिक जगहों पर, बाथरूम, माल्स चेंजिंग रूम आदि में ताक झांक, वीडियो और कहीं सीसीटीवी कैमरा या मोबाइल से तस्वीर खींचना- जिसका उद्देश्य यौन कुचेष्टा या परेशान करना हो), या शारीरिक छेड़छाड़ या वैसी यौनिक कुचेष्टा जो अपमानित और परेशान करने वाली हो, को यौन अपराध माना गया है तथा इसके लिए कड़ी सजा का प्रावधान है।

महिलाओं के साथ बलात्कार और अन्य अपराधों के लिए कड़े दंड का प्रावधान करने वाले विधेयक को कैबिनेट की मंजूरी प्राप्त हो गई है। विधेयक में तेजाब से हमला, पीछा करना, घूरना और छिपकर ताक झांक करने को आपराधिक कृत्य माना गया है, जिसमें कड़ी सजाओं का प्रावधान है। कानूनों में इतने सारे बदलावों का उद्देश्य केवल एक है। वह यह कि स्त्री कोई खिलौना नहीं है जिसे पुरुष जब चाहे, जहां चाहे खेले और रौंद दे। वह भी एक इंसान है। उसके सारे अधिकार-स्वाभिमान, अपने शरीर पर अपना संपूर्ण अधिकार- वैसे ही है जैसे एक पुरुष का है। संविधान में स्त्री-पुरुष बराबर हैं। अब कोई पुरुष बिना स्त्री की इच्छा के उसे छू नहीं सकता है, उससे अभद्र बातें नहीं कर सकता है और उसके शरीर पर किसी प्रकार का प्रहार नहीं कर सकता। यह एक अपराध है, जिसे करने पर कड़ी सजा का प्रावधान है।

(लेखिका सुप्रीम कोर्ट में वरिष्ठ अधिवक्ता हैं। लेख में व्यक्त विचार उनके निजी हैं)

राष्ट्रीय सहारा 16.3.2013

देशभर में दुष्कर्म रोधी कानून लागू

आपराधिक कानून (संशोधन) विधेयक-2013 को राष्ट्रपति ने दी मंजूरी

अमर उजाला ब्यूरो

- दुष्कर्मी को आजीवन कारावास जो 20 साल से कम नहीं होगा
- तेजाबी हमला करने वाले दोषियों को दस साल की सजा

नई दिल्ली। दिल्ली सामूहिक दुष्कर्म की घटना के खिलाफ देशभर में हुए उग्र विरोध प्रदर्शन आखिरकार रंग लाए। उम्रकैद और मौत की सजा जैसे कड़े प्रावधानों वाला दुष्कर्म रोधी कानून बुधवार से पूरे देश में लागू हो गया है। राष्ट्रपति ने मंगलवार को इस कानून को मंजूरी दी। इसमें दुष्कर्म के अलावा तेजाबी हमले, पीछा करने और घूरने पर कड़ी सजा का प्रावधान किया गया है। एक सरकारी विज्ञप्ति के मुताबिक, यह कानून आपराधिक कानून (संशोधन) विधेयक-2013 के नाम से जाना जाएगा।

उल्लेखनीय है कि दिल्ली सामूहिक दुष्कर्म की घटना के खिलाफ उमड़े जनाक्रोश में ऐसे अपराधों को रोकने के लिए देशभर से कड़े कानून बनाने की मांग उठी थी। इस कानून को लोकसभा ने तमाम संशोधनों के साथ 19 मार्च को, जबकि राज्यसभा ने 21 मार्च को पारित किया था। इसके लिए तीन फरवरी को अध्यादेश जारी किए गए थे। इस कानून के तहत दुष्कर्म जैसे अपराधों में दोषी को सश्रम उम्रकैद का प्रावधान किया गया है, जो किसी भी दशा में 20 साल से कम नहीं होगी। यही नहीं इस तरह के अपराधों के लिए दोबारा दोषी पाए गए अपराधी को फांसी की सजा का प्रावधान भी है। महिलाओं का पीछा करने, ताक-झांक करने व घूरने को भी पहली बार परिभाषित किया गया है। ऐसे मामलों में पहली बार सिर्फ सख्त चेतावनी देकर छोड़ने के बाद दोबारा इस तरह की हरकत करने पर गैर जमानती अपराध माना जाएगा। वहीं, महिलाओं पर तेजाब से हमला करने वालों को 10 साल की कैद की सजा का प्रावधान है। कानून में सहमति से सेक्स करने की उम्र 18 साल ही रखी है। देश के सभी अस्पतालों को इस कानून के दायरे में लाया गया है। इसमें कहा गया है कि अस्पतालों को दुष्कर्म की शिकार और तेजाबी हमले की पीड़िता को निशुल्क इलाज करना होगा। इसमें लापरवाही बरतने वाले अस्पतालों के लिए दंड का प्रावधान किया गया है। अगर दुष्कर्म पीड़िता स्थायी और अस्थायी रूप से मानसिक और शारीरिक तौर पर अक्षम है तो दुभाषिए या फिर विशेष शिक्षक की मदद से मजिस्ट्रेट की मौजूदगी में उसके बयान को रिकार्ड किया जाएगा। कार्यवाही की वीडियोग्राफी की जाएगी। कानून बनाने के लिए इसके लिए भारतीय दंड संहिता, अपराध प्रक्रिया संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम और यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा अधिनियम की कई धाराओं में संशोधन किए गए।

अमर उजाला 4.4.2013

आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संशोधन)

प्रताड़ित करने पर सख्त सजा

■ कमलेश जैन
(वरिष्ठ अधिवक्ता, सुप्रीम कोर्ट)

महिलाओं को प्रताड़ित करने पर मिलने वाली सजा में जो संशोधन हुए हैं, वे क्या हैं?

-एक पाठिका

आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा-154 में संशोधन, 2013- यदि बलात्कार, तेजाब से जलाने, पीछा करने, अश्लील फोटो खींचने आदि जिन भारतीय दंड संहिता की धाराओं में 2013 में संशोधन हुआ है, की एफआईआर दर्ज करवाने यदि महिला जाती है तो उसका बयान महिला पुलिस अधिकारी या कोई महिला अधिकारी ही लेगी।

यदि पीड़िता, जिसके खिलाफ उपरोक्त अपराध किया गया है या ऐसा प्रयास किया गया है, वह खुद स्थायी या अस्थायी तौर पर शारीरिक तथा मानसिक रूप से अपंग है तो ऐसी पीड़िता का बयान या उसके बारे में किसी के द्वारा पीड़िता के घर या उसकी सुविधानुसार जगह पर पुलिस द्वारा एफआईआर दर्ज की जाएगी। यह बयान किसी 'इंटरप्रेटर' या 'स्पेशल एडुकेटर'- भाषा समझने वाले या खास विधा में पारंगत व्यक्ति- बधिर की भाषा- इशारा समझने वाले के सामने होगा।

ऐसे बयान की रिकॉर्डिंग वीडियोग्राफी होगी।

यह बयान न्यायिक अधिकारी के सामने होगा।

धारा-160 में संशोधन किया गया है- 15 वर्ष से कम उम्र की लड़की या 65 वर्ष से ज्यादा की महिला या स्त्री मानसिक या शारीरिक रूप से अपंग स्त्री जोड़ा गया है। पहले इस धारा में मात्र 15 वर्ष से कम उम्र की स्त्री या स्त्री ही था।

धारा 161- में संशोधन के अनुसार, अब उपरोक्त अपराधों के खिलाफ पीड़िता या उसके सहायकों का बयान महिला पुलिस अधिकारी या कोई महिला अधिकारी के समक्ष होगा।

धारा-164- के अनुसार, उपरोक्त बयान न्यायिक अधिकारी के सामने होंगे जैसे ही ऐसी घटनाओं की खबर पुलिस को प्राप्त होती है। ऐसे वीडियोग्राफ्ड बयान शारीरिक, मानसिक रूप से अपंग पीड़ित के बयान अदालत में दोबारा एक्जामिनेशन-इन चीफ (पीड़िता या गवाहों के अदालत में ट्रायल के दौरान लिए गए पहले बयान) में नहीं पूछे जाएंगे यानी इन वीडियोग्राफ्ड बयानों पर सीधे क्रास एग्जामिनेशन हो सकेगी।

धारा-197- तेजाब या ज्वलनशील पदार्थ से जलाने वाले, अश्लील छेड़छाड़ करने वाले, स्टॉकिंग या वोयेरिज्म करने वाले, किसी भी प्रकार का बलात्कार करने वाले अपराधी यदि पब्लिक सर्वेंट या 'जनसेवक हैं- किसी सरकारी पद पर हैं तो उन्हें इन अपराधों में प्रोसिक्यूट करने वालों को सरकार की अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं है।

धारा-273- यौन प्रताड़ना वाले मुकदमों में यह ध्यान रखा जाएगा कि पीड़िता को कभी भी अभियुक्त के सामने रखकर बयान नहीं लिया जाएगा।

धारा-309- ऐसे मुकदमों की ट्रायल रोज-रोज की जाएगी। वकीलों को मुकदमे में समय नहीं दिया जाएगा जब तक कि यह नितांत जरूरी न हो।

उपरोक्त संशोधनों के अलावा, भारतीय साक्ष्य अधिनियम में भी निम्नलिखित जरूरी संशोधन किए गए हैं।

धारा-53 ए के अनुसार, यौन प्रताड़ना, यौन हिंसा, बलात्कार आदि के सभी मुकदमों में अब पीड़िता से उसके पिछले चरित्र, यौन अनुभव आदि के बारे में कोई सवाल नहीं किए जा सकेंगे, न तो पुलिस द्वारा और न ही अदालत में वकीलों या न्यायिक अधिकारियों द्वारा।

धारा-114 ए के अनुसार, बलात्कार के मामलों में यदि पीड़िता कहती है कि उसने अभियुक्त को अपने साथ शारीरिक संबंध बनाने की सहमति नहीं दी थी तो यह मान लिया जाएगा कि उसकी सहमति किसी भी तरह के यौन संबंध के लिए नहीं थी।

धारा-119 के अनुसार, यदि गवाह अपनी भाषा में अदालत में अपनी बात नहीं रख सकता है- गूंगा है तो वह इशारे से, लिख कर अपनी बात अदालत के सामने रख सकता है- खुली अदालत में यही उसका मौखिक बयान समझा जाएगा। इस बयान की वीडियोग्राफी होगी और गवाह की सुविधा के लिए एक इंटरप्रेटर भी मौजूद होगा। इसी तरह प्रोटेक्शन ऑफ चिल्ड्रेन फ्रॉम सेक्सुअल ऑफेन्सेज एक्ट, 2012 में संशोधन किया गया है कि-

धारा-42- जहां उपरोक्त सारे यौन अपराध स्टॉकिंग, अश्लील छेड़छाड़, वायेरिज्म, बलात्कार आदि बच्चों के साथ किये गये हैं तो वि प्रो ऑ सी आ एक्ट 2012 या आईपीसी में से, जिसमें भी ज्यादा सजा का प्रावधान है, वही सजा अभियुक्त को मिलेगी।

चलते-चलते

इंदौर की जिला अदालत ने 17 मई 2013 को सोहन लाल चौहान को अपनी पत्नी के गुप्तांग में ताला लगाकर रखने के आरोप में 10 वर्ष सश्रम कारावास की सजा दी है। यह अपराधी अपनी पत्नी से बच्चों को कभी मिलने नहीं देता था। हालांकि गवाह 'दुश्मन' करार दिये गये थे पर डॉक्टर की गवाही ने पीड़िता के अभियोग को सच्चा पाया गया। जब पीड़िता ने इस प्रताड़ना से दुखी होकर जहर खा लिया था शरीर से जहर निकालने के लिए जब डॉक्टर ने चिकित्सा की तो इस रहस्य का पता चला। यह घटना चार साल पुरानी थी। पति ने सर्जरी करवा कर पत्नी पर डोमेस्टिक लॉक लगवाया था। यह घटना संवेदनाओं को सुन्न कर देने वाली है। इस अमानवीय एवं क्रूर कृत्य को देख डॉक्टर, अदालत सबके होश उड़ गये।

राष्ट्रीय सहारा 19.5.2013

कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न रोकथाम विधेयक कानून बना

नई दिल्ली, 25 अप्रैल (भाषा)। राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न रोकथाम विधेयक को अपनी मंजूरी दे दी है। इसके बाद यह विधेयक कानून बन गया है। घर में काम करने वाली महिलाओं को भी इसके दायरे में लाया गया है। इस कानून के तहत इस तरह की शिकायतों को संस्थान की समिति 90 दिन में निपटाएगी। ऐसा नहीं होने पर जुर्माना लगाया जाएगा।

यह विधेयक इस साल फरवरी में संसद में पास हुआ था। इस नए कानून के दायरे में घरेलू नौकरानी और खेत में काम करने वाली श्रमिकों को भी लाया गया है। इस कानून के प्रावधानों का उल्लंघन करने पर 50 हजार रुपए तक का जुर्माना लगाया जा सकता है। इसमें झूठे या द्वेषपूर्ण आरोपों से सुरक्षा के भी प्रावधान हैं।

जनसत्ता 2.5.2013

रेप मामले में उंगली परीक्षण निजता का हनन

नई दिल्ली (एसएनबी)। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि बलात्कार की शिकार युवती का उंगली परीक्षण उसकी निजता पर सीधा हमला है। वैज्ञानिक युग में इस तरह के परीक्षण से जल्द से जल्द छुटकारा मिलना चाहिए। टेस्ट की सकारात्मक रिपोर्ट का यह मतलब नहीं है कि यौन संबंध युवती की सहमति से बनाए गए।

जस्टिस बीएस चौहान की अध्यक्षता वाली बेंच ने सामूहिक बलात्कार के मुजरिम की याचिका पर निर्णय देते हुए द्विउंगली परीक्षण की विश्वसनीयता और उपयुक्तता पर सवाल उठाए। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि जांच एजेंसियों को समझना चाहिए कि ट्रायल उस महिला का नहीं चल रहा जो बलात्कार की शिकार हुई बल्कि अभियुक्त के खिलाफ आरोप साबित करने के लिए मुकदमे को अंजाम दिया जा रहा है। उसने सवाल किया आखिर उंगली परीक्षण से यह कैसे साबित हो सकता है कि युवती या महिला से बलात्कार हुआ या नहीं। इस परीक्षण का बचाव पक्ष अपनी तरह से व्याख्या करते हैं और सकारात्मक रिपोर्ट आने पर महिला के चरित्र पर लांछन लगाया जाता है। बेंच ने सुप्रीम कोर्ट के कई फैसलों का हवाला देते हुए कहा कि महिला भले ही चरित्रवान न हो

■ **सुप्रीम कोर्ट ने पूछा, उंगली परीक्षण से यह कैसे साबित हो सकता है कि युवती या महिला से रेप हआ या नहीं**

लेकिन इससे किसी को भी उससे अपनी हवस मिटाने का लाइसेंस नहीं मिल जाता। रेप में महिला के चरित्र पर संदेह करना निरर्थक है।

हरियाणा के जिंद जिले में छठी कक्षा की छात्रा से बलात्कार के मुजरिम राजेश की याचिका को खारिज करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि 13 साल नौ माह की छोटी सी उम्र में दरिंदों की हवस का शिकार बनी बालिका के चरित्र पर लांछन लगाकर अभियुक्त को बचाने की कोशिश को स्वीकार नहीं किया जा सकता। नाबालिक लड़की से बलात्कार के मामलों में सहमति का सवाल ही नहीं उठता। अगर नाबालिग लड़की ने यौन संबंध के लिए सहमति दी भी है तो भी उसकी हामी का कोई मतलब नहीं है। उसकी सहमति से बनाए गए शारीरिक संबंध कानून की नजर में बलात्कार है।

सुप्रीम कोर्ट ने अपने लगभग एक दर्जन फैसलों का हवाला देते हुए कहा कि पीड़िता के चिकित्सकीय परीक्षण का पैमाना तय करने की जरूरत है। संयुक्त राष्ट्र यौन उत्पीड़न का शिकार महिलाओं की गरिमा और उनके मानवाधिकार को लेकर प्रस्ताव पारित कर चुका है। पीड़िता पर किए जाने वाले परीक्षण के लिए उसकी सहमति आवश्यक है।

राष्ट्रीय सहारा 19.5.2013

नामः ----------

कामः ----------

धामः ----------

फोन/ई–मेलः ----------

नोटसः ----------

नोटसः

नोटसः ---

नोटसः

नोटसः

नोटसः

नोटसः

नोटसः

बी–114, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली 110017
फोनः 011 26691219, 26691220
हेल्पलाइनः 011 26692700 / 8800996640 (सोम से शुक्र प्रातः 9.30 से सांयः 5.30)
jagori@jagori.org, www.jagori.org